धरानन्द शास्त्री

श्रीभट्टकेदारविरचितम्

वृत्तरत्नाकरम्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वृत्तरत्नाकरम्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीभट्टकेदारविरचितम्

वृत्तरत्नाकरम्

गढ़वालमण्डलान्तर्गतश्रीनगरोपवर्त्तिखोलाग्रामवास्तव्येन
श्रीमद्दैवज्ञरत्न-पण्डित-जीवानन्दशर्मतनुजनुषा
घिल्डियालोपाह्वेन व्याकरणसाहित्याचार्येण
श्रीधरानन्दशास्त्रिणा प्रणीतया
प्राज्ञतोषिणीव्याख्यया हिन्दी-रूपान्तरेण
टिप्पण्या च समलंकृतम्

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई, कलकत्ता, बंगलौर,
वाराणसी, पुणे, पटना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तृतीय संस्करण : १९७२
पुनर्मुद्रण : दिल्ली, १९८२, १९८८, १९९३, १९९९

© मोतीलाल बनारसीदास

मोतीलाल बनारसीदास
४१ यू०ए०, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली ११० ००७
८ महालक्ष्मी चैम्बर, वार्डेन रोड, मुम्बई ४०० ०२६
१२० रायपेट्टा हाई रोड, मैलापुर, चेन्नई ६०० ००४
सनाज प्लाज़ा, १३०२, बाजीराव रोड, पुणे ४११ ००२
२३६ "श्री रंगा", नाइंथ मेन III ब्लाक, जयनगर, बंगलौर ५६० ०११
८ केमेक स्ट्रीट, कलकत्ता ७०० ०१७
अशोक राजपथ, पटना ८०० ००४
चौक, वाराणसी २२१ ००१

मूल्य : रु० ५५

नरेन्द्रप्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, दिल्ली ११० ००७
द्वारा प्रकाशित तथा जैनेन्द्रप्रकाश जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस,
ए-४५, नारायणा, फेज-१, नई दिल्ली ११० ०२८ द्वारा मुद्रित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूमिका

वेद निःश्रेयस का मूल है और छन्दःशास्त्र उसके अङ्गों में चरण[1]स्थानीय है। छन्दशास्त्र के विना वेद पङ्गु है। जिस प्रकार पैरों से रहित मनुष्य चल नहीं सकता, उसी प्रकार छन्दों के ज्ञान के विना वेद भी नहीं चल सकता, उसके उच्चारण की गति तथा लय ठीक नहीं चल सकते। अङ्ग से रहित अङ्गी की सत्ता किस काम की ?

लौकिक साहित्य में भी छन्दों का प्रयोग हुआ है। उसके आस्वाद के लिये भी आवश्यक है कि छन्दों का ज्ञान हो। इस लिये छन्दशास्त्र का ज्ञान साहित्यानुशीलनशील व्यक्ति के लिये अनिवार्य है।

छन्दशास्त्र के आदि आचार्यके रूप में आजकल पिङ्गल मुनि प्रसिद्ध हैं। यद्यपि पिङ्गल सूत्रों में अन्य कई प्राचीन[2] छन्दशास्त्रकारों के नामों का उल्लेख मिलता हैं। तो भी 'यशः पुण्यैरवाप्यते' के अनुसार पिङ्गलमुनि ही इस शास्त्र के जन्मदाता कहे जाते हैं। पिङ्गल मुनि का छन्दशास्त्र पर इतना अधिकार हो गया है कि पिङ्गल और छन्दशास्त्र पर्यायवाची शब्द बन गयेहैं। 'पिङ्गल पढ़ते हैं' का तात्पर्य 'छन्द पढ़ते हैं' है। पिङ्गल का अर्थ सांप भी

---

१ 'छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ कथ्यते।
ज्योतिषामयनं नेत्रं निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते॥
शिक्षा घ्राणन्तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात्साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥' इति

२ 'स्कन्धोग्रीवी क्रौष्टुकेः' पि. ३।२६। 'उरोबृहती यास्कस्य' ३।३०। 'सतोबृहती ताण्डिनः ३।३६'। 'सर्वत्र सैतवस्य ५।१८'। 'उद्धर्षिणी सैतवस्य ३।१०'। 'सिंहोन्नता काश्यपस्य ७।९'। 'अन्यत्र रातमाण्डव्याभ्याम् ७।३५' इत्यादि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होता है। अतएव ग्रन्थकारों ने 'नागराज'[1] आदि नामों से भी इनका बहुधा उल्लेख किया है।

पिङ्गलमुनि के विषय में प्रसिद्ध है कि ये शेषनाग के अवतार थे। महाभाष्यकार पतञ्जलि के विषय में भी ऐसी ही प्रसिद्धि है। कई विद्वानों का विचार है कि महाभाष्यकार पतञ्जलि ही पिङ्गल हैं। प्राचीन सूत्रप्रथा के अनुसार पिङ्गल मुनि ने छन्दशास्त्र को सूत्रों में लिखा है। सूत्रों में लिखा होना इसकी प्राचीनता का सूचक है। यह सूत्रकाल की रचना है। इसका नाम 'पिङ्गलसूत्र' प्रचलित है। यह आठ अध्यायों में समाप्त हुआ है। इसमें वैदिक छन्दों का भी सविस्तार निरूपण है और गणित का भी वर्णन किया गया है।

पिङ्गलसूत्र पर भट्ट हलायुध की वृत्ति है। वृत्त में सूत्रों की व्याख्या के अतिरिक्त छन्दों के स्वनिर्मित उदाहरण भी दिये गये हैं। उदाहरणों के पद्यों में छन्दों के नामों का उल्लेख किया गया है। अर्थ उनका स्वतन्त्र है।

पिङ्गल मुनि से पूर्व भी कई अन्य छन्दशास्त्रकार हुए हैं यह कहा जा चुका है। पिङ्गल के अनन्तर तो छन्दशास्त्रकार बहुत हुए हैं। जिनमें केदार भट्ट भी हैं। इन्होंने 'वृत्तरत्नाकर' बनाया। वृत्तरत्नाकर में भी कई छन्दशास्त्र के आचार्यों के नाम का उल्लेख मिलता है जैसे सैतव[2], काश्यप, राम। परन्तु इन आचार्यों के ग्रन्थों के नाम तक अभी उपलब्ध नहीं हुए। कालिदास का 'श्रुतबोध' ख्यातिप्राप्त ग्रन्थ है सही, पर इसमें बहुत थोड़े छन्दों का निरूपण है अतः यह अधिक महत्त्व नहीं प्राप्त कर सका। गंगादास की 'छन्दोमञ्जरी' छन्द का अच्छा ग्रन्थ है। परन्तु इसका भी अधिक प्रचार नहीं हो पाया। क्षेमेन्द्र का 'सुवृत्ततिलक' छन्दो निरूपण की

---

१ 'यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति' वृ. अ० २ श्लोक ४ 'चपलेति नाम तस्याः प्रकीर्तितं नागराजेन' वृ. अ० २, ५।

२ 'सैतवस्याखिलेष्वपि' वृ०. अ० २ श्लोक २६ पृ० ४७। सिंहोन्नतेय मुदिता मुनिकाश्यपेन। उद्धर्षिणीति गदिता मुनिसैतवेन। रामेण सेय मुदिता मधुमाधवीति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपेक्षा छन्दों की आलोचना विशेष करता है—इसलिये उसका भी अधिक प्रचार नहीं हुआ। इनके अतिरिक्त और भी छन्द के ग्रन्थ हैं पर प्रायः सब अप्रचलित। इन सब में 'वृत्तरत्नाकर' का ही वर्तमान काल में अधिक प्रचार है। मल्लिनाथ आदि प्राचीन टीकाकारों ने भी छन्द के लक्षणों का जहाँ निर्देश किया है वे सब वृत्तरत्नाकर के हैं—ऐसा विद्वज्जनों का विचार है। वृत्तरत्नाकर के अधिक प्रचलित होने में इसकी दो विशेषतायें कारण हैं। एक तो यह कि इसमें छन्द का लक्षण उसी छन्द में किया गया है अर्थात् भुजङ्गप्रयात छन्द का लक्षण 'भुजङ्गप्रयात' छन्द में ही है, जैसे—'भुजङ्गप्रयातं भवेद् यैश्चतुर्भिः'। तात्पर्य यह है कि लक्षण और उदाहरण एक ही रूप में बताया गया है। लक्षण को ही उदाहरण रूप में दिया जा सकता है। स्वयं ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ की इस विशेषता का उल्लेख[1] किया है। छन्दशास्त्र में ही नहीं अपि तु अन्य लक्षण-ग्रन्थों में भी यह बात नहीं पाई जाती। इस शैली से लक्षण का उदाहरण में समन्वय करना अत्यन्त सरल हो गया है। उदाहरण अन्यत्र ढूँढने की आवश्यकता नहीं रही। दूसरी विशेषता यह है कि इसका परिमाण अत्यल्प है। कुल १३६[2] श्लोक हैं। परन्तु तो भी इस में सभी प्रचलित आवश्यक छन्दों का निरूपण

---

१ 'तेनेदं क्रियते छन्दो लक्ष्यलक्षणसंयुतम्' वृ० अ० १ श्लोक ३। देखिये हिन्दी।

२ 'षडध्यायनिबद्धस्य छन्दसोऽस्य परिस्फुटम्। प्रमाणमपि विज्ञेयं षड्त्रिंशदधिकं शतम्' इति वृ० अ० १ श्लो० ५। ग्रन्थकार ने यह परिमाण लिखा तो है। परन्तु वृत्तरत्नाकर की किसी भी वर्तमान प्रति में यह ठीक नहीं निकलता—हमने गिन कर देखा है। इस प्रति में हमने प्रायः 'नारायणी' टीकानुसारी मूल पाठ रखा है। परन्तु फिर भी परिमाण ठीक नहीं निकलता। मिलाकर ४५५६ अक्षर निकलते हैं। जिनका परिमाण १४२ से अधिक ही होता है। अतः मालूम पड़ता है कुछ पाठ प्रक्षिप्त है। परन्तु इसका निर्णय तब तक करना कठिन है जब तक कि इसकी कई हस्तलिखित प्रतियाँ न मिलाई जायं। तभी इसका भी निर्णय हो सकेगा कि प्रक्षिप्त पाठ कौन है?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हो गया है। इस एक मात्र वृत्तरत्नाकर को पढ़कर कोई भी संस्कृत साहित्य में प्रयुक्त छन्दों से अपरिचित नहीं रह सकता।

वृत्तरत्नाकर को केदारभट्ट ने बनाया है। इनके पिता का नाम पव्येक है। यह कट्टर शिवभक्त विद्वान् ब्राह्मण था। कश्यप इसका गोत्र है। समय के विषय में ग्रन्थकार ने कुछ नहीं लिखा और न किसी ऐतिहासिक विद्वान् ने ही इसके[1] लिये प्रयत्न किया। इतना कहा जा सकता है कि केदारभट्ट भी प्राचीन हैं। अपने को इन्होंने जोर देकर शैव घोषित किया है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि सभवतः ये उस जमाने में हुए हैं जब शैव धर्म का प्राबल्य था या शैव और वैष्णवों का संघर्ष चल रहा था।

इस पर कई टीकायें हो चुकी हैं जिनमें उल्लेख योग्य दो हैं—एक तो काशीनिवासी नारायणभट्ट[2] की और दूसरी सेतुटीका[3] सबसे विस्तृत है। यह

परिमाण के अधिक बढ़ने में सम्भवतः यह भी हेतु होगा कि कई छन्द दो-दो बार आ गये हैं उदाहरण के लिये देखिये—अतिजगती कें क्षमा और चन्द्रिका छन्दों को, त्रिष्टुप् के श्री और मौक्तिकमाला छन्दों को। इस विषय पर पुनः अवसर मिलने पर अधिक प्रकाश डाला जायगा।

१ देखिये वृत्तरत्नाकर के प्रारम्भ और अन्त के पद्य।

२ नारायण भट्ट ने अपना परिचय स्वयं अपनी टीका की समाप्ति पर दे दिया है।

यातिं विक्रमशते द्विखषड्भूसंमिते सितगकार्तिकरुद्रे।
ग्रन्थपूर्तिसुकृतं किल कुर्मो रामचन्द्रपदपूजनपुष्पम्॥
नारायणेन सुधिया काश्यां निवसता सता।
वृत्तरत्नाकरे टीका तद्भवा रचिता चिता॥

३ सेतुटीका आपाजि भट्ट के पुत्र हरिभास्कर ने बनाई है। ये भी काशी निवासी थे। इन्होंने अपना परिचय टीका के अन्त में विस्तार से दे दिया है। टीका की समाप्ति का समय १७३२ सम्वत् लिखा है।

अक्षिवह्निहयभूमितवर्षे सद्वसन्तसमये मधुशुक्ले।
आगतः प्रतिपदीह समाप्तिं सेतुरेष बुधसंघमुदेऽस्तु, इति॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

टीका मुद्रित हो चुकी है। इसके दो संस्करण छपे हैं, एक निर्णयसागर बंबई से और दूसरा चौखम्बा काशी से। दोनों का सम्पादन विद्वत्तापूर्ण हुआ है।

'सेतु' टीका अमुद्रित है। इसकी हस्तलिखित एक प्रति हमें पूज्य पण्डित जगदीशहरि शास्त्री व्याकरणतीर्थ प्रोफेसर ओरियन्टल कालेज लाहौर के निजी पुस्तकालय से मिली है। माननीय पण्डित जी ने उक्त पुस्तक को देकर हमें उपकृत किया है—हम उनके कृतज्ञ हैं। यह टीका न बहुत विस्तृत है न बहुत संक्षिप्त। यत्र तत्र इसमें नारायणी टीका का खण्डन भी किया गया है। इस से प्रतीत होता है यह नारायणी टीका के बाद लिखी गई है। इसमें 'भट्टास्तु' कह कर नारायणी टीका के उद्धरण दिये हैं। हमने सेतु टीका के ऐसे कई स्थल टिप्पणी में अविकल उद्धृत कर दिये हैं।

हमने उक्त दोनों टीकाओं से सहायता लेकर वृत्तरत्नाकर का सम्पादन किया है और स्वयं 'प्राज्ञतोषिणी' नाम से संस्कृत व्याख्या लिखी है। उक्त दोनों टीकाकारों के हम कृतज्ञ हैं। इन टीकाओं की अपेक्षा हमारी टीका में क्या विशेषतायें हैं ? यह टीका को देखने से ही मालूम हो सकता है इस विषय पर हम न कुछ कहेंगे, न कहना ही उचित है। हमारी व्याख्या का मूल उद्देश्य है—ग्रन्थकार के आशय को सुबोध बनाना। इसके लिये पूर्ण प्रयत्न किया गया है। सुगमता के लिये टिप्पणी भी स्थान-स्थान पर दे दी गई है। कहीं-कहीं टिप्पणी मतभेद दिखाने के लिये दी है। ऐसे स्थानों पर जिसका जो मत है उसको नामोल्लेख पूर्वक प्रकट किया है। वृत्तरत्नाकर का द्वितीय अध्याय क्लिष्ट है। उसको सुगम बनाने के लिये हमने पद्यों का अन्वय पृथक् दे दिया है। पञ्चम अध्याय भी क्लिष्ट ही है उसमें जहाँ उचित प्रतीत हुआ वहां अन्वय पृथक् दे दिया है ताकि समझने में क्लिष्टता न रहे। कहने का तात्पर्य यह है कि व्याख्या की सरलता के लिये पूर्ण प्रयत्न किया है।

वृत्तरत्नाकर लक्षण ग्रन्थ है। इसकी विशेषताओं का उल्लेख करते हुए हम कह चुके हैं कि इसमें वही पद्य लक्षण है और वही उदाहरण भी। तथा जिस छन्द का लक्षण किया है वह उसी छन्द में। इस शैली के आश्रयण से ग्रन्थ का परिमाण अल्प हो गया है और लक्षण समझने और उसका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उदाहरण में समन्वय करना सरल हो गया है। परन्तु अभ्यास के लिये हमने प्रत्येक छन्द का एक एक उदाहरण और दे दिया है। ये उदाहरण प्रायः छन्दोवृत्ति और छन्दोमञ्जरी से लिये गये हैं। जहाँ से जो उदाहरण लिया गया है उसका स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है। अन्य टीकाकारों ने भी उक्त ग्रन्थों से उदाहरण उद्धृत किये हैं पर उन्होंने उक्त ग्रन्थों के नाम का उल्लेख नहीं किया। केवल टिप्पणी में दिये हुए उपजाति के उदाहरणों में हम स्थानाभाव के कारण कवियों के नाम का उल्लेख नहीं कर पाये हैं। प्रसिद्ध छन्दों के दो दो उदाहरण दे दिये हैं। वृत्ति और मञ्जरी से उदाहरण इसलिये लिये हैं कि इनमें छन्दों के नाम भी आ गये हैं अन्यथा काव्यों से चुनकर दिये जाते।

संस्कृत व्याख्या के साथ हिन्दी अनुवाद भी दे दिया है। मूल का अक्षरार्थ हिन्दी में देकर पुनः स्पष्टता के लिये हिन्दी में ही विशेष विवरण दिया गया है। जहां कोई विशेष बात कहनी पड़ी है वह हिन्दी अक्षरार्थ के अनन्तर पृथक् अनुच्छेद (पैराग्राफ) में कही है।

सरलता के लिये स्थान स्थान पर कोष्ठक दे दिये हैं—गणों के स्वरूप के लिये, सांकेतिक शब्दावलि, उपजाति इत्यादि।

छठे अध्याय में गणित के प्रकरण को सुगम बनाने के लिये पूर्ण प्रयत्न किया गया है। अनुवाद के अनन्तर अपनी शैली के अनुसार विशेष विवरण के द्वारा गणित को स्पष्ट किया है। समन्वय अच्छी तरह किया है। प्रत्ययों का पृथक् पृथक् सामान्य लक्षण भी लिखा है। कोष्ठकों में गणित प्रक्रिया को दिखाकर उसका पूर्ण प्रकार विवरण में दिखला दिया है सहृदय गुणग्राही विद्वान् इन विशेषताओं को ग्रन्थ देखकर स्वयं अनुभव कर सकेंगे।

इसके अतिरिक्त इसके बहिरङ्ग को सुन्दर बनाने के लिये हमने सब लक्षणों पर शीर्षक दे दिये हैं ताकि मालूम हो जाय कि यह किसका लक्षण है? इस पद्य के द्वारा क्या बात बतलाई जा रही है? तृतीय अध्याय में शीर्षक के रूप में छन्द का नाम देकर उसके आगे कोष्ठक के अन्दर लक्षणोक्त गणों के संकेतित अक्षर दे दिये हैं तथा यतिस्थान वर्णों की संख्या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के अङ्क भी शीर्षक के साथ ही दे दिये हैं। जैसे शार्दूलविक्रीडित (म, स, ज, त, त, स, ग) १२, ७। इसके अतिरिक्त प्रत्येक जाति के साथ प्रस्तार रचना के द्वारा बनने वाली भेदों की पूर्ण संख्या दे दी गई है। संस्कृत टीका में प्रत्येक छन्द की क्रम-संख्या— जो प्रस्तारचना के अनुसार निकलती है-दे दी है, ताकि नष्ट तथा उद्दिष्टादि प्रत्ययों के उपयोग का ज्ञान हो सके।

टिप्पणी में यत्र तत्र पाठ [illegible] भी दे दिये हैं। मूलपाठ हमने प्रायः नारायणी तथा सेतुटीका के अनुसार रखा है। कहीं कहीं उपेक्षा करनी पड़ी है। उपेक्षा के कारण का वहीं उल्लेख कर दिया है।

छात्रों के हित के लिये 'मूलपाठ' भी प्रारम्भ में पृथक् दे दिया है ताकि याद करने और आवृत्ति करने में सुविधा रहे।

हम कह नहीं सकते कि हम अपने उद्देश्य में कहाँ तक सफल हुए हैं। परन्तु विद्वानों की सेवा में सादर प्रार्थना है कि यदि इसमें त्रुटियाँ रह गई हों तो हमें सूचना दें ताकि यदि अवसर मिला तो अग्रिम संस्करण में ठीक कर दी जांय।

अन्त में हम उन सब ग्रन्थकारों के प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करते हैं, जिनकी कृतियों से हमें सहायता मिली है। विशेष कर काशी मुद्रित नारायणी टीका के सम्पादक, सेतुटीकाकार, छन्दःप्रभाकर के रचयिता 'भानु कवि' हलायुधवृत्तिकार, छन्दोमञ्जरीकार गङ्गादास के हम चिर कृतज्ञ हैं।

इस पुस्तक के शुद्धमुद्रण का अधिक श्रेय हमारे प्रिय सुहृद् पण्डित जगदीश शास्त्री एम्० ए० को है। जगदीश की सहायता तथा अनुग्रह से इस ग्रन्थ को प्रकाशित होने का अवसर मिला है इसलिये हम जगदीश के प्रति चिरकृतज्ञतापाशबद्ध हैं—

इति शुभम्

खोला श्रीनगर
गढ़वाल
१—१—४५

विद्वज्जनानुचरः
श्रीधरानन्दः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशाय नमः ।

वृत्तरत्नाकरम् ।

सुखसन्तानसिद्ध्यर्थं नत्वा ब्रह्माच्युतार्चितम् ।
गौरीविनायकोपेतं शंकरं लोकशंकरम् ॥ १ ॥
वेदार्थशैवशास्त्रज्ञः पव्येकोऽभूद् द्विजोत्तमः ।
तस्य पुत्रोऽस्ति केदारः शिवपादार्चने रतः ॥ २ ॥
तेनेदं क्रियते छन्दो लक्ष्यलक्षणसंयुतम् ।
वृत्तरत्नाकरं नाम बालानां सुखबुद्धये ॥ ३ ॥
पिंगलादिभिराचार्यैर्यदुक्तं लौकिकं द्विधा ।
मात्रावर्णविभेदेन छन्दस्तदिह कथ्यते ॥ ४ ॥
षडध्यायनिबद्धस्य छन्दसोऽस्य परिस्फुटम् ।
प्रमाणमिह विज्ञेयं षट्त्रिंशदधिकं शतम् ॥ ५ ॥
म्यरस्तजभ्नगैर्लान्तैरेभिर्दशभिरक्षरैः ।
समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना ॥ ६ ॥
सर्वगुर्मो मुखान्तलौ यरावन्तगलौ सतौ ।
ग्मध्याद्यौ ज्भौ त्रिलो नोष्टौ भवन्त्यत्र गणास्त्रिकाः ॥ ७ ॥
ज्ञेयाः सर्वान्तमध्यादिगुरवोऽत्र चतुष्कलाः ।
गणाश्चतुर्लघूपेताः पञ्चार्यादिषु संस्थिताः ॥ ८ ॥
सानुस्वारो विसर्गान्तो दीर्घो युक्तपरश्च यः ।
वा पादान्ते त्वसौ ग्वक्रो ज्ञेयोऽन्यो मातृको लृजुः ॥ ९ ॥
पादादाविह वर्णस्य संयोगः क्रमसंज्ञकः ।
पुरःस्थितेन तेन स्याल्लघुतापि क्वचिद् गुरोः ॥ १० ॥
तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि च दधीनि ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अल्पव्ययेन सुन्दरि ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति ॥ ११ ॥
अब्धिभूतरसादीनां ज्ञेयाः संज्ञास्तु लोकतः ।
ज्ञेयः पादश्चतुर्थांशो यतिर्विच्छेदसंज्ञिका ॥ १२ ॥
युक्समं विषमं चायुक्स्थानं सद्भिर्निगद्यते ।
सममर्द्धसमं वृत्तं विषमं च तथा परम् ॥ १३ ॥
अङ्घ्रयो यस्य चत्वारस्तुल्यलक्षणलक्षिताः ।
तच्छन्दःशास्त्रतत्त्वज्ञाः समं वृत्तं प्रचक्षते ॥ १४ ॥
प्रथमाङ्घ्रिसमो यस्य तृतीयश्चरणो भवेत् ।
द्वितीयस्तुर्यवद्वृत्तं तदर्धसममुच्यते ॥ १५ ॥
यस्य पादचतुष्केऽपि लक्ष्म भिन्नं परस्परम् ।
तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदाः ॥ १६ ॥
आरभ्यैकाक्षरात्पादादेकैकाक्षरवर्धितैः ।
पृथक्छन्दो भवेत्पादैर्यावत्षड्विंशति गतम् ॥ १७ ॥
तदूर्ध्वं चण्डवृष्ट्यादिदण्डकाः परिकीर्तिताः ।
शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः ॥ १८ ॥
उक्तात्युक्ता तथा मध्या प्रतिष्ठान्या सुपूर्विका ।
गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पंक्तिरेव च ॥ १९ ॥
त्रिष्टुप् च जगती चैव तथातिजगती मता ।
शक्वरी सातिपूर्वा स्यादष्टयत्यष्टी ततः स्मृते ॥ २० ॥
धृतिश्चातिधृतिश्चैव कृतिः प्रकृतिराकृतिः ।
विकृतिः सङ्कृतिश्चापि तथातिकृतिरुत्कृतिः ॥ २१ ॥
इत्युक्ताश्छन्दसां संज्ञाः क्रमशो वच्मि साम्प्रतम् ।
लक्षणं सर्ववृत्तानां मात्रावृत्तानुपूर्वकम् ॥ २२ ॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे प्रथमोऽध्यायः ।

अथ द्वितीयोऽध्यायः

लक्ष्मैतत्सप्त गणा गोपेता भवति नेह विषमे जः ।
षष्ठोऽयं नलघू वा प्रथमेऽर्धे नियतमार्यायाः ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

षष्ठे द्वितीयलात्परकेऽन्ले मुखलाच्च सयतिपदनियमः ।
चरमेऽर्धे पंचमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः ॥ २ ॥
त्रिष्वंशकेषु पादो दलयोराद्येषु दृश्यते यस्याः ।
पथ्येति नाम तस्याश्छन्दोविद्भिः समाख्यातम् ॥ ३ ॥
संलंघ्य गणत्रयमादिमं शकलयोर्द्वयोर्भवति पादः ।
यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति ॥ ४ ॥
उभयार्धयोर्जकारौ द्वितीयतुर्यौ गमध्यगौ यस्याः ।
चपलेति नाम तस्याः प्रकीर्तितं नागराजेन ॥ ५ ॥
आद्यं दलं समस्तं भजेत लक्ष्म चपलागतं यस्याः ।
शेषे पूर्वजलक्ष्मा मुखचपला सोदिता मुनिना ॥ ६ ॥
प्राक्प्रतिपादितमर्धे प्रथमे प्रथमेतरे तु चपलायाः ।
लक्ष्माश्रयेत सोक्ता विशुद्धधीभिर्जघनचपला ॥ ७ ॥

इत्यार्याप्रकरणम्

आर्याप्रथमदलोक्तं यदि कथमपि लक्षणं भवेदुभयोः ।
दलयोः कृतयतिशोभां तां गीतिं गीतवान्भुजङ्गेशः ॥ ८ ॥
आर्याद्वितीयकेऽर्धे यद्गदितं लक्षणं तत्स्यात् ।
यद्युभयोरपि दलयोरुपगीतिं तां मुनिर्ब्रूते ॥ ९ ॥
आर्यापूर्वार्धं यदि गुरुणैकेनाधिकेन निधने युक्तम् ।
इतरत्तद्वन्निखिलं दलं यदीयमुदितेयमार्यागीतिः ॥ ११ ॥

इति गीतिप्रकरणम् ।

षड्विषमेऽष्टौ समे कलाः, ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः ।
न समाऽत्र पराश्रिता कला, वैतालीयेन्ते रलौ गुरुः ॥ १२ ॥
पर्यन्ते र्यौ तथैव शेषं त्वौपच्छन्दसिकं सुधीभिरुक्तम् ॥ १३ ॥
आपातलिका कथितेयं भाद्गुरुकावथ पूर्ववदन्यत् ॥ १४ ॥
तृतीययुग्दक्षिणान्तिका समस्तपादेषु द्वितीयलः ॥ १५ ॥
उदीच्यवृत्तिर्द्वितीयलः सक्तोऽग्रेण भवेदयुग्मयोः ॥ १६ ॥
पूर्वेण युतोऽथ पंचमः प्राच्यवृत्तिरुदितेति युग्मयोः ॥ १७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदा समावोजयुग्मकौ पूर्वयोर्भवति तत्प्रवृत्तकम् ॥ १८ ॥

अस्य युग्मरचिताऽपरान्तिका ॥ १९ ॥

अयुग्मवा चारुहासिनी ॥ २० ॥

इति वैतालीयप्रकरणम् ।

वक्त्रं नाद्यान्नसौ स्यातामब्धेर्योऽनुष्टुभि ख्यातम् ॥ २१ ॥

युजोर्जेन सरिद्भर्तुः पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम् ॥ २२ ॥

ओजयोर्जेन वारिधेस्तदेव विपरीतादि ॥ २३ ॥

चपलावक्त्रमयुजोर्नकारश्चेत्पयोराशेः ॥ २४ ॥

यस्यां लः सप्तमो युग्मे सा युग्मविपुला मता ॥ २५ ॥

सैतवस्याखिलेष्वपि ॥ २६ ॥

भेनाब्धितो भाद्विपुला ॥ २७ ॥

इत्थमन्या रश्चतुर्थात् ॥ २८ ॥

नोम्बुधेश्चेन्नविपुला ॥ २९ ॥

तोऽब्धेस्तत्पूर्वान्या भवेत् ॥ ३० ॥

इति वक्त्रप्रकरणम् ।

द्विकगुणितवसुलघुरचलधृतिरिति ॥ ३१ ॥

मात्रासमकं नवमो ल्गान्तम् ॥ ३२ ॥

जोन्लावथाम्बुधेर्विश्लोकः ॥ ३३ ॥

तद्युगलाद्वानवासिका स्यात् ॥ ३४ ॥

बाणाष्टनवसु यदि लश्चित्रा ॥ ३५ ॥

उपचित्रा नवमे परयुक्ते ॥ ३६ ॥

अष्टाभ्यो गो ल्यावुपचित्रा ॥ ३७ ॥

यदतीतकृतविविधलक्ष्मयुतैर्मात्रासमादिपादैः कलितम् ।
अनियतवृत्तपरिमाणसहितं प्रथितं जगत्सु पादाकुलकम् ॥ ३८ ॥

वृत्तस्य ला विना वर्णैर्गा वर्णा गुरुभिस्तथा ।
गुरवो लैर्दले नित्यं प्रमाणमिति निश्चितम् ॥ ३९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शिखिगुणितदशलघुरचितमपगतलघुयुगलमपरमिदमखिलम् ।
सगुरुशकलयुगलकमपि सुपरिघटितललितपदविततिं भवति शिखा ४०
विनिमयविनिहितशकलयुगलकलितपदविततिविरचितगणनिचया ।
श्रुतिसुखकृदियमपि जगति ननु जशिर उपगतवति सति भवति खजा ४१
अष्टावर्धे गा द्वयमस्ता यस्याः सानङ्गक्रीडोक्ता ।
दलमपरमपि वसुगुणितसलिलनिधिलघुकविरचितपदविततिं भवति ४२
त्रिगुणनवलघुरवशितिगुरुरिति दलयुगकृततनुरतिं रुचिरा ॥ ४३ ॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

(१) उक्ता । गः श्रीः ॥
(२) अत्युक्ता । गौ स्त्री ॥
(३) मध्या । मो नारी ॥ रो मृगी ॥
(४) प्रतिष्ठा । म्गौ चेत्कन्या ॥
(५) सुप्रतिष्ठा । भ्गौ गिति पंक्तिः ॥
(६) गायत्री । त्यौ स्तस्तनुमध्या ॥ शशिवदना न्यौ ॥ विद्युल्लेखा मो मः ॥ स्सौ चेद्वसुमती ॥
(७) उष्णिक् । म्सौगः स्यान्मदलेखा ॥ कुमारललिता ज्सौ ग् ॥ सरगैर्हंसमाला ॥

(८) अनुष्टुप् । भौ गिति चित्रपदा गः । मो मो गो गो विद्युन्माला । माणवकं भात्तलगाः । म्नौ गौ हंसरुतमेतत् । जौं समानिका गलौ च । प्रमाणिका जरौ लगौ । वितानमाभ्यां यदन्यत् ।

(९) बृहती । रान्नसाविह हलमुखी । भुजगशिशुभृता नौ मः ।

(१०) पंक्तिः म्सौ ज्गौ शुद्धविराडिदं मतम् । म्नौ य्गौ चेति पणवनामेदम् । जौं रगौ मयूरसारिणी स्यात् । भ्मौ सगयुक्तौ रुक्मवतीयम् । ज्ञेया मत्ता मभसगयुक्ता । नरज गैर्भवेन्मनोरमा । त्जौ ज्गौ गुरुणेयमुपस्थिता ।

(११) त्रिष्टुप् । स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः । उपेन्द्रवज्रा जतजा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्ततौ गौ। अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः। इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु स्मरन्ति जातिष्विदमेव नाम। नजजलगैर्गदिता सुमुखी। दोधकवृत्तमिदं भभभाद्गौ। शालिन्युक्ता म्तौ तगौ गोऽब्धिलोकैः। वातोर्मीयं गदिता म्भौ तगौ गः। पंचरसैः श्रीर्भतनगगैः स्यात्। म्भौ न्लौ स्याद्भ्रमरविलसितम्। रान्नराविह रथोद्धता लगौ। स्वागतेति रनभाद्गुरुयुग्मम्। ननसगगुरुरचिता वृत्ता। ननरलगुरुभिश्च भद्रिका। श्येनिका रजौ रलौ गुरुर्यदा। मौक्तिकमाला यदि भतनाद्गौ। उपस्थितमिदं ज्सौ ताद्गकारौ।

(१२) जगती। चन्द्रवर्त्म गदितं तु रनभसैः। जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ। स्यादिन्द्रवंशा ततजौ रसंयुतौ। इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम्। द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ। वसुयुगविरतिर्नौ म्यौ पुटोऽयम्। प्रमुदितवदना भवेन्नौ च रौ। नयसहितौ न्यौ कुसुमविचित्रा। रसैर्जसजसा जलोद्धतगतिः। भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः। रैश्चतुर्भिर्युता स्रग्विणी संमता। भुवि भवेन्नभजरैः प्रियंवदा। त्यौ त्यौ मणिमाला छिन्ना गुहवक्त्रैः। धीरैरभाणि ललिता तभौ जरौ। जजाविह मौक्तिकदाम जजौ च। प्रमिताक्षरा सजससैरुदिता। ननभरसहिताभिहितोज्ज्वला। पञ्चाश्वैश्छिन्ना वैश्वदेवी ममौ यौ। अब्ध्यष्टाभिर्जलधरमाला म्भौ स्मौ। इह नवमालिका नजभयैः स्यात्। स्वरशरविरतिर्ननौ रौ प्रभा। भवति नजावथ मालती जरौ। अभिनवतामरसं नजजाद्यः॥

(१३) अतिजगती। तुरगरसयतिर्नौ ततौ गः क्षमा। म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्। चतुर्ग्रहैरतिरुचिरा जभस्जगाः। वेदै रन्ध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम्। सजसा भवति मञ्जुभाषिणी। ननततगुरुभिश्चन्द्रिकाश्वर्तुभिः॥

(१४) शक्करी। म्तौ न्सौ गात्रत्नग्रहविरतिरसम्बाधा। ननरसलघुगैः स्वरैरपराजिता। ननभनलघुगैः प्रहरणकलिता। उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः। सिंहोन्नतेयमुदिता मुनिकाश्यपेन। उद्धर्षिणीति गदिता मुनिसैतवेन। रामेण सेयमुदिता मधुमाधवीति॥

(१५) अतिशक्करी। द्विहतहयलघुरथगिति शशिकला स्रगिति भवति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रसैर्नवकयतिरियम् । वसुमुनियतिरिह मणिगुणनिकरः । ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः । भवति नजौ भजौ रसहितौ प्रभद्रकम् । सजना नयौ शरदशयतिरियमेला । म्रौ म्यौ यान्तौ भमेतां सप्ताष्टकैश्चन्द्रलेखा ॥

(१६) अष्टिः । भत्रिनगैः स्वरात्खमृषभगजविलसितम् । नजभजरैः सदा भवति वाणिनी गयुक्तैः । जरौ जरौ जगाविदं वदन्ति पञ्चचामरम् ।

(१७) अत्यष्टिः । रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी । जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथिवी गुरुः । दिङ्मुनिवंशपत्रपतितं भरनभनलगैः । रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा । मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद्गुरूचेत् । हयदशभिर्नजौ भजजला गुरु नर्कुटकम् । मुनिगुहकार्णवैः कृतयति वद कोकिलकम् ॥

(१८) धृतिः । स्याद्भूतर्त्वश्वैः कुसुमितलतावेल्लिता म्तौ नयौ यौ ।

(१९) अतिधृतिः । सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम् । रसर्त्वश्वैर्य्मौ न्सौ ररगुरुयुतौ मेघविस्फूर्जिता स्यात् ।

(२०) कृतिः । ज्ञेया सप्ताश्वषड्भिर्मरभनययुता भ्लौ गः सुवदना । त्री रजौ गलौ भवेदिहेहशेन लक्षणेन वृत्तनाम ।

(२१) प्रकृतिः । म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् ।

(२२) आकृतिः । भ्रौ नरना रनावथ गुरुर्दिगर्कविरमं हिभद्रकमिदम् ।

(२३) विकृतिः । यदिह नजौ भजौ भजभलगास्तदाश्वललितं हरार्कयतिमत् । मत्ताक्रीडा मौ लौ नौ न्लौ गिति भवति वसुशरदशयतियुता ।

(२४) संकृतिः । भूतमुनीनैर्यतिरिह भतनाः स्भौ भनयाश्च यदि भवति तन्वी ।

(२५) अतिकृतिः । क्रौञ्चपदा भ्मौ स्मौ ननना न्गाविषुशरवसुमुनिविरतिरिह भवेत् ।

(२६) उत्कृतिः । वस्वीशाश्वच्छेदोपेतं ममतनयुगनरसलगैर्भुजङ्गविजृम्भितम् । मो नाः षट् सगगिति यदि नवरसशरयतियुतमपवाहाख्यम् ।

यदि ह नयुगलं ततः सप्त रेफास्तदा चण्डवृष्टिप्रपातोभवेद्दण्डकः ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रतिचरणविवृद्धरेफाः स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दामशंखादयः ॥२॥
प्रचितकसमभिधो धीरधीभिः स्मृतो दण्डको नद्वयादुत्तरैः सप्तभिर्यैः ॥ ३ ॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे तृतीयोऽध्यायः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

विषमे यदि सौ सलगा दले, भौ युजि भाद्गुरुकावुपचित्रम् ॥ १ ॥
भत्रयमोजगतं गुरुणी चेत् , युजि च नजौ ज्ययुतौ द्रुतमध्या ॥ २ ॥
सयुगात्सगुरू विषमे चेत् , भाविह वेगवती युजि भाद्गौ ॥ ३ ॥
ओजे तपरौ जरौ गुरुश्चेत् , म्सौ ज्गौग् भद्रविराड् भवेदनोजे ॥ ४ ॥
असमे सजौ सगुरुयुक्तौ, केतुमती समे भरनागाद्गः ॥ ५ ॥
आख्यानकी तौ जगुरू ग ओजे, जतावनोजे जगुरू गुरुश्चेत् ॥ ६ ॥
जतौ जगौ गो विषमे समे स्यात् , तौ ज्गौ ग एषा विपरीतपूर्वा ॥ ७ ॥
सयुगात्सलघू विषमे गुरुः, युजि नभौ भरकौ हरिणप्लुता ॥ ८ ॥
अयुजि ननरला गुरुः समे, न्जमपरवक्त्रमिदं ततो जरौ ॥ ९ ॥
अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा ॥ १० ॥
वदन्त्यपरवक्त्राख्यं वैतालीयं विपश्चितः ।
पुष्पिताग्राभिधं केचिदौपच्छन्दसिकं तथा ॥ ११ ॥
स्यादयुग्मके रजौ रजौ समे तु, जरौ जरौ गुरुर्यदा यवान्मतीयम् ॥ १२ ॥
अयुजोर्यदि सौ जगौ युजोः, सभरात्या यदि सुन्दरी तदा ॥ १३ ॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ पञ्चमोऽध्यायः ।

मुखपादोऽष्टभिर्वर्णैः
परे स्युर्मकरालयैः क्रमाद् वृद्धैः ।
सततं यस्य विचित्रैः पादैः संपन्नसौन्दर्यं
तदुदितममलमतिभिः पदचतुरूर्ध्वाभिधं वृत्तम् ॥ १ ॥
प्रथममुदितवृत्ते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विरचितविषमचरणभाजि
गुरुकयुगनिधन इह सहित आङ्गा
लघुविरचितपदविततियतिरिति भवति पीडः ॥ २ ॥
प्रथममितरचरणसमुत्थं
भयति सपदि लक्ष्म
इतरदितरगदितमपि च यदि तुर्यं
चरणयुगलकमनिकृतमपरमिति कलिका सा ॥ ३ ॥
द्विगुरुयुतसकलचरणान्ता
मुखचरणगतमनुभवति तृतीयः ।
अपरमिह हि लक्ष्म
प्रकृतमखिलमपि यदिदमनुभवति लवली सा ॥ ४ ॥
प्रथममधिवसति यदि तुर्यं
चरमचरणपदमवसितगुरुयुग्मम् ।
निखिलमपरमुपरिगतमिति ललितपदयुक्ता
नदिदममृतधारा ॥ ५ ॥
सजमादिमे सलघुकौ च नसजगुरुकैरथोद्गता ।
त्र्यङ्घ्रिगतभनजला गयुताः सजसा जगौ चरणमेकतः पठेत् ॥ ६ ॥
चरणत्रयं भजति लक्ष्म
यदि सकलमुद्गतागतं
नौ भगौ भवति सौरभकं
चरणे यदीह भवतस्तृतीयके ॥ ७ ॥
नयुगं सकारयुगलं च
यदि शेषमस्य खलु पूर्वतुल्यकम् ॥ ८ ॥
म्सौ ज्भौ गौ प्रथमाङ्घ्रिरेकतः पृथगन्यत् ,
त्रितयं सनजरगास्तथा ननौ सः ।
त्रिनपरिकलितजयौ
प्रचुपितमिदमुदितमुपस्थितपूर्वम् ॥ ९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नौ पादेऽथ तृतीयके सनौ नसयुक्तौ
प्रथमाङ्घ्रिकृतयतिस्तु वर्धमानं
त्रितयमपरमपि पूर्वसदृशमिह भवति
प्रततमतिमिरिति गदितं लघु वृत्तम् ॥ १० ॥
अस्मिन्नेव तृतीयके तजराः स्युः
प्रथमे च विरतिरार्षभं ब्रुवन्ति ।
तच्छुद्धविराट् पुरः स्थितं
त्रितयमपरमपि यदि पूर्वसमं स्यात् ॥ ११ ॥
विषमाक्षरपादं वा पादैरसमं दशधर्मवत् ।
यच्छन्दो नोक्तमत्र गाथेति तत्सूरिभिः प्रोक्तम् ॥ १२ ॥
इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः ।

प्रस्तारो नष्टमुद्दिष्टमेकद्व्यादिलगक्रिया ।
संख्यानमध्वयोगश्च षडेते प्रत्ययाः स्मृताः ॥ १ ॥
पादे सर्वगुरावाद्याल्लघुं न्यस्य गुरोरधः ।
यथोपरि तथा शेषं भूयः कुर्यादमुं विधिम् ॥ २ ॥
ऊने दद्याद् गुरूनेव यावत्सर्वलघुर्भवेत् ।
प्रस्तारोयं समाख्यातश्छन्दोविचितिवेदिभिः ॥ ३ ॥ इति प्रस्तारः ।
नष्टस्य यो भवेदङ्कस्तस्यार्द्धेऽर्द्धे समे च लः ।
विषमे चैकमाधाय तदर्द्धेऽर्द्धं गुरुर्भवेत् ॥ ४ ॥ इति नष्टम् ।
उद्दिष्टं द्विगुणानाद्यानुपर्यङ्कान् समालिखेत् ।
लघुस्था ये तु तत्राङ्कास्तैः सैकैर्मिश्रितैर्भवेत् ॥ ५ ॥ इत्युद्दिष्टम् ।
वर्णान् वृत्तभवान् सैकानौत्तराधर्यतः स्थितान् ।
एकादिक्रमतश्चैतानुपर्युपरि निक्षिपेत् ॥ ६ ॥
उपान्त्यतो निवर्तेत त्यजेन्नैकैकमूर्ध्वतः ।
उपर्याद्याद् गुरोरेवमेकद्व्यादिलगक्रिया ॥ ७ ॥
इत्येकद्व्यादिलगक्रिया ।
लगक्रियाङ्कसन्दोहे भवेत्संख्या विमिश्रिते ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उद्दिष्टाङ्कसमाहारः सैको वा जनयेदिमाम् ॥ ८ ॥ इति संख्या ।
संख्यैव द्विगुणैकोना सद्भिरध्वा प्रकीर्तितः ।
वृत्तस्याङ्गुलिकी व्याप्तिरधः कुर्यादथाङ्गुलिम् ॥ ९ ॥ इत्यध्वा
वंशेऽभूत्कश्यपस्य प्रकटगुणगणः शैवसिद्धान्तवेत्ता ।
विप्रः पव्येकनामा विमलतरमतिर्वेदतत्त्वार्थबोधे ।
केदारस्तस्य सूनुः शिवचरणयुगाराधनैकाग्रचित्त-
श्छन्दस्तेनाभिरामं प्रविरचितमिदं वृत्तरत्नाकराख्यम् ॥ ३ ॥

इति भट्टकेदारविरचिते वृत्तरत्नाकराख्ये छन्दःशास्त्रे प्रस्तारप्रकरणं समाप्तम् ।

गणों के शुभाशुभ और देवतादि का विचार

मो भूमिः श्रियमातनोति यजलं वृद्धिं रवह्निर्मृतिं ।
स वायुः परदेशदूरगमनं तव्योम शून्यं फलम् ।
जः सूर्यो भयमाददाति विपुलं भेन्दुर्यशो निर्मलम्
नो नाकश्च सुखप्रदः फलमिदं प्राहुर्गणानां बुधाः ।

गणनाम	रूप	स्वामी	फल
मगण	ऽ ऽ ऽ	पृथ्वी	लक्ष्मी
यगण	। ऽ ऽ	जल	वृद्धि
रगण	ऽ । ऽ	अग्नि	दाह
सगण	। । ऽ	वायु	भ्रमण
तगण	ऽ ऽ ।	व्योम	शून्य
जगण	। ऽ ।	भानु	भय
भगण	ऽ । ।	शशि	यश
नगण	। । ।	स्वर्ग	सुख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वृत्तरत्नाकरस्थविषयानुक्रमः ।

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
भूमिका	v
वृत्तरत्नाकरम्	xiii
प्रथमोऽध्यायः	
मङ्गलाचरणम्	१
ग्रन्थकर्तुः परिचयः	२
ग्रन्थस्यानुबन्धचतुष्टयम्	३
स्वग्रन्थस्य सन्मूलकत्वप्रतिपादनम्	४
ग्रन्थपरिमाणम्	४
छन्दःशास्त्रस्य दशाक्षराणि	५
गणलक्षणानि	६
मात्रिकच्छन्दोगणाः	७
गुरुलघुलक्षणम्	८
क्रमसंयोगनिरूपणम्	९
क्रमसंयोगोदाहरणम्	१०
अब्धिप्रभृतिसंज्ञाः	११
पादलक्षणम्	१२
यतिलक्षणम्	१३
युगयक्संज्ञे	१५
वृत्तभेदकथनम्	१५
समवृत्तलक्षणम्	१६
अर्धसमवृत्तलक्षणम्	१७
विषमवृत्तलक्षणम्	१७
वर्णसमवृत्तभेदाः	१८
दण्डकलक्षणम्	१९

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
गाथालक्षणम्	२०
उक्तादिजातिपरिगणनम्	२०
अध्यायोपसंहारः	२१
द्वितीयोऽध्यायः	
अथ मात्रिकच्छन्दांसि	
आर्याप्रकरणे	
आर्यासामान्यलक्षणम्	२३
पथ्यालक्षणम्	२५
विपुलार्यालक्षणम्	२७
चपलालक्षणम्	२८
मुखचपलालक्षणम्	२९
जघनचपलालक्षणम्	३१
गीतिप्रकरणे	
गीतिलक्षणम्	३२
उपगीतिलक्षणम्	३४
उद्गीतिलक्षणम्	३५
आर्यागीतिः	३६
वैतालीयप्रकरणे	
वैतालीयलक्षणम्	३८
औपच्छन्दसिकम्	४०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
आपातलिका	४१
दक्षिणान्तिका	४३
उदीच्यवृत्तिः	४४
प्राच्यवृत्तिः	४५
प्रवृत्तकम्	४७
अपरान्तिका	४८
चारुहासिनी	५०

अनुष्टुप्प्रकरणे

वक्त्रलक्षणम्	५२
पथ्यावक्त्रम्	५४
विपरीतपथ्यावक्त्रम्	५५
चपलावक्त्रम्	५६
युग्मविपुला	५७
विपुला	५८
भविपुला	५८
रविपुला	६०
नविपुला	६०
तविपुला	६१

मात्रिकसमप्रकरणे

अचलधृतिः	६३
मात्रासमकम्	६४
विश्लोकः	६५
वानवासिका	६६
चित्रा	६७
उपचित्रा	६८

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
उपचित्रा (मतान्तरेण)	६८
पादाकुलकम्	७०
वृत्तानां गुरुलघुमात्रावर्णसंख्या–परिज्ञानोपायः	७२

द्विखण्डकछन्दांसि

शिखा	७५
खञ्जा	७७
अनङ्गक्रीडा	७८
अतिरुचिरा	७९

तृतीयोऽध्यायः

वर्णसमवृत्तानि

उक्ता	
श्रीः	८१
अत्युक्ता	
स्त्री	८२
मध्या	
नारी	८३
मृगी	८३
प्रतिष्ठा	
कन्या	८४
सुप्रतिष्ठा	
पङ्क्तिः	८५
गायत्री	
तनुमध्या	८५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
शशिवदना	८६
विद्युल्लेखा	८६
वसुमती	८७
उष्णिक्	
मदलेखा	८८
कुमारललिता	८८
हंसमाला	८६
अनुष्टुप्	
चित्रपदा	८६
विद्युन्माला	६०
माणवकम्	६१
हंसरुतम्	६२
समानिका	६२
प्रमाणिका	६३
वितानम्	६४
बृहती	
हलमुखी	६४
भुजगशिशुभृता	६५
पङ्क्तिः	
शुद्धविराड्	६६
पणवः	६६
मयूरसारिणी	६७
रुक्मवती	६८
मत्ता	६८
मनोरमा	६६

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
उपस्थिता	१००
त्रिष्टुप्	
इन्द्रवज्रा	१००
उपेन्द्रवज्रा	१०१
उपजातिस्वरूपम्	१०२
सुमुखी	१०६
दोधकम्	१०६
शालिनी	१०७
वातोर्मी	१०८
श्रीः	१०८
भ्रमरविलसितम्	१०६
रथोद्धता	११०
स्वागता	११०
वृत्ता	१११
भद्रिका	१११
श्येनिका	११२
मौक्तिकमाला	११३
उपस्थितम्	११३
जगती	
चन्द्रवर्त्म	११३
वंशस्थम्	११४
इन्द्रवंशा	११५
तोटकम्	११६
द्रुतविलम्बितम्	११६
पुटः	११७

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
प्रमुदितवदना	११८
कुसुमविचित्रा	११८
जलोद्धतगतिः	११९
भुजङ्गप्रयातम्	११९
स्रग्विणी	१२०
प्रियंवदा	१२१
मणिमाला	१२१
ललिता	१२२
मौक्तिकदाम	१२२
प्रमिताक्षरा	१२३
उज्ज्वला	१२४
वैश्वदेवी	१२४
जलधरमाला	१२५
नवमालिका	१२६
प्रभा	१२६
मालती	१२७
अभिनवतामरसम्	१२७
अतिजगती	
क्षमा	१२८
प्रहर्षिणी	१२९
अतिरुचिरा	१२९
मत्तमयूरम्	१३०
मञ्जुभाषिणी	१३१
चन्द्रिका	,,
शक्वरी	
असम्बाधा	१३२

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अपराजिता	१३२
प्रहरणकलिता	१३३
वसन्ततिलका	१३४
वसन्ततिलकाया नामान्तराणि	१३४
अतिशक्वरी	
शशिकला	१३५
स्रक्	१३६
मणिगुणनिकरः	,,
मालिनी	,,
प्रभद्रकम्	१३७
एला	,,
चन्द्रलेखा	१३८
अष्टिः	
ऋषभगजविलसितम्	१३९
वाणिनी	१३९
पञ्चचामरम्	१४०
अत्यष्टिः	
शिखरिणी	१४१
पृथ्वी	१४२
वंशपत्रपतितम्	१४२
हरिणी	१४३
मन्दाक्रान्ता	१४४
नर्कुटकम्	१४४
कोकिलकम्	१४५
धृतिः	
कुसुमितलतावेल्लिता	१४५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अतिधृतिः	
शार्दूलविक्रीडितम्	१४६
मेघविस्फूर्जिता	१४७
कृतिः	
सुवदना	१४८
वृत्तम्	१४६
प्रकृतिः	
स्रग्धरा	१४६
आकृतिः	
भद्रकम्	१५०
विकृतिः	
अश्वललितम्	१५२
मत्ताक्रीडा	,,
संकृतिः	
तन्वी	१५३
प्रतिकृतिः	
क्रौञ्चपदा	१५४
उत्कृतिः	
भुजङ्गविजृम्भितम्	१५५
अपवाहम्	,,
दण्डकप्रकरणे	
चण्डवृष्टिप्रपातः	१५७
दण्डकभेदा अर्णादयः	१५८
प्रचितकम्	१५६

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
चतुर्थोऽध्यायः	
वर्णार्धसमवृत्तानि	
उपचित्रम्	१६१
द्रुतमध्या	१६२
वेगवती	१६२
भद्रविराट्	१६३
केतुमती	१६४
आख्यानकी	,,
विपरीताख्यानकी	१६५
हरिणप्लुता	१६६
अपरवक्त्रम्	१६७
पुष्पिताग्रा	१६७
अपरवक्त्रपुष्पिताग्रयोर्नामान्तरे	१६८
यवमती	१६६
सुन्दरी	१६६
पञ्चमोऽध्यायः	
वर्णविषमवृत्तानि	
पदचतुरूर्ध्वप्रकरणम्	
पदचतुरूर्ध्वम्	१७१
आपीडः	१७२
कालिका	१७३
लवली	१७४
अमृतधारा	१७५
उद्गता	१७६
सौरभकम्	१७८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ललितम्	१७९
उपस्थितप्रचुपितम्	१८०
वर्धमानम्	१८१
शुद्धविराडार्षभम्	१८३
गाथालक्षणम्	१८४
षष्ठोऽध्यायः	
प्रत्ययः	१८७
प्रस्ताररचनाविधिः	१८८

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
नष्टविधिः	१९२
उद्दिष्टप्रक्रिया	१९४
एकद्व्यादिलगक्रिया	१९६
संख्याविधिः	२०१
अध्वयोगविधिः	२०२
ग्रन्थोपसंहारः	२०४
छन्दोनुक्रमणी	२०६
प्राज्ञप्रश्नोत्तरावली	२१०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीः

प्राज्ञतोषिणीसमेतं

वृत्तरत्नाकरम् ।

अथ प्रथमोऽध्यायः ।

मङ्गलाचरणम् ।

सुखसन्तानसिद्ध्यर्थ नत्वा ब्रह्माच्युतार्चितम् ।
गौरीविनायकोपेतं शंकरं लोकशंकरम् ॥ १ ॥

गणेशमुखचुम्बिनी विबुधवृन्दसंतोषिणी ।
स्वभक्तजनतारिणी दनुजसङ्घसंहारिणी ॥
अघव्रजविडम्बिनी हरकुटुम्बिनी शूलिनी ।
जयत्यचलनन्दिनी मम हृदन्तरालम्बिनी ॥ १ ॥
प्राणाचार्यं सदानन्द–नामानं स्वाग्रजं कविम् ।
नवे वयसि स्वर्यातं नैकग्रन्थकृतं प्रियम् ॥ २ ॥
जीवानन्दं च पितरं धीरं दैवज्ञभूषणम् ।
सरस्वतीं मातरं च स्वर्गतां प्रणमाम्यहम् ॥ ३ ॥
पुर्यो प्रमथनाथस्य भुवस्यानन्दरूपिणः ।
गुरोः कालीप्रसादाद्धि विद्यां प्राप्तवता मया ॥ ४ ॥
घिल्डियालोपसंज्ञेन श्रीधरानन्दशर्मणा ।
वृत्तरत्नाकरव्याख्या क्रियते प्राज्ञतोषिणी ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी० – अथ वेदाङ्गभूतछन्दोजिज्ञासामुद्यन्मानवमानसमलापहारकरं वृत्तरत्नाकरमाविष्कुर्वन् ग्रन्थकारः सम्भावितप्रत्यूहव्यूहापोहाय शिष्टाचारानुमोदितं मङ्गलमाचरन् स्वेष्टदेवतामुपश्लोकयति—सुखसन्तानेत्यादिना। ब्रह्माच्युतार्चितं गौरीविनायकोपेतं लोकशंकरं शंकरं सुखसन्तानसिद्ध्यर्थं। नत्वेत्यन्वयः। अस्य च पुनः 'तेन छन्दः क्रियते' इति तृतीयश्लोकेनान्वयः। ब्रह्मा—सृष्टिकर्ता, अच्युतः-विष्णुः, सृष्टिपालकः, ताभ्यामर्चितम्-पूजितम्। गौरीविनायकोपेतम्-गौरी पार्वती, विनायको गणेशश्चेति तयोर्द्वन्द्वः। ताभ्यामुपेतं सहितम्। लोकशंकरम्—लोकानां चतुर्दशभुवनानाम्, भूरादीनां सप्तानां वा, अथवा लोकस्य जगतः, भक्तलोकस्य वा शं सुखं करोतीति तम्, सर्वसुखकरमित्यर्थः। लोककल्याणकरस्वभावमिति यावत्, योऽप्रार्थितोऽपि स्वभाववशात्कल्याणं तनोति स प्रणामकरणेऽपि साधु साधयिष्यतीति किमु वक्तव्यमिति प्रतीयते। एतेन ममापि ग्रन्थसमाप्तौ निर्विघ्नतासम्पादनद्वारा सुखं करिष्यतीत्यपि बोध्यते शंकरम्—एतन्नामानं भगवन्तम्, अन्वर्थेयं संज्ञा भगवतः सदैव लोककल्याणसाधने निरतत्वात्। सुखसन्तानसिद्ध्यर्थम्-सुखस्य-प्रणामजन्यनिर्विघ्नताप्राप्तबुद्धिस्थिरतादिरूपस्य ग्रन्थनिर्माणधूर्वहस्य सन्तानः-परम्परा, तस्य सिद्धये-प्राप्तये। नत्वा—प्रणम्य। पूर्वकालभवेयं क्रिया। उत्तरकालभवा प्रधानक्रिया च दूरं तृतीयपद्ये 'क्रियते' इति स्थिता ॥ १ ॥

हिं० टी०—ब्रह्मा और विष्णु से पूजित, पार्वती और गणेश सहित लोककल्याणकारी शङ्कर भगवान् को निरन्तर सुख की प्राप्ति के लिए प्रणाम करके ('वृत्तरत्नाकर नामक छन्दोग्रन्थ को केदार भट्ट निर्माण करता है' इस प्रकार तीसरे श्लोक से अन्वय होगा) ॥ १ ॥

ग्रन्थकर्तुः परिचयः—

वेदार्थशैवशास्त्रज्ञः पव्येकोऽभूद् द्विजोत्तमः।
तस्य पुत्रोऽस्ति केदारः शिवपादार्चने रतः ॥ २ ॥

सं० टी० —स्वपरिचयं प्रस्तौति—वेदार्थेत्यादिना। वेदार्थशैवशास्त्रज्ञः-वेदानामृगादीनामर्थं प्रतिपाद्यविषयं, शैवशास्त्राणि—शिवोपासनाप्रतिपादकानि कद्रयःमलादितन्त्राणि जानातीत्येवम्प्रकारः, पव्येकः—एतन्नामकः, द्विजोत्तमः-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्विजेषु ब्राह्मणेषु, उत्तमः श्रेष्ठः, कुलीनताऽनेन द्योत्यते। अभूत्। तस्य पुत्रः केदारः एतन्नामा, शिवपादार्चने रतः—शिवचरणाराधनपरः, शिवभक्त इत्यर्थः। एतेन कुलस्येष्टदेवता शिव इति सूच्यते। अस्ति ॥ २ ॥

हिं० टी०—वेदार्थ और शैव शास्त्र का विद्वान् पव्येक नामक श्रेष्ठ ब्राह्मण हुआ। उस पव्येक का पुत्र शिवभक्त केदार है ॥ २ ॥

ग्रन्थस्यानुबन्धचतुष्टयम्—

तेनेदं क्रियते छन्दो लक्ष्यलक्षणसंयुतम्।
वृत्तरत्नाकरं नाम बालानां सुखबुद्धये[1] ॥ ३ ॥

सं० टी०—स्वग्रन्थविषयप्रयोजनप्रतिपिपादयिषयाह—तेनेदमिति। तेन केदारेण, अन्यपुरुषनिर्देशो नम्रतासूचनाय, यद्वा—मयेत्यध्याहार्य्यम्। बालानाम्—अधीतव्याकरणानामनधीतछन्दःशास्त्राणाम्, यद्विषयकं ज्ञानं यस्य नास्ति, स तद्विषये बाल एव, एतेन ग्रन्थपठनाधिकारी उक्तः। सुखम्—यथा स्यात्तथेति क्रियाविशेषणम्, अथवा—सुखेन—सुखपूर्वसाधकेन सरलेन उपायेन, बुद्धये—बोधाय, 'सिद्धये' इति पाठे प्राप्तये इत्यर्थः। प्राप्तिश्च बोधरूपैव। एतेनाऽन्यग्रन्थेभ्योऽस्य सरलतारूपं वैशिष्ट्यं प्रतिपादितम्। छन्दोबोधश्च प्रयोजनमित्यपि निवेदितम्। लक्ष्यलक्षणसंयुतम्—लक्ष्यमुदाहरणं च, लक्षणं नियमप्रतिपादकं सूत्रं चेति लक्ष्यलक्षणे, ताभ्यां संयुतम्-सम्यक्प्रकारेण संबद्धम्, लक्ष्यलक्षणयोः सम्यग् मेलनं च तयोरभिन्नरूपत्वम् तदेव लक्षणं तदेव लक्ष्यम्, एतच्चात्र विहितं वर्तते। अन्यत्र तु नैतदिति ग्रन्थोऽयं सर्वान् प्राक्तनान् ग्रन्थानतिशेते, अत एव चास्मात् सुखेन सरलोपायेन वा—छन्दोबोधः। वृत्तरत्नाकरं नाम—वृत्तानि आर्यादीनि, तान्येव रत्नानि तेषामाकरः खनिः समूहो वा यत्र तदिति व्यधिकरणपदा बहुव्रीहिः। अथवा तत्प्रतिपादकत्वात् ग्रन्थेऽपि तच्छब्दोपचारः, एतदन्वर्थनाम्ना नाप-प्रसिद्धम्, नामेत्यव्ययं प्रसिद्धौ, इदम्—बुद्धिस्थम्, बुद्धिस्थस्य सन्निकृष्टबोधकात् 'इदम्' पदात् परामर्शः छन्दः—छन्दः प्रतिपादकं शास्त्रम्, क्रियते निर्मीयते॥

हिं० टी०—वही—केदार अर्थात् मैं—बालकों को सुख से बोध कराने के

---

१. 'सिद्धये' इत्यपि क्वचित् पाठः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उद्देश्य से लक्ष्य और लक्षणों से संयुक्त 'वृत्तरत्नाकर' नामक छन्दोग्रन्थ का निर्माण करता है ॥ ३ ॥

स्वग्रन्थस्य सन्मूलकत्वप्रतिपादनम्—

पिङ्गलादिभिराचार्यैर्यदुक्तं लौकिकं द्विधा।
मात्रावर्णविभेदेन छन्दस्तदिह कथ्यते ॥ ४ ॥

सं० टी०—अथ सामान्येन ग्रन्थकरणं प्रतिज्ञाय स्वकल्पितताऽऽशङ्कासंभावितं श्रोतृजनकरिष्यमाणानादरं निवारयितुं पूर्वाचार्योक्तिमूलकत्वमस्य प्रतिपिपादयिषुः प्रतिपाद्यविषयं च विशेषतो निरूपयितुमाह—पिङ्गलादिभिरिति। पिङ्गलादिभिः—पिङ्गलः सूत्रकारः, आदिपदाद् भाष्यकारादयः, तैः, आचार्यैः—छन्दःशास्त्रप्रवर्तकैर्विद्वद्धौरेयैः, यत् लौकिकम्—लोकभवम्, लोके प्रयुज्यमानं, छन्दः, मात्रावर्णविभेदन—आर्यादि मात्राच्छन्दः इदम्, श्रीः इत्यादि च वर्णच्छन्द इदमिति भेदेन द्विधा द्विप्रकारकमुक्तम्। तत् छन्दः, इह अस्मिन् ग्रन्थे, कथ्यते—प्रतिपाद्यते। एतेनास्य सन्मूलकतासिद्धेरुपादेयताऽभिव्यज्यते। किञ्च—लौकिकच्छन्दांस्येवात्र प्रतिपादयिष्यन्ते इति लोके प्रयुज्यमानानां छन्दसां लोके पदे पदेऽपेक्ष्यमाणत्वेनानुपेक्षणीयताऽप्यस्य सिद्ध्यति। वृत्तौ तु छन्दसस्त्रैविध्यमुक्तम्। तद्यथा—

'आदौ तावद् गणच्छन्दो मात्राच्छन्दस्ततः परम्।
तृतीयमक्षरच्छन्दश्छन्दस्त्रेधा तु लौकिकम्।' इति।

तत्र आर्यादीनि गणच्छन्दांसि, वैतालीयादीनि मात्रिकच्छन्दांसि, वर्णक्रमवन्ति प्रमाणिकाप्रभृतीन्यक्षरच्छन्दांसि ॥ ४ ॥

हिं० टी०—छन्दः शास्त्र के सूत्र तथा भाष्यकार पिङ्गलादि आचार्यों ने जिस लौकिक छन्द को मात्रा और वर्ण भेद से दो प्रकार का कहा है उसी का निरूपण यहाँ किया जाता है ॥ ४ ॥

ग्रन्थपरिमाणम्—

षडध्यायनिबद्धस्य छन्दसोऽस्य परिस्फुटम्।
प्रमाणमिह[1] विज्ञेयं षट्त्रिंशदधिकं शतम् ॥ ५ ॥

१—'अपि' इति पाठः क्वचित्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—ग्रन्थकर्तृकर्त्तृसंभावितप्रक्षेपपरिजिहीर्षया ग्रन्थस्य परिमाणमाह—षडध्यायेति । षडध्यायनिबद्धस्य—षड्भिरध्यायैः प्रकरणैः निबद्धस्य निर्मितस्य, अस्य छन्दसः छन्दःप्रतिपादकस्य वृत्तरत्नाकरनाम्नो ग्रन्थस्य, परिस्फुटम्—परि समन्तात् स्फुटं प्रकटम्, सर्वत्र लोके प्रचलितं प्रमाणम्, षट्त्रिंशदधिकं शतं १३६ विज्ञेयम् । ग्रन्थपाठगणनायां हि लोके द्वात्रिंशदक्षरात्मकस्यानुष्टुप्छन्दसः परिमाणमेव गृह्यते । अत इहापि तदेवानुसृत्य गणनायां कृतायां परिमाणमत्यल्पीयः १३६ अनुष्टुप्छन्दोमितमिति बोध्यम् । एतेनाल्पीयः परिमाणवतोऽप्यस्य प्रसिद्धसकलच्छन्दोबोधनक्षमतया साधीयसी उपयोगिताऽस्येतरेभ्यो विस्तरवद्भ्यः प्रबन्धेभ्य इति व्यज्यते ॥ ५ ॥

हिं० टी०—इस छः अध्यायों वाले वृत्तरत्नाकर के सम्पूर्ण पाठ का परिमाण १३६ श्लोक समझने चाहिये ।

किसी ग्रन्थ के पाठ का परिमाण जानने के लिये बत्तीस से सारे अक्षरों की संख्या को विभाजित किया जाता है । जितना लब्धि आता है उतना ग्रन्थ के पाठ का परिमाण समझा जाता है । इस रीति से प्रायः सभी ग्रन्थों का पाठ परिमाण निश्चित किया जा सकता है चाहे वे गद्य में हों अथवा पद्य में । पद्य में भी किसी छन्द में हों, ३२ अक्षरों के अनुष्टुप् छन्द को साधारण मापक मान लेने से निर्णय करने में सरलता हो जाती है । वृत्तरत्नाकर में कुल ४३५२ अक्षर हैं जो कि भिन्न भिन्न छन्दों में हैं । अनुष्टुप् के माध्यम से निर्णय हो जाता है कि कुल १३६ पद्य इसमें हैं । इतने थोड़े पाठ से प्रायः सब प्रसिद्ध छन्दों का बोध इस से हो जाता है इस लिये यह ग्रन्थ अन्य बहुत विस्तृत ग्रन्थों की अपेक्षा उत्तम है और उपादेय है ॥ ५ ॥

छन्दःशास्त्रस्य दशाक्षराणि—

म्यरस्तजभ्नगैर्लान्तैरेभिर्दशभिरक्षरैः ।
समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना ॥ ६ ॥

सं० टी०—अथात्र छन्दःशास्त्रे परमोपयोगिनो मादीन् गणान् सकलवाग्व्यापितया प्रशंसन् लक्षणकथनार्थमुद्दिशति—म्यरस्तेत्यादिना । म्यरस्तजभ्नगैः—मगण—यगण—रगण—सगण—तगण—जगण—भगण — नगण — गुरुरूपैः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लान्तैः—लघुरन्ते येषां तैः, लघुसहितैरित्यर्थः। एभिः, दशभिः—गणाष्टकगुरुलघुरूपैः अक्षरैः, विष्णुना—निखिलब्रह्माण्डव्यापिना परमेश्वरेण, त्रैलोक्यमिव—त्रिलोकी एव त्रैलोक्यम्, स्वार्थे ष्यञ्, त्रिभुवनम्, तद्वत्, समस्तम्—सकलम्, इदं विशेषणं त्रैलोक्येऽप्यन्वेति। वाङ्मयम्—वाग्जालम्, व्याप्तम्—अस्तीति गणानां स्वरूपमग्रिमे पद्ये वक्ष्यते ॥ ६ ॥

हिं० टी०—जिस प्रकार यह सम्पूर्ण त्रिलोकी (ब्रह्माण्ड) विष्णु से व्याप्त है उसी प्रकार गुरु लघु तथा मगण, यगण, रगण, सगण, तगण, जगण, भगण, और नगण इन आठ गण रूप दश अक्षरों से सारा शब्द-जाल व्याप्त है।

गुरु लघु के एक विशेष क्रम से बने हुए तीन तीन के समूह के रूप में इन आठ गणों की रचना हुई। इनके अतिरिक्त और कोई रूप हो नहीं सकता। इस लिये प्रत्येक शब्द इन गणों में से किसी-न-किसी से युक्त होगा। यदि तीन का समूह बनाने के पश्चात् दो या एक अक्षर शेष हों तो वह या तो गुरु या लघु रूप होंगे। जैसे 'सीताराम' यह चार अक्षर का शब्द है इसके पहले तीन अक्षर गुरु हैं अतः मगण है और शेष 'म' लघु है। इस प्रकार सभी शब्दसंसार इन दश अक्षरों के भीतर आ जाता है। यही इसका सारे वाङ्मय को व्याप्त करना है ॥ ६ ॥

गणलक्षणानि—

> सर्वगुर्मो मुखान्तलौ यरावन्तगलौ सतौ।
> ग्मध्याद्यौ ज्भौ त्रिलो नोऽष्टौ भवन्त्यत्र गणास्त्रिकाः ॥ ७ ॥

सं० टी०—गणलक्षणानि क्रमेणान्वाचष्टे—सर्वगुर्मो इत्यादिना। अत्र—अस्मिन्, छन्दःशास्त्रे इत्यर्थः, त्रिकाः—त्रिवर्णसमूहरूपाः, अष्टौ गणाः भवन्ति। तेषां स्वरूपं पृथक्तया प्रतिपाद्यते—सर्वगुः—सर्वे गवो गुरवो यत्र स सर्वगुरुः, मः—मगणः, कथ्यते इति शेषः। एवमुत्तरत्राप्यवगन्तव्यम्। 'नामैकदेशे नामग्रहणम्' इति न्यायात् गुशब्दो गुरुवाची। एवं लशब्दो लघुवाची। लाघवार्थमेकदेशग्रहणमिति विज्ञेयम्। मुखान्तलौ—मुखे आदौ, अन्तः—मध्ये, लः—लघुर्ययोस्तौ क्रमेण यरौ—यगणरगणौ, कथ्येते इति भवत इति वा शेषः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तगलौ—अन्ते गः—गुरुः, लः—लघुर्ययोस्तौ क्रमेण सतौ—सगणतगणौ, पूर्ववद्धेषयोजना। ग्—गुरुः, मध्यश्च आद्यश्च ययोस्तौ क्रमेण जभौ—जगणभगणौ। त्रिलः—त्रयः लघवो यस्य सः, नः—नगणः, भवतीति कथ्यते इति वा शेषः। एतेषां प्रस्तारलेखने प्रयुज्यमानं चिह्नमयं संकेतितं स्वरूपमधस्तात्प्रदर्श्यते। 'ग्वक्रो ज्ञेयोऽन्यो मात्रिको लृजुः' इत्यग्रे वक्ष्यमाणप्रकारेण वक्रः 'ऽ' इत्येवंरूपो गुरुः ऋजुः सरलः '।' इत्येवंरूपश्च लघुर्भवति। एतद्रेखानुसारेण कोष्ठके गणस्वरूपाणि प्रदर्श्यन्ते—

मगणः	यगणः	रगणः	सगणः	तगणः	जगणः	भगणः	नगणः
ऽऽऽ	।ऽऽ	ऽ।ऽ	।।ऽ	ऽऽ।	।ऽ।	ऽ।।	।।।
सर्वगुरुः	आदिलघुः	मध्यलघुः	अन्तगुरुः	अन्तलघुः	मध्यगुरुः	आदिगुरुः	सर्वलघुः

गणलक्षणानि छन्दोमञ्जर्यां सरलतमरूपेण प्रतिपादितानि। तद्यथा—

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः॥

गणानां देवतादिविषयक आवश्यकोऽपि विचारो विस्तरभियोपेक्षित इह। अग्रे परिशिष्टे दास्यते॥ ७॥

हिं० टी०—इस छन्दः शास्त्र में तीन वर्णों के समूह को गण कहते हैं। ये गण आठ हैं। इनके नाम और लक्षण इस प्रकार हैं—सर्वगुरु मगण, आदिलघु यगण, मध्यलघु रगण, अन्तगुरु सगण, अन्तलघु तगण, मध्यगुरु जगण, आदिगुरु भगण और त्रिलघु नगण।

छन्दःप्रभाकर में इन गणों का स्वरूप सरलता से बताया गया है—

आदि मध्य अवसान, 'यरता' में लघु जानिये।
'भजसा' गुरु प्रमान, 'मन' तिहुं गुरु लघु मानिये।

मात्रिकच्छन्दोगणाः—

ज्ञेयाः सर्वान्तमध्यादिगुरवोऽत्र चतुष्कलाः।
गणाश्चतुर्लघूपेताः पञ्चार्यादिषु संस्थिताः॥ ८॥

सं० टी०—संप्रति मात्राच्छन्दःसूपयोगिनो गणानाचष्टे—ज्ञेया इति। अत्र आर्यादिषु मात्राच्छन्दःसु, संस्थिताः, प्रयुक्ता इत्यर्थः, चतुष्कलाः—चतस्रः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गणाः स्थिताः सन्तु ते, चतुर्मात्राः, पञ्च गणा ज्ञेयाः। तेषां स्वरूपमुच्यते— सर्वान्तमध्यादिगुरवः—सर्वत्र, अन्ते, मध्ये, आदौ च गुरुर्येषां ते तथाभूताः, सर्वगुरुः ऽऽ, अन्तगुरुः ।।ऽ मध्यगुरुः ।ऽ।, आदिगुरुः ऽ।। इत्येवं रूपाः चत्वारः; चतुर्लघूपेताः—चत्वारो लघवो यत्र तेन सर्वलघुनेत्यर्थः उपेताः—सहिताः, पञ्चमो गणः ।।।। सर्वलघुरूप इति यावत्। गुरोर्द्वे मात्रे लघोरेकेति ज्ञेयम्॥ ८॥

हिं० टी०—यहाँ आर्यादि मात्रिक छन्दो में चतुर्मात्रिक पांच गण होते हैं उनका स्वरूप इस प्रकार है—सर्वगुरु ऽऽ, अन्तगुरु ।।ऽ, मध्यगुरु ।ऽ।, आदिगुरु ऽ।।, और सर्वलघु ।।।।,

यहाँ पर इतना ध्यान रहना चाहिये कि लघु की एक और गुरु की दो मात्राएं होती हैं॥ ८॥

गुरुलघुलक्षणम्—

सानुस्वारो विसर्गान्तो दीर्घो युक्तपरश्च यः।
वा पादान्ते त्वसौ ग्वक्रो ज्ञेयोऽन्यो मात्रिको लृजुः॥ ९॥

सं० टी०—गणान् लक्षयित्वा तत्प्राणभूतौ गुरुलघू लक्षयति—सानुस्वार इति। सानुस्वारः—अनुस्वारेण सह वर्तते इति सः, अनुस्वारयुक्तः कं खं इत्यादि। विसर्गान्तः—विसर्गः विसर्जनीयोऽन्ते यस्य सः कः खः इत्यादि। दीर्घः—दीर्घसंज्ञकः द्विमात्रिक इत्यर्थः, आ का ऊ कू इत्यादि, एतत्प्लुतस्याप्युपलक्षणम्। युक्तपरः युक्तः संयोगी परो यस्य सः, संयोगश्च 'हलोऽनन्तराः संयोगः, इति पाणिनिनिरूपितः स्वराव्यवहितः व्यञ्जनद्वयसमुदायः। संयोगात्पूर्वो ह्रस्वः, लघुरिति यावत्, तथा सत्यमित्यत्र 'त्य' इति संयोगात्पूर्वः सकारो ह्रस्वोऽपि गुरुर्भवति। एवमन्यत्रापि बोध्यम्। युक्तपरश्चेति व्यञ्जनोपध्मानीयजिह्वामूलीयपराणामप्युपलक्षणम्। अतः—'तनुवाग्विभवोऽपि सन्' इत्यादौ सकारस्य, 'मन्दः कवियशः प्रार्थी' (रघु० १, ३, १,) इत्यादौ च जिह्वामूलीयोपध्मानीयपक्षे च तत्पूर्वयोर्दकारशकारयोर्गुरुत्वं सिद्धं भवति। एवम्भूतो यो वर्णः, असौ गः—गुरुः, भवतीति शेषः, पादान्ते तु—पादस्य संपूर्णछन्दसश्चतुर्थांशरूपस्य 'पादश्चतुर्थोऽशः' इत्यग्रे वक्ष्यमाणलक्षणस्य, अन्ते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समाप्तौ तु असौ लघुः वा—विकल्पेन, गुरुर्भवति इति पूर्ववदन्वयः। यथा—'उपेन्द्रवज्रादपि दारुणोऽसि' इत्यत्र। इदमेकादशाक्षरात्मकस्योपेन्द्रवज्रानाम्नश्छन्दसश्चरणम्। अस्यान्ते 'उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ' इति वक्ष्यमाणलक्षणाद् गुरुरपेक्षितः अत्र च 'सि' इति मात्रिकत्वाल्लघुरिति छन्दोभङ्गसंभावनायामेतन्नियमानुसारं पादान्तस्थितत्वाल्लघोरपि गुरुत्वम्। अपि चासौ ग्—गुरुः वक्रः—'ऽ'इत्येवं कुटिलचिह्नरूपो ज्ञेयः। प्रस्तारादिषु तदपेक्ष्यते। अन्यः—संयोगपरपादान्तस्थभिन्नः, मात्रिकः—एकमात्रिक, ह्रस्व इत्यर्थः, ल्—लघुः ज्ञेयः। ऋजुः—सरलः, सरलरेखाकारः '।' इत्येवंरूपश्च स भवति। अस्यापि प्रयोजनं प्रस्तारादिलेखने बोध्यम्॥ ९॥

हिं० टी०—अनुस्वारयुक्त, विसर्ग जिसके अन्त में हो वह और दीर्घ अक्षर गुरु होता है। संयोग से पूर्व का लघुवर्ण भी गुरु होता है। पाद—छन्द के चतुर्थभाग—के अन्त का लघु विकल्प से (लघु से प्रयोजन हो तो लघु और गुरु से हो तो गुरु) गुरु समझना चाहिये। प्रस्तार आदि के लिये गुरु का 'ऽ' इस प्रकार का टेढ़ा चिह्न है। इनसे-संयोगपरक और पादान्तस्थ से-भिन्न ह्रस्व वर्ण लघु जानना चाहिये। प्रस्तारादि के लिये लघु का '।' इस प्रकार का सरल चिह्न है॥ ९॥

क्रमसंयोगनिरूपणम्—

पादादाविह वर्णस्य संयोगः क्रमसंज्ञकः।
पुरःस्थितेन तेन स्याल्लघुतापि क्वचिद् गुरोः॥ १०॥

सं० टी०—संयोगपरस्य विषये क्वचिदपवादमाह—पादादाविति। इह—छन्दःशास्त्रे, पादादौ—चरणस्य प्रारम्भे, स्थित इति शेषः। वर्णस्य व्यञ्जनरूपस्य वर्णपदेन व्यञ्जनमेवेह गृह्यते, तस्यैव संयोगसंज्ञकत्वात्। संयोगः—स्वरव्यवधानशून्यतया व्यञ्जनयोः सम्मेलनम्। क्रमसंज्ञकः—एतन्नामकः, भवतीति शेषः। तेन-पादादौ विद्यमानेन संयोगेन पुरःस्थितेन—अग्रे वर्तमानेन, हेतुभूतेन, हेतावेषा तृतीया। गुरोरपि—गुरुसंज्ञकस्यापि पादादिस्थसंयोगहेतुकस्य गुरोरित्यर्थः। क्वचित्—यत्र अपेक्षा स्यात्तत्र, लघुता—लघुत्वम्, भवतीति शेषः॥ १०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—चरण के प्रारम्भ में विद्यमान संयोग—दो व्यञ्जनों का स्वर के व्यवधान रहित होकर समीप रहना—को छन्दः शास्त्र में क्रम संज्ञा होती है। उस क्रम संयोग के आगे रहने हुए उससे पूर्व लघु की जो पूर्व नियमानुसार गुरु संज्ञा हो जाती है उस गुरु को भी आवश्यकतानुसार कहीं कहीं लघु समझना चाहिये ॥ १० ॥

क्रमसंयोगोदाहरणम्—

तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि च दधीनि ।
अल्पव्ययेन सुन्दरि ! ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति ॥ ११ ॥

सं० टी०—क्रमसंयोगमुदाहरति—तरुणमित्यादिना । तथाहि—इदमार्या-च्छन्दः, आर्यायाः प्रथमे तृतीये च चरणे द्वादशमात्रा भवन्ति । इह तृतीये चरणे 'रि' इत्यन्तिमो वर्णो यदि चतुर्थपादादिस्थ 'ग्रा' इति संयोगवतः पूर्ववर्तित्वेन गुरुर्भवेत्तर्हि मात्रैकाऽधिका भवति । अतश्चतुर्थचरणादिस्थ 'ग्रा' इति संयोगस्य क्रमसंज्ञा, तत्पूर्वकस्य च 'रि' इति लघोर्न गुरुत्वम् । अत एव छन्दः पूर्तिर्जायते ।

अयं च विकल्पः क्वचिदित्युक्तेर्व्यवस्थितः । क्रमसंज्ञके संयोगे पुरःस्थिते लघोर्यथापेक्षं क्वचिद् गुरुतैव भवति क्वचिच्च लघुतैवेति व्यवस्था । तरुणमिति पद्ये 'सुन्दरि' इत्यत्र लघुतैव ।

गुणिनामपि निजरूपप्रतिपत्तिः परत एव सम्भवति ।
स्वमहिमदर्शनमक्ष्णोर्मुकुरतले जायते यस्मात् ॥

इत्यत्र च 'प्रतिपत्ति' पदस्थ 'प्र' इति क्रमसंयोगे पुरःस्थिते पूर्वस्य 'रूप' शब्दान्तस्थ 'प' इत्यस्य लघोर्गुरुतैव । एवमेवान्यत्रापि बोध्यम् ।

अस्यार्थस्तावन्निरूप्यते । ग्राम्यनागरवरयोर्ग्राम्ये साभिलाषां सुन्दरीं विदग्धा सखी निन्दागर्भस्तुत्या ततो निवारयन्ती कथयति—हे सुन्दरि ! सौन्दर्य-ज्ञानमिज्ञं ग्राम्यं वृतवत्यास्तव सौन्दर्यं निष्फलमेव भविष्यतीति संबोधनपदेन बोध्यते । ग्राम्यजनो ग्रामीणो जनः, अल्पव्ययेन—सुलभतया स्वल्पव्ययेन, मिष्टम्—मधुरं भोजनम्, अश्नाति भुङ्क्ते । किं तदित्याह—तरुणम्—अभिनवं कोमलम्, सर्षपशाकम्, नवौदनम्—नवानां तण्डुलानामोदनम् भक्तम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पिच्छिलानि—घनीभूतानि दधीनीति । स्वल्पधनो मधुरामासभोजी ग्राम्यजनोऽविदग्धोऽयम् । त्वं तु सुन्दरी, अतोऽविदग्धं ग्राम्यं परित्यज्य विविधरतिरसाभिज्ञं विदग्धं नागरं भजस्वेति व्यज्यते ॥ ११ ॥

हिं० टी०—हे सुन्दरि ! ग्रामीण मनुष्य थोड़े व्यय से मधुर भोजन करता है—वह मधुर भोजन यह है—ताजा कोमल सरसों का साग, नये चावलों का भात और गाढ़ा मलाई वाला दही ।

ग्रामीण और शहरी वरों में से ग्रामीण को पसन्द करने वाली सुन्दरी को प्रशंसारूप से ग्रामीण की निन्दा के द्वारा उसके हटाने के लिये विदग्ध सखी की उक्ति है । उसका तात्पर्य यह है कि ग्रामीण के पास न तो बहुत धन व्यय करने को होता है और जो कुछ वह मीठा समझ कर भोजन करता है वह वास्तव में मीठा नहीं । इस लिये तुम विदग्ध नागरिक को अपना हृदयेश्वर बनाओ ।

इस पद्य के चौथे चरण के आदि में 'ग्रा' यह संयोग है । इसकी क्रम संज्ञा है । इसके पूर्व लघु 'रि' वर्ण को साधारण नियम के अनुसार गुरु मानने पर एक मात्रा बढ़ जाती है । यह आर्या छन्द है । इसके तीसरे चरण में बारह मात्रायें होनी चाहियें । इस लिये आवश्यकतानुसार यहाँ 'रि' को साधारण नियम से गुरु होते हुए भी लघु मान लिया जाता है ॥११॥

अब्धिप्रभृतिसंज्ञाः—

अब्धिभूतरसादीनां ज्ञेयाः संज्ञास्तु लोकतः ।

सं० टी०—अन्यशास्त्रपरिभाषिता अपि संज्ञा लोकप्रसिद्धा अत्र व्यवहृताः, ताश्च तत एव ज्ञेया इत्याह—अब्धिभूतेत्यादिना । लोकतः—लोके प्रसिद्धत्वात् लोकव्यवहारतः, अब्धिप्रभृतीनाम्, संज्ञाः—संक्षेपेण संज्ञया ज्ञायन्ते इति संज्ञाः, संज्ञिन इति भावः, चतुष्ट्वादिसंख्या इति यावत्, ज्ञेयाः, यतिनियमेषु इति तात्पर्यम् । तथाहि—अब्धयः—चत्वारः, भूतानि—पञ्च, रसाः—षट् । आदिपदात् अश्वा मुनयश्च सप्त, वसवो नागाश्च अष्टौ, ग्रहा अङ्काश्च नव, दिशो दश, रुद्रा एकादश, आदित्या द्वादश, इत्येवमादि बोध्यम् । अब्ध्यादिपदानां पर्याया अपि ग्राह्याः तेन सागरसमुद्रादिशब्दा अपि चतुष्टसंख्याविबोधकाः । एवमन्येषामपि पर्यायेष्वपि ज्ञेयम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—अब्धि, भूत, और रस आदि संज्ञाओं का ज्ञान लोक-व्यवहार से प्राप्त कर लेना चाहिये

अब्धि आदि शब्दों का प्रयोग ज्यौतिष आदि शास्त्रों में संख्या बोध कराने के लिये होता है। उनका लोक में भी व्यवहार होता है। अतः लोक प्रसिद्ध होने के कारण यहाँ उनसे काम लिया गया है और इसी लिये उनकी परिभाषा यहाँ नहीं बतलाई गई। उनका ज्ञान लोक से ही अथवा ज्यौतिष आदि शास्त्रों से कर लेना चाहिये। बारह संख्या तक के बोधक आवश्यक सांकेतिक कुछ शब्द कोष्ठक में दिये जाते हैं। इसके आगे की संज्ञाओं की यहाँ आवश्यकता अधिक न पड़ेगी। इसलिये छोड़ दिया गया है।

संख्याबोधक सांकेतिक शब्दावलि।

१ चन्द्रमा, पृथ्वी।	७ अश्व, मुनि, स्वर, लोक।
२ बाहु, पक्ष, नेत्र।	८ वसु, सिद्धि, याम।
३ गुण, राम, ताप, काल, अग्नि।	९ भक्ति, निधि, अंक, ग्रह, द्रव्य।
४ वेद, वर्ण, फल, अवस्था, युग, आश्रम, धाम।	१० दिशा, अवतार।
५ शर, बाण, इन्द्रिय, भूत, तत्त्व।	११ शिव।
६ शास्त्र, राग, रस, ऋतु।	१२ रवि, राशि, मास।

इनके स्थान में पर्यायवाची शब्दों का भी प्रयोग होता है।

पादलक्षणम्—

ज्ञेयः पादश्चतुर्थोंऽशः,

पादसंज्ञामाचष्टे—ज्ञेयः पाद इत्यादिना। चतुर्थः अंशो भागः, छन्दःशास्त्रविषयत्वात् छन्दस एव चतुर्थो भागः, पादः—पादसंज्ञको ज्ञेयः। यत्र पाद-व्यवहारस्तत्र तस्य छन्दसश्चतुर्थो भागो बोद्धव्य इत्यर्थः। पादशब्दः स्वपर्यायाणामङ्घ्रिचरणादिशब्दानामप्युपलक्षणम्। अतोऽङ्घ्र्यादिशब्दैरपि छन्दसश्चतुर्थ एव भागो ग्राह्यः। अंशश्च समचतुर्थांशो नात्राभिप्रेतः, अपि तु यावान् यत्रोक्तः। तथा चार्धसमानां विषमाणामपि छन्दसां पादाः संगृहीता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भवन्ति । अपि चेदं प्रायिकम्, गाथासु निषट्चरणवतीषु तृतीयषष्ठभागस्यापि पादशब्देन ग्रहणात् । तथा चाग्रे वक्ष्यते–'शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः' इति । (वृत्त० अ० १–१८)

हिं० टी०—छन्द के चौथे भाग को पाद कहते हैं । अर्थात् जहाँ पाद शब्द का व्यवहार हो वहाँ छन्द का चौथा भाग समझना चाहिये । पाद शब्द के पर्यायवाची अङ्घ्रि चरण आदि शब्दों का भी प्रयोग पूर्वोक्त अर्थ के लिये होता है ।

चौथे भाग से सम चतुर्थ भाग ही न समझना चाहिये अपि तु जहाँ जितना कहा हो उतने का ही ग्रहण करना चाहिये । तभी अर्द्धसम और विषम छन्दों के–जिनके चरण बराबर नहीं होते–पादों का भी संग्रह हो जाता है । यह भी ध्यान रहे कि यह प्रायिक बात है सामान्य नहीं । क्योंकि गाथाछन्दों में तीन और छः पाद भी होते हैं । सामान्य नियम मानने पर उनको पाद कहा न जा सकेगा ।

यतिलक्षणम्—

यतिर्विच्छेदसंज्ञिता ॥ १२ ॥

सं० टी०—यतिं लक्षयति–यतिरित्यादिना । यतिः–यतिशब्दः, विच्छेदः संज्ञी बोध्यो यस्याः सा । विच्छेदस्य यतिसंज्ञेति भावः । 'संज्ञिता' इति पाठे यतिशब्दसामानाधिकरण्येन स्त्रीलिङ्गत्वं बोध्यम् 'संज्ञित' इति पाठे विच्छेदे विरामे, संज्ञितः परिभाषितः इति समन्वयः कार्यः । इयं यतिश्छन्दोलक्षणवाक्यपठितेषु तृतीयान्तेषु अब्ध्यादिनिर्देशेषूपतिष्ठते । तत्र च–अब्ध्यादिसङ्ख्येष्वक्षरेषु यतिः स्यादित्यर्थः सम्पद्यते । तद्यथा–'रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी' इति शिखरिणीलक्षणे । 'रसैः' 'रुद्रैः' इति पदद्वयस्य तृतीयान्ततया निर्देशः । अत्र यतिरुपतिष्ठते, रसैः–रसाः षट्, षष्ठे वर्णे इत्यर्थः, रुद्रैः–रुद्रा एकादश, एकादशे वर्णे च यतिर्भवतीति फलति । 'छिन्ना' इति पदं यतिमेवान्वाचष्टे । शार्दूलविक्रीडितलक्षणे 'सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्' इत्यत्र तु नास्ति 'छिन्ना' इतिवत् यतिसूचकं किमपि पदम्, केवलेन तृतीयान्तनिर्देशेनैव यतेर्निर्वाहो भवति । यतिश्च

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रुतिसौकर्यार्था तत्र तत्र नियतस्थानेषु कार्या। यतिनियमस्थानविषयेऽपेक्षितं बहुवक्तव्यं विस्तरभिया त्यज्यते। केवलं सर्वसामान्यमुच्यते यत्—यतिः पादान्ते सर्वत्र भवति। श्लोकार्धे तु अवश्यं भवति। तथा चोक्तमभियुक्तैः—'यतिः सर्वत्र भवति श्लोकार्धे तु विशेषतः' इति। यतिनियमस्थाने हि पदसमाप्तिरवश्यमपेक्षिता, अन्यथा श्रुतिसौकर्यरूपं प्रयोजनं भज्यते, वैरस्यं चापद्यते। यत्र च वैरस्यं न भवेत्तत्र तु न दोषप्रसङ्गः। उक्तं च कविकल्पलतायाम्—

एवं यथा यथोद्वेगः सुधियां नोपजायते।
तथा तथा मधुरतानिमित्तं यतिरिष्यते॥ इति॥

भरतादयस्तु यतिं नेच्छन्ति, परं नैतदुचितम्, यतिनियमाऽपालने वैरस्यस्य सहृदयहृदयानुभवसिद्धतया तदपलापस्य कर्तुमशक्यत्वात्॥ १२॥

हिं० टी०—विराम को यति कहते हैं। श्लोक को पढ़ते हुए सुनने में माधुर्य लाने के लिये जो कहीं पर रुका जाता है उसे यति कहते हैं, जहाँ पर रुका जाता है उसे यतिस्थान कहते हैं।

छन्दों के लक्षणों में यतिस्थान भी बताये गये हैं। तृतीयान्तपद यतिस्थान का बोधक होता है। जैसे शार्दूलविक्रीडित के लक्षण में 'सूर्याश्वैः' इस तृतीयान्त पद के द्वारा बताया जाता है कि बारह और सात पर विश्राम करना चाहिये। यतिस्थान प्रत्येक छन्द के नियत हैं जो कि लक्षणों में तृतीयान्त पदों से बताये जायंगे। यति से लय में मधुरता आ जाती है, छन्द अधिक संगीतमय हो जाता है। पाद के अन्त में यति होती है और श्लोक के आधे पर भी। यह यति का सामान्य नियम है। यतिस्थान पर पद की समाप्ति हो जानी चाहिये नहीं तो सुनने में विरसता आ जाती है जैसे—'लभेत[1] सिकतासु तै—लमपि यत्नतः पीडयन्'—भर्तृहरि के इस पृथ्वी

---

१. पूरा पद्य इस प्रकार है—

लभेत सिकतासु तै—लमपि यत्नतः पीडयन्
पिबेच्च मृगतृष्णिका—सु सलिलं पिपासार्दितः।
कदाचिदपि पर्यटन् शशविषाणमासादयेत्
न तु प्रतिनिविष्टमू—र्खजनचित्तमाराधयेत्॥ नी० श० ५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छन्द के पद्य में आठ पर यतिस्थान है परन्तु आठवें वर्ण 'ते' पर पद समाप्त नहीं हुआ जो कि सुनने में उद्वेग पैदा कर देता है। भरतादि आचार्य यति के नियम को नहीं मानते परन्तु यह ठीक नहीं क्योंकि यतिनियम के पालन न करने से सुनने में विरसता आ जाती है सहृदय सुधी जनों का अनुभव इसमें साक्षी है ॥ १२ ॥

युगयुक्—संज्ञे

युक् समं विषमं चायुक् स्थानं सद्भिर्निगद्यते।

सं० टी०—समविषमयोः संज्ञान्तराण्याह—युक्समभित्यादिना। समं द्वितीयचतुर्थादि स्थानं 'युक्' इति सद्भिः छन्दःशास्त्राचार्यैः, निगद्यते-कथ्यते। विषमं च—प्रथमतृतीयादि स्थानं सद्भिः 'अयुक्' निगद्यते। चकारात् समस्य 'युग्म' 'अनोज' संज्ञे विषमस्य 'अयुग्म' 'ओज' संज्ञे इत्यादि बोध्यम्। आसां संज्ञानां प्रयोगः पादस्य समविषमताबोधनायैव प्रायो भवति।

हिं० टी०—छन्दः शास्त्र के आचार्य द्वितीय चतुर्थादि सम स्थानों को 'युक्' और प्रथम तृतीय आदि विषम स्थानों को 'अयुक्' कहते हैं।

इसी प्रकार सम को युग्म तथा अनोज और विषम को अयुग्म तथा ओज भी कहा गया है। इन संज्ञाओं का प्रयोग अधिकतर चरणों के लिए होता है।

वृत्तभेदकथनम्—

समसर्धसमं वृत्तं विषमं च तथापरम् ॥ १३ ॥

सं० टी०—वृत्तस्य भेदान्निरूपयति—समभित्यादि। समनामकम्, अर्ध-समनामकम्, विषमनामकं चेति वृत्तं त्रिधा इत्यर्थः।

इदमत्र बोध्यम्—पदैः पादाख्यैः घटितं पद्यम्। तद् द्विविधम्—जातिर्वृत्तं च। जातिर्नियतमात्रिका। वृत्तं नियतगुरुलघुविन्यासम्। तत्र जातिरार्यादि। वृत्तमुक्तादि। तदुक्तम्—

'पद्यं चतुष्पदं तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा।
वृत्तमक्षरसङ्ख्यातं जातिर्मात्राकृता भवेत् ॥' इति

परमत्र समविषमभेदकरणे वृत्तशब्दः छन्दःसामान्यपरः न केवलं वर्ण-वृत्तस्यैव समादयो भेदा भवन्ति, अपि तु मात्रिकवृत्तानामपि। निरूपितमत्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मात्रिकेष्वपि अर्धसमानि वैतालीयादीनि, समानि मात्रासमकादीनि, विषमाणि आर्यादीनि। अभिमतं चैतद्ग्रन्थकारस्यापि 'वृत्तरत्नाकरम्' इति ग्रन्थस्य नामकरणं कुर्वतः। नाम्नि वृत्तपदेन केवलवर्णवृत्ताश्रयत्वेऽत्र प्रदर्शितानां मात्रावृत्तानां संग्रहो न स्यात्। न केवलानि वर्णवृत्तानि अस्मिन् ग्रन्थे संलक्षितानि अपि तु मात्रावृत्तान्यपीति ॥ १३ ॥

हिं० टी०—वृत्त-छन्द-के सम, अर्द्धसम और विषम नाम के तीन भेद होते हैं।

यहाँ पर इतना और समझ लेना चाहिये कि पदों से अर्थात् पादों से रचित होने से छन्दोबद्ध को पद्य कहा जाता है। साधारणतया पद्य के चार चरण होते हैं। वह दो प्रकार का होता है। वृत्त और जातिभेद से। जाति आर्यादि मात्रिक छन्दों को और वृत्त प्रमाणिका आदि वर्णवृत्तों को कहते हैं। मात्रिक छन्दों में मात्राओं की संख्या नियत होती है और वर्णवृत्तों में वर्णों की संख्या और गुरु लघु का क्रम भी प्रायः नियत रहता है। इस पद्य में वृत्त शब्द का प्रयोग सामान्य छन्द के लिये हुआ है। क्योंकि सम आदि भेद न केवल वर्ण वृत्तों के ही, अपितु मात्रा छन्दों के भी होते हैं। मात्रिक विषम आर्यादि, अर्धसम वैतालीयादि सम मात्रासमक आदि छन्द प्रसिद्ध ही हैं। ग्रन्थकार का यही अभिप्राय प्रकट होता है। 'वृत्तरत्नाकर' नाम में भी वृत्त का अर्थ छन्दमात्र ही लिया जाना चाहिये। क्योंकि इसमें दोनों प्रकार के—मात्रिक तथा वर्णिक-छन्दों का निरूपण किया गया है। केवल वर्ण छन्दों का नहीं ॥ १३ ॥

समवृत्तलक्षणम्—

अङ्घ्रयो यस्य चत्वारस्तुल्यलक्षणलक्षिताः।
तच्छन्दःशास्त्रतत्त्वज्ञाः समं वृत्तं प्रचक्षते ॥१४॥

सं० टी०—समवृत्तं लक्षयति—अङ्घ्रय इत्यादिना। यस्य वृत्तस्य चत्वारोऽपि, अङ्घ्रयः-पादाः, तुल्यलक्षणलक्षिताः-तुल्येन समानेन, लक्षणेन लक्षिताः-युक्ताः, भवन्तीति शेषः। तत्-छन्दः, द्वितीयान्तमेतत् 'प्रचक्षते' इत्यस्याः क्रियायाः कर्म। छन्दःशास्त्रतत्त्वज्ञाः-छन्दःशास्त्रस्य तत्त्वं रहस्यं मर्म जानन्तीति ते। समं वृत्तं प्रचक्षते-वदन्ति। यथा मात्रिकेषु मात्रासमप्रकरणे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वर्णवृत्तेषु च तृतीयाध्याये निरूपितानि अचलधृत्यादीनि प्रमाणिकादीनि च ॥

हिं० टी०—जिस छन्द के चारों चरण समान लक्षण से युक्त हों उसको छन्दः शास्त्र के विद्वान् सम वृत्त कहते हैं।

जैसे मात्रिकों में मात्रिक प्रकरण में बतलाये हुए अचलधृति आदि और वर्णिकों में तृतीयाध्याय में बताये हुए प्रमाणिका आदि। इनके चारों चरण एक ही लक्षण के अनुसार बनते हैं ॥ १४ ॥

अर्धसमलक्षणम्—

प्रथमाङ्घ्रिसमो यस्य तृतीयश्चरणो भवेत्।
द्वितीयस्तुर्यवद् वृत्तं तदर्धसममुच्यते ॥ १५ ॥

सं० टी०—अर्धसमवृत्तं लक्षयति—प्रथमेत्यादिना। यस्य छन्दसः, तृतीयः, चरणः-पादः, प्रथमाङ्घ्रिसमः—प्रथमपादसदृशः, किञ्च—द्वितीयः, पाद इति भावः, तुर्यवत्—चतुर्थचरणसमः, भवेत्। तत् छन्दः, अर्धसमं वृत्तमुच्यते। अर्थात् यस्य छन्दसः, प्रथमतृतीयचरणौ द्वितीयचतुर्थौ च परस्परं समानौ भवेतां तदर्धसमं भवति। अर्धं समं यस्य तदर्धसममित्यन्वर्थेयं संज्ञा। अर्धसमानि मात्रिकेषु वैतालीयादीनि द्वितीयाध्याये वर्णवृत्तेषु चोपचित्रादीनि चतुर्थाध्याये निरूपयिष्यन्ते ॥ १५ ॥

हिं० टी०—जिस छन्द का तृतीय चरण प्रथम चरण के और द्वितीय चरण चतुर्थ चरण के समान हो उसे अर्धसम कहते हैं।

'अर्धसम' संज्ञा अन्वर्थ-सार्थक-है। क्योंकि प्रथम और तृतीय चरण तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण के एक समान होने से आधा भाग समान हो जाता है। इसके उदाहरण मात्रिकों में वैतालीय आदि द्वितीय अध्याय में और वर्णवृत्तों में उपचित्र आदि चतुर्थ अध्याय में बताये जायँगे ॥१५॥

विषमवृत्तलक्षणम्—

यस्य पादचतुष्केऽपि लक्ष्म भिन्नं परस्परम्।
तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदाः ॥ १६ ॥

सं० टी०—विषमवृत्तं लक्षयति—यस्येत्यादिना। यस्य छन्दसः, पादचतुष्केऽपि चतुर्ष्वपि चरणेषु, परस्परम्—अन्योन्यम्, लक्ष्म—लक्षणम्, भिन्नम्-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नैकसमं, भवेदिति शेषः। छन्दःशास्त्रविशारदाः—छन्दःशास्त्राचार्याः, तद् वृत्तं विषमम्, आहुः—वदन्ति। विगतं समं यस्मात् तद्विषममिति व्युत्पत्तेर्यच्छन्दो न समं नार्धसमं भवेत्तद् विषमं भवति। अयमाशयः—एकस्यापि पादस्य वैलक्षण्ये विषममुच्यते। तद्यथा—आर्यायाः प्रथमतृतीयौ पादौ द्वादशमात्रात्मकौ समौ द्वितीयचतुर्थौ तु क्रमेण अष्टादशपञ्चदशमात्रात्मकौ परस्परभिन्नौ। अतः प्रथमतृतीययोः साम्येऽपीतरयोरसाम्यादार्याछन्दो विषमं वृत्तम्। विषमवृत्तानि मात्रिकाणि नात्र पृथक् प्रदर्शितानि। आर्यादिष्वेव तानि कानिचिद् निरूपितानि। वर्णवृत्तानि विषमाणि पञ्चमेऽध्याये पदचतुरूर्ध्वादीनि संप्रदर्शितानि ॥ १६ ॥

हिं० टी०—जिस छन्द के चारों चरणों के लक्षण परस्पर भिन्न हों उसे छन्दःशास्त्र के विद्वान् विषमवृत्त कहते हैं।

विषम संज्ञा अन्वर्थ—सार्थक—है। विषम का अर्थ है जो सम न हो। अर्धसम में भी कुछ समता रहती ही है; इसलिये उसका भी निषेध इससे हो जाता है। सम और अर्धसम से भिन्न को विषम कहा जायगा। जैसे आर्या छन्द के प्रथम और तृतीय पाद समान होते हैं पर द्वितीय और चतुर्थ में भिन्नता होती है—अतः यह अर्धसम भी नहीं, सम होना तो अलग रहा। तब यह विषमवृत्त है। इसी प्रकार उद्‌गीति छन्द भी विषम है। आर्या के प्रथम तृतीय चरणों में बारह बारह और द्वितीय में अठारह तथा चतुर्थ में पन्द्रह मात्रायें होती हैं। उद्‌गीति के प्रथम तृतीय चरण आर्या के ही समान होते हैं और द्वितीय में पन्द्रह तथा चतुर्थ में अठारह मात्रायें होती हैं। मात्रिक विषम यहाँ विशेषरूप से नहीं दिखाये गये हैं। वर्णवृत्तों के विषम पञ्चम अध्याय में बतलाये गये हैं ॥ १६ ॥

वर्णसमवृत्तभेदाः—

आरभ्यैकाक्षरात् पादादेकैकाक्षरवर्धितैः।
पृथक् छन्दो भवेत् पादैर्यावत् षड्‌विंशतिं गतम् ॥ १७ ॥

अथ वर्णसमवृत्तभेदानाह—आरभ्यैकाक्षरादित्यादिना। एकाक्षरात् एकमक्षरं यस्मिन् तस्मात्, पादात्, आरभ्य। एकैकाक्षरवर्धितैः—एकेन एकेन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अक्षरेण वर्धितैः, पादैः, कृत्वेति शेषः, पृथक्-भिन्नं भिन्नं छन्दो भवेत्। वृद्धयवधिं प्रदर्शयितुमाह-यावदिति। यावत् षड्विंशतिसंख्याकं पादं प्रति, गतं-गमनं भवति।

अयं भावः-समवर्णवृत्तेषु एकेनाक्षरेण पादमेकं कृत्वा चतुर्षु पादेषु जातेषु छन्द एकं भवति। एकेन वर्धिताभ्यां द्वाभ्यां वर्णाभ्यां चतुर्णां पादानां निर्माणेऽपि पृथक् भवति। एवमेकैकवर्धनेन षड्विंशतिपर्यन्तं पृथक् पृथक् छन्दांसि संभवन्ति। एतेषां पृथक् पृथगुक्तादयः संज्ञा वक्ष्यन्ते॥ १७॥

हिं० टी०—सम वर्ण वृत्तों के एक अक्षर के पाद से लेकर एक एक बढ़ाते हुए छब्बीस अक्षर तक के पाद से पृथक् पृथक् छन्द बनते हैं।

तात्पर्य यह है कि एक अक्षर को एक पाद मानकर उसी के समान चारों चरण बनाकर एक छन्द बन सकता है। इसी प्रकार दो, तीन, चार अक्षरों से भी पृथक् पृथक् छन्द बन सकते हैं। २६ अक्षर तक बनाये जा सकते हैं। इनके पृथक् पृथक् उक्तादि नाम आगे दिये जा रहे हैं॥ १७॥

दण्डकलक्षणम्—

तदूर्ध्वं चण्डवृष्ट्यादिदण्डकाः परिकीर्तिताः।

सं० टी०—षड्विंशत्यधिकाक्षरपादस्य छन्दसः संज्ञामाह-तदूर्ध्वमित्यादिना। तदूर्ध्वम्-तस्मात् षड्विंशत्यक्षरपादात् छन्दसः, ऊर्ध्वम्-उपरि, सप्तविंशत्याद्यक्षरपादानि छन्दांसि, चण्डवृष्ट्यादिदण्डकाः-चण्डवृष्ट्यादिविशेषनामानः, दण्डकाः-दण्डकसामान्यनामानः परिकीर्तिताः-कथिताः।

हिं० टी०—२६ से अधिक वर्णों वाले पादों से बने छन्द चण्डवृष्टि आदि दण्डक कहे जाते हैं।

जिस छन्द के प्रत्येक पाद में वर्णसंख्या २६ से अधिक हो उसे दण्डक कहते हैं। दण्डक का अर्थ दण्ड देने वाला अथवा दण्ड (लठ्ठ) होता है। ऐसे छन्दों को दण्डक इसलिये कहते हैं कि इनके चरण इतने लम्बे होते हैं कि उनके उच्चारण करने में बोलने वाले की सांस फूल जाती है। यह सांस फूलना ही दण्ड है। दण्ड के समान लम्बे होने के कारण भी इन्हें संभवतः दण्डक कहा जाता है। चण्डवृष्टिप्रपात आदि इनके विशेष भेद हैं जो आगे तीसरे अध्याय की समाप्ति पर २६ वर्णों वाले छन्दों के अनन्तर कहे गये हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गाथालक्षणम्—

शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः ॥ १८ ॥

सं० टी०—अत्र विशेषलक्षणेनाऽलक्षितानां कविभिश्च प्रयुज्यमानानां छन्दसां सामान्यसंज्ञां वदति—शेषमित्यादिना। शेषम्—चण्डवृष्ट्यादि-विशेषाद् भिन्नम्, त्रिभिः षड्भिः वा चरणैः पादैः उपलक्षिताः—संलक्षिताः, गाथाः—गाथानामानि छन्दांसि बोध्यानीत्यर्थः। चकारात् चतुरधिकान्य-संख्यैरपि पादैरुपलक्षितानि, विलक्षणगुरुलघुक्रमैस्वद्भिः न्यूनाधिकाक्षरैश्च पादैर्युक्तान्यपि छन्दांसि गाथासंज्ञकानीति लभ्यते ॥ १८ ॥

हिं० टी०—चण्डवृष्टि आदि से भिन्न, तीन या छः चरण वाले छन्दों को गाथा कहते हैं।

जिन छन्दों का यहाँ निरूपण नहीं किया गया और कवियों ने प्रयोग किया है उन सब छन्दों को सामान्य रूप से 'गाथा' कहा जाता है। चण्ड वृष्टि आदि दण्डकों से आगे जो छन्द बनेंगे, जिन छन्दों के तीन या छः अर्थात् चार से न्यूनाधिक चरण होंगे, जिन छन्दों के गुरु लघु का क्रम भी विलक्षण होगा तथा जिन छन्दों के चरणों में न्यूनाधिक अक्षर होंगे, उन सब की सामान्य 'गाथा' संज्ञा है ॥ १८ ॥

उक्तादिजातिपरिगणनम्—

उक्ताऽत्युक्ता तथा मध्या प्रतिष्ठाऽन्या सुपूर्विका।
गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पङ्क्तिरेव च ॥ १९ ॥
त्रिष्टुप् च जगती चैव तथाऽतिजगती मता।
शक्करी साऽतिपूर्वा स्यात् अष्ट्यत्यष्टी ततः स्मृते ॥ २० ॥
धृतिश्चातिधृतिश्चैव कृतिः प्रकृतिराकृतिः।
विकृतिः सङ्कृतिश्चापि तथाऽतिकृतिरुत्कृतिः ॥ २१ ॥

सं० टी०—पूर्वप्रतिपादितानामेकाक्षरात्पादादारभ्य षड्विंशत्यक्षरपादाऽवधिकानां छन्दसां पृथक् पृथक् उक्तादिसामान्यसंज्ञा आह—उक्ता इत्यादिना। एकाक्षरपादानां 'अयुक्ता' सामान्यसंज्ञा, अवान्तरसंज्ञास्तु वक्ष्यन्ते। एवं शेषेष्वपि ज्ञेयम्। सुपूर्विका अन्या—अनन्तरोक्ता प्रतिष्ठैव सुपूर्वा सती सुप्रतिष्ठा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भिन्ना संज्ञेत्यर्थः। साऽतिपूर्वा—सा शक्वरी, अतिपूर्वा–अतिशक्वरीत्यर्थः। ताः सर्वाः—१ उक्ता, २ अत्युक्ता ३ मध्या, ४ प्रतिष्ठा, ५ सुप्रतिष्ठा, ६ गायत्री, ७ उष्णिक्, ८ अनुष्टुप्, ९ बृहती, १० पङ्क्तिः ११ त्रिष्टुप्, १२ जगती १३ अतिजगती, १४ शक्वरी, १५ अतिशक्वरी, १६ अष्टिः, १७ अत्यष्टिः, १८ धृतिः, १९ अतिधृतिः, २० कृतिः, २१ प्रकृतिः, २२ आकृतिः, २३ विकृतिः, २४ सङ्कृतिः, २५ अतिकृतिः, २६ उत्कृतिः, इत्येताः ॥१९–२१॥

हिं० टी०—पहले कहा गया है कि एक अक्षर के पाद से लेकर २६ अक्षर तक के पाद से भिन्न भिन्न छन्द बनते हैं। उनमें प्रत्येक की पृथक् पृथक् सामान्य संज्ञा इन तीन पद्यों में बताई गई हैं। एक अक्षर के पाद वाले छन्दों को सामान्य रूप से 'उक्ता' कहा जाता है। दो अक्षर के पाद वाले छन्दों को 'अत्युक्ता' कहा जाता है। इसी प्रकार आगे भी समझ लेना चाहिये। छन्दों के अलग अलग नाम बताये जायँगे। यहाँ पर ये सामान्य संज्ञायें दी गई हैं ॥१९—२१॥

अध्यायोपसंहारः—

इत्युक्ताश्छन्दसां संज्ञाः क्रमशो वच्मि साम्प्रतम्।
लक्षणं सर्ववृत्तानां मात्रावृत्तानुपूर्वकम् ॥ २२ ॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे परिभाषानिरूपणो नाम प्रथमोऽध्यायः।

सं० टी०—उक्तमनुवदन् अग्रे वक्ष्यमाणस्य क्रमं निर्दिशति—इत्युक्ता इत्यादिना। इति अनेन समनन्तरोक्तप्रकारेण छन्दसां संज्ञाः, परिभाषाः, उक्ताः। अथवा–छन्दसाम्–छन्दोविषयेऽपेक्ष्यमाणाः, संज्ञाः परिभाषाः, उक्ताः। साम्प्रतम्–इदानीम्, परिभाषानिरूपणानन्तरम्। क्रमशः क्रमेण, क्रमप्राप्ततया, मात्रावृत्तानुपूर्वकम्–मात्रावृत्तानि प्रथमं कृत्वा, सर्ववृत्तानाम्–

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्वेषां छन्दसाम्, लक्षणम्—स्वरूपम्, सोदाहरणम्, वच्मि—निरूपयामि। अयमाशयो यत्पूर्वं मात्राछन्दांसि लक्षयिष्यन्ते, ततो वर्णच्छन्दांसि ॥ २२ ॥

हिं० टी०—इस प्रकार छन्दों की उक्ता आदि संज्ञाओं का निरूपण कर दिया गया अथवा छन्दों के लिये उपयोगी परिभाषाओं का निरूपण किया गया। अब आगे सब छन्दों के लक्षण कहता हूँ। प्रथम मात्राछन्दों के लक्षण कहे जायँगे, उसके बाद वर्णवृत्तों के ॥ २२ ॥

इति व्याकरणसाहित्याचार्यश्रीधरानन्दशास्त्रिणा प्रणीतायां प्राज्ञतोषिणी-समाख्यायां वृत्तरत्नाकरव्याख्यायां प्रथमोऽध्यायः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ द्वितीयोऽध्यायः

अथ मात्रिकच्छन्दांसि।

आर्याप्रकरणम्।

आर्यासामान्यलक्षणम्—

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ गु०
ऽऽ, ऽऽ,। ।ऽ, ऽऽ,ऽ ।।,। ऽ।, ।।ऽ, ऽ
लक्ष्मैतत्सप्त गणा गोपेता भवति नेह विषमे जः।
१ २ ३ ४ ५ ६ल ७ गु०
ऽऽ,ऽ ।।,ऽ ऽ, ।।ऽ ऽ ।।।,ऽऽऽ
षष्ठोऽयं नलघू वा, प्रथमेऽर्धे नियतमार्यायाः॥ १॥
१, २, ३, ४, ५, ६, ७, गु०
ऽऽ ।ऽ।ऽ।।ऽ ऽ ।।ऽ। ।।।।।।।ऽ
षष्ठे द्वितीयलात्परके न्ले; मुखलाच्च सयतिपदनियमः।
१ २ ३ ४ ५ ६ल ७ गु०
।।ऽ,ऽ ऽ,।।ऽ, ऽऽ,। ।।, ।।ऽ,ऽऽ
चरमेऽर्धे पञ्चमके; तस्मादिह भवति षष्ठो लः॥ २॥

अन्वयः—आर्यायाः प्रथमेऽर्धे एतत् लक्ष्म नियतम् (अस्ति) गोपेताः

---

१ 'आदौ तावद्गणच्छन्दो मात्राच्छन्दस्ततः परम्। तृतीयमक्षरच्छन्दश्छन्दस्त्रेधा तु लौकिकम्। आर्यादिगीतिपर्यन्तं गणच्छन्दः समीरितम्। वैताल्यादिचूलिकान्तं मात्राच्छन्दः प्रकीर्तितम्। सामान्याद्युत्कृतिं यावदक्षरच्छन्द एव च।' रत्नाकरकारमते तु मात्रावर्णभेदेन छन्दसो द्वैविध्येन गणच्छन्दसामार्यादीनामपि मात्रिकेष्वेवान्तर्भाव इति बोध्यम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सप्त गणाः (भवन्ति), इह विषमे जः न भवति, षष्ठः अयम् (जः भवति), वा नलघू (भवतः)। च षष्ठे न्ले द्वितीयलात् (पूर्वम्) परके (न्ले) मुखलात् (पूर्वम्) सयतिपदनियमः। चरमेऽर्धे (एतत् लक्ष्म नियतम्) पञ्चमके (न्ले) तस्मात् (सयतिपदनियमः), इह षष्ठो लः भवति।

व्याख्या - आर्यायाः—आर्यानामकछन्दसः, प्रथमेऽर्धे पूर्वार्द्धे, प्रथमद्वितीय चरणयोरिति यावत्, एतत्—उच्यमानम्, लक्ष्म—लक्षणम्, नियतम्—निश्चितम् अस्तीति शेषः। किं तदित्याह—गोपेताः गेन गुरुणा एकेन सहिताः, सप्त—सप्तसंख्याकाः, गणाः—चतुर्मात्राः मात्रिकछन्द उपयोगिनः पूर्वोक्ताः, भवन्तीति शेषः। इह—अस्याम्, आर्यायामित्यर्थः, विषमे—प्रथम-तृतीय-पञ्चम-सप्तमरूपे गणे, जः—जगण। ऽ। इत्याकारको मध्यगुरुः, आर्यागणेषु तृतीयः, न भवति। षष्ठः—षष्ठस्थानवर्ती गणः, अयम्—जगणः, भवतीति शेषः, वा—अथवा, नलघू—नगणः।।। इत्याकारः त्रिलघुरूपो गणः, लघुश्चेति तौ।।।। चतुर्लघव इति यावत्, भवत इत्यध्याहार्यम्।

अधुना यतिनियममाह—च—किं च, षष्ठे—षष्ठस्थानके गणे, न्ले—नगणलघुरूपे, चतुर्लघुरूपे इति यावत्, सति, द्वितीयलात्—द्वितीयलघोः पूर्वमिति शेषः, चतुर्लघुरूपस्य गणस्य द्वितीयलघोः पूर्वं प्रथमलघौ इत्यर्थः, परके परस्मिन्, षष्ठापेक्षयैव परत्वाश्रयणात् सप्तमे इत्यर्थः, न्ले—नगणलघुरूपे सति, मुखलात्—चतुर्लघुरूपस्य गणस्य प्रथमात् लघोः, पूर्वमिति शेषः, षष्ठगणान्ते इति यावत्, सयतिपदनियमः—सयतेः यतिविशिष्टस्य पदस्य—सुप्तिङन्तरूपस्य, नियमः अस्तीति शेषः, सयति पदं नियम्यते इत्यर्थः। तत्र यतिरपि स्यात्, पदमपि समाप्तं भवेदित्याशयः। एतावत्पूर्वार्धलक्षणं यतिपदनियमसहितम्।

संप्रति द्वितीयार्धस्य लक्षणमाह—चरमे इति। चरमे—अर्धे-अर्धभागे, उत्तरार्धे, तृतीयचतुर्थपादयोरिति यावत्, पञ्चमके—पञ्चमे गणे, न्ले—नगणलघुरूपे चतुर्लघौ सति, तस्मात्—पूर्वोक्तात् मुखलघोः, चतुर्लघुषु प्रथमात् लघोः, पूर्वमिति शेषोऽध्याहार्यः, चतुर्थगणान्ते इति यावत्, सयतिपदनियमः—चतुर्थगणान्ते एवं यतिः कार्या, पदं च समाप्यमित्यर्थः इह—उत्तरार्धे, षष्ठः—षष्ठस्थानवर्ती गणः, लः—एकलघुरूपः, भवति। षष्ठगणस्यैकलघुरूपतैवोत्तरा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धस्य पूर्वार्धाद् विशेषता, अन्यत्तु सर्वं समानम्। तदित्थं–पूर्वार्धे त्रिंशन्मात्राः, उत्तरार्धे च सप्तविंशतिरिति फलितम्। संकलनया सप्तपञ्चाशत् सर्वा मात्राः। इदमार्याछन्दो मात्रिकेषु विषमवृत्तम्–प्रतिचरणं भिन्नलक्षणसत्त्वात्। अत्र हि न प्रतिचरणं पृथग्लक्षणमुक्तम्, अपि तु पूर्वार्धोत्तरार्धरूपेण प्रथमद्वितीय-चरणयोः तृतीयचतुर्थचरणयोः सहैव लक्षणं कृतम्। श्रुतबोधे तु चरणक्रम-मेवाश्रित्य लक्षणमुक्तं तच्चातीव सुगमम्। तद्यथा–'यस्याः प्रथमे पादे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि। अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पंचदश सार्या'। अस्मिन् लक्षणे रत्नाकरोक्तसयतिपदनियमं विहाय सर्वमायातम्। अन्ते गुरुनियमस्तु केवलं पर्यहीयत। तथापि आर्यास्वरूपबोधायेदमधिकोपयोगीति प्रतिभाति॥ १—२॥

हिं॰ टी॰—आर्या के पूर्वार्ध–प्रथम द्वितीय चरण–का लक्षण निश्चित है कि इसमें सात गण–चार चार मात्रा वाले–और एक गुरु होता है। इस आर्या के चार मात्रा वाले इन सात गणों में विषम गणों में–अर्थात् प्रथम, तृतीय, पञ्चम और सातवें में जगण। ऽ। मध्यगुरुवाला न आना चाहिये। छठा गण जगण हो अथवा नगण और लघु रूप अर्थात् चार लघु वाला हो।

यदि छठा गण नगण और लघु रूप अर्थात् चार लघु वाला हो तो उस गण के द्वितीय लघु से पूर्व अर्थात् प्रथम लघु पर यति होती है, प्रथम लघु पर पद भी समाप्त हाना चाहिये यह नियम है। एवं यदि सातवां गण चार लघु वाला हो तो गण के पहले लघु से पूर्व–अर्थात् छठे गण के अन्त में यति होती है और पद समाप्त हो जाना चाहिये। इतना पूर्वार्ध का नियम है। उत्तरार्ध—तृतीय और चतुर्थ चरण—का यह लक्षण है कि यदि पांचवां गण चार लघु वाला हो तो पहले लघु से पूर्व चतुर्थ गण के अन्त में पद समाप्त होकर यति होनी चाहिये तथा इसमें छठा गण एक लघु का होता है। बाकी सब बातें पूर्वार्ध की जैसी ही होती हैं॥ १—२॥

पथ्यालक्षणम्—

१, २, ३, ४, ५, ६ज, ७, गु

ऽऽ।ऽ। ऽऽ ।।ऽऽऽ। ऽ।ऽ ऽ ऽ

त्रिष्वंशकेषु पादो दलयोराद्येषु दृश्यते यस्याः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१ , २ , ३ , ४ , ५ , ६ल , ७ , गु
ऽऽ। ऽ। ऽ ऽऽ ऽ ऽऽ । ऽ ऽऽ

पथ्येति नाम तस्याश्छन्दोविद्भिः समाख्यातम् ॥ ३ ॥

अथार्याभेदेषु प्रथमं पथ्यां लक्षयति—त्रिष्वंशकेष्वित्यादिना।

अन्वयः—यस्याः दलयोः आद्येषु त्रिषु अंशकेषु पादो दृश्यते। छन्दोविद्भिस्तस्याः पथ्येति नाम समाख्यातम्[1]।

व्याख्या—यस्याः आर्यायाः, [2]दलयोः—उभयोर्भागयोः। पूर्वार्धोत्तरार्धरूपयोः आद्येषु—प्रथमेषु, त्रिषु-त्रिसंख्येषु अंशकेषु—भागेषु, गणेषु इत्यर्थः पादः—श्लोकचतुर्थभागरूपः, दृश्यते—विलोक्यते, अर्थात् तृतीयगणान्ते द्वादशमात्रान्ते पादः समाप्तो भवेत्। छन्दोविद्भिः—छन्दःशास्त्रविशारदैः, तस्या आर्यायाः, 'पथ्या' इति नाम—संज्ञा, समाख्यातम्—प्रतिपादितम्। सा पथ्या उच्यते इति भावः।

एष निष्कर्षोऽत्र यद्—यत्र प्रथमे तृतीये च पादे द्वादशमात्रा भवेयुः, शिष्टं च सर्वमार्यासामान्यमेव स्यात्सा पथ्या कथ्यते। ततश्च गुरुयुक्तसप्तगणानां त्रिंशन्मात्रासु शिष्टा अष्टादश मात्रा द्वितीये पादे, एवमुत्तरार्धस्य गुरूपेतषष्ठलघुरूपसप्तगणीयाभ्यः सप्तविंशतिमात्राभ्योऽत्रशिष्टाः पञ्चदश मात्राश्चतुर्थे पादे भवन्तीति फलितम्। उदाहरणमपीदं लक्षणमेवेति पूर्ववदेव समन्वयो मूलाङ्कितचिह्नैर्विधेयः। अस्या एव पथ्यार्यायाः श्रुतबोधे 'यस्याः प्रथमे पादे' इत्यादि लक्षणम्। अत्रत्यं पूर्वोक्तं तु आर्यायाः सामान्यलक्षणम्। तच्च सामान्यलक्षणं पथ्यार्यारूपमेव, तत्रापि द्वादशमात्रासु प्रथमतृतीयपादपरिसमाप्तिदर्शनात्। अन्यदप्युदाहरणं दीयते अभ्यासार्थं सुखावबोधाय।

तद्यथा—पथ्याशी व्यायामी, स्त्रीषु जितात्मा नरो न रोगी स्यात्।
यदि मनसा वचसा वा, द्रुह्यति नित्यं न भूतेभ्यः॥

अत्र चिह्नानामभावे लक्षणसमन्वयः स्वयं विधेयः॥ ३ ॥

---

१ प्रकीर्तितं नागराजेन' इति पाठान्तरम्।

२ यानि छन्दांसि पंक्तिद्वये लिख्यन्ते—यथार्यादीनि तेषां प्रत्येकं पंक्तिर्दलं शकलं चाप्युच्यते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिन्दी - जिस आर्या के दोनों दलों में प्रथम तीन गणों के अन्त में पाद की समाप्ति होती है उसका छन्दःशास्त्र के विद्वानों ने 'पथ्या' नाम कहा है।

सार यह है कि जिसके प्रथम पाद में बारह मात्रा हों और दूसरे में १८ तथा तृतीय में १२ और चतुर्थ में १५ मात्रा हों उसे पथ्या आर्या कहते हैं॥ ३॥

विपुलार्यालक्षणम्—

१ २ ३ ४ ५ ६ज ७ गु०
ऽऽ, ।।ऽ, ।।ऽ, ।ऽ।, ।।ऽ, ।ऽ।, ।। ऽ, ऽ
संलङ्घ्य गणत्रयमादिमं, शकलयोर्द्वयोर्भवति पा-दः।
१ २ ३ ४ ५ ६ल ७ गु
ऽऽ, ऽऽ, ।।।ऽ,ऽ ।।, ऽ।।, ।ऽऽ, ऽ
यस्यास्तां पिंगलनागो, विपुलामिति समाख्याति॥ ४॥

सं० टी० - विपुलार्यां लक्षयति, संलङ्घ्येत्यादिना। अन्वयः—यस्याः आदिमं गणत्रयं संलङ्घ्य द्वयोः शकलयोः पादो भवति। पिंगलनागः तां [1]विपुलामिति समाख्याति।

व्याख्या—यस्याः-आर्यायाः, द्वयोः, शकलयोः-दलयोः, पूर्वार्धोत्तरार्धयोः, आदिमम्-प्रथमम्, गणत्रयम्-त्रीन् गणान्, संलङ्घ्य-अतिक्रम्य, द्वादश-मात्रात्मकं पूर्वोक्तं यतिस्थानमतीत्य, पादः-पादसमाप्तिः, भवति। पिंगलनागः-पिङ्गलाचार्यः, ताम्-उक्तलक्षणाम्, विपुलामिति, नाम्नेति शेषः। समाख्याति-कथयति।

अयमाशयो यत्—यत्र प्रथमगणत्रयान्ते पादो न विश्राम्यति सा विपु-

---

१—इदमत्र विशेषतोऽवधेयम्, यद्विपुला त्रिप्रकारा संभवति। तथाहि—गणत्रयमतीत्य पादविश्रान्तिर्यदि केवलं पूर्वार्धे स्यात्तर्हि आदिविपुला। यदि च केवलमन्त्येऽर्धे स्यात्तर्हि अन्त्यविपुला। यदि चोभयोरर्धयोः पूर्वोक्तं लक्षणं समन्वियात्तर्हि उभयविपुला सा। इह च 'शकलयोर्द्वयोः' इत्युक्त्या केवलमुभयविपुला लक्षिता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लार्या भवति। अत्र गणत्रये पादविश्रान्तिर्न स्यादित्येवोच्यते, तद् वर्जयित्वा चतुर्थे गणे यत्र कुत्रापि भवतु पादसमाप्तिरिति नास्ति नियमः। अस्य लक्षणस्यापि पूर्वोक्तरीत्यास्मिन्नेव चिह्निते समन्वयः कार्यः। नात्र प्रथमगणत्रयान्ते यतिः। अपितु गणत्रयमतीत्य 'मम्' अत्र पूर्वार्धे 'गो' अत्र चोत्तरार्धे पादसमाप्तिः। अन्यच्च सर्वमार्यासामान्यलक्षणमत्र घटते एव। अत इयं विपुलार्या ॥ ४ ॥

हिं० टी०—जिस आर्या के दोनों दलों में प्रथम तीन गणों के बाद पाद की समाप्ति होती है उसे पिंगलाचार्य विपुला कहते हैं।

यहाँ यद्यपि यह नहीं कहा गया कि फिर पादसमाप्ति कहाँ पर हो तथापि प्रत्यासत्त्या यह कहा जा सकता है कि चतुर्थ गण पर पादसमाप्ति हो। परन्तु यह आशङ्का फिर भी बनी रह जाती है कि चतुर्थ गण के अन्त में या अन्यत्र कहाँ पर पादसमाप्ति हो। यहीं लक्षण के पूर्वार्ध में चतुर्थ गण की तीसरी मात्रा 'मम्' पर पादसमाप्ति हुई है और उत्तरार्ध में दूसरी मात्रा 'गो' पर पादसमाप्ति हुई है। अतः इस लक्षण के अनुसार निश्चित नहीं किया जा सकता कि कहाँ पर पादसमाप्ति हो, इसके अतिरिक्त कि तृतीय गण के अन्त में १२ वीं मात्रा पर पादसमाप्ति नहीं होती। तात्पर्य यह है कि पथ्यार्या न होनी चाहिये ॥ ४ ॥

चपलालक्षणम्—

१गु २ज गु३गु ज४ गु५ ज६ ७ गु०
। । ऽ, । ऽ ।, ऽ ऽ । ऽ ।, ऽ ऽ, । ऽ ।, ऽ ऽ, ऽ
उभयार्धयोर्जकारौ द्वितीयतुर्यौ गमध्यगौ यस्याः।
१गु २ज गु३गु ४ज गु५ ६ल ७ गु
। । ऽ, । ऽ ।, ऽ ऽ, । ऽ ।, ऽ ऽ, । ऽ, ऽ, ऽ
चपलेतिनाम तस्याः प्रकीर्तितं नागराजेन ॥ ५ ॥

सं० टी०—चपलां लक्षयति—उभयार्धयोरित्यादिना। अन्वयः—यस्याः उभयार्धयोः द्वितीयतुर्यौ गमध्यगौ जकारौ (स्याताम्) तस्या नागराजेन चपलेति नाम प्रकीर्तितम्। व्याख्या—यस्याः—आर्यायाः, उभयार्धयोः—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दलयोः, पूर्वार्धे उत्तरार्धे चेत्यर्थः। द्वितीयतुर्यौ—द्वितीयचतुर्थौ गणौ, गमध्यगौ—गयोः—गुर्वोः, मध्यगतौ, जकारौ—द्वौ जगणरूपौ स्याताम्। तस्याः नागराजेन—पिङ्गलमुनिना, 'चपला' इति नाम प्रकीर्तितम्—कथितम्।

अत्रैव लक्षणसमन्वयो भवति। तथाहि प्रथमे दले 'षयोर्जं' ।ऽ। इति द्वितीयो गणो मध्यगुरुतया जगणरूपः, किंच—'या ऽ—का ऽ' इत्येतयोर्द्वयोर्गुर्वोर्मध्यगतोऽपि स विद्यते। एवं 'द्वितीय' ।ऽ। इत्ययं चतुर्थोऽपि जगण एव, अपि च 'रौ ऽ—तु ऽ' इत्येतयोरुभयोर्गुर्वोर्मध्यगतश्चायम्। तथा उत्तरार्धं 'तिनाम' ।ऽ। इति जगणरूप एव द्वितीयो गणः, किं चायं 'ले ऽ—त ऽ' इत्यनयोर्गुर्वोर्मध्यगतोऽप्यस्ति। एवं च 'प्रकीर्ति' ऽ।ऽ इत्ययं चतुर्थोऽपि जगण एव, 'स्याः ऽ—तं ऽ' इत्येतयोर्गुर्वोर्मध्यगतश्च। अत्रोत्तरार्धे 'न' इत्यन्तिमो गुरुतयापेक्षितोऽपि लघुः 'वा पादान्ते' इति नियमेन गुरुरेवेति ज्ञेयम्। किं च षष्ठो गणोऽपि जगण एव, आर्यासामान्यलक्षणोक्तत्वादित्यपि समवधेयम्। उदाहरणान्तरं यथा—

चपला न चेत्कदाचिन्नृणां भवेद्भक्तिभावना कृष्णे।
धर्मार्थकाममोक्षास्तदा करस्था न सन्देहः॥

अत्र स्वयमुक्तदिशा लक्षणसमन्वयो विधेयः॥ ५॥

हिं० टी०—जिस आर्या के दोनों दलों में द्वितीय और चतुर्थ गण जगण रूप हों तथा वह जगण दो गुरुओं के मध्य में हो अर्थात् दोनों ओर से गुरु हों उसका पिंगल मुनि ने 'चपला' नाम कहा है।

तात्पर्य यह है कि चपला में प्रथम गण अन्त गुरु, द्वितीय जगण, तृतीय दो गुरु वाला, चतुर्थ जगण और पञ्चम गण आदि गुरु होना चाहिये। पादसमाप्ति के लिये पथ्या का साधारण नियम ही रहेगा, प्रथम और तृतीय चरण में १२ मात्रायें और द्वितीय में १८ तथा चतुर्थ में १५ मात्रायें होंगी। लक्षणसमन्वय संस्कृत टीका में किया गया है, वहीं देखें॥ ५॥

मुखचपलालक्षणम्—

१ गु २ ज गु३गु ४ ज गु५ ६ ज ७ गु
ऽ ऽ, ।ऽ ।, ऽ ऽ, ।ऽ ।, ऽ । ।, ।ऽ।, ऽ ऽ, ऽ
आद्यं दलं समस्तं भजेत लक्ष्म चपलागतं यस्याः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१ २ ३ ४ ५ ६ल ७ गु

SS, S।।, S S, ।।।।।S, S।, S, ।।, S

शेषे पूर्वज-लक्ष्मा-मुखचपला सोदिता मुनिना ॥ ६ ॥

सं० टी०—मुखचपलां लक्षयति–आद्यमित्यादिना । अन्वयः–यस्या आद्यं दलं चपलागतं समस्तं लक्ष्म भजेत । (च) शेषे पूर्वजलक्ष्मा (स्यात्) सा मुनिना मुखचपला उदिता । व्याख्या—यस्याः आर्याया इत्यर्थः आद्यम्-प्रथमम् । दलम्–शकलम्, पूर्वार्धमित्यर्थः चपलागतम्–चपलोक्तम्, समस्तम्–सर्वमपि, लक्ष्म–लक्षणम्, भजेत–अनुसरेत्, अर्थात् चपलोक्तं लक्षणं यत्र प्रथमे दले युक्तं स्यात् । च–किंच, शेषे–अवशिष्टे भागे, उत्तरार्धे इत्यर्थः, पूर्वजलक्ष्मा–पूर्वजम्–पूर्वोक्तम्, आर्यासामान्यम्, पथ्योक्तम्, विपुलोक्तं वा लक्ष्म–लक्षणम्, यस्याः, पथ्या–विपुलालक्षणयुक्तेत्यर्थः, सा–आर्या, आर्या-प्रकारः, मुनिना–पिंगलेन, मुखचपला, उदिता–कथिता ।

अत्र पूर्वार्धे 'दलं स ।S।' इति द्वितीयो गणो जगणः, स च 'द्यं S–मं S' इत्येतयोः प्रथमगणान्तगुरोस्तथा तृतीयगणाद्यगुरोरुभयोर्मध्यगतः एवं 'भजेत ।S।' इति चतुर्थो गणो जगण एव, स च 'स्तं S' इत्यस्य तृतीय-गणान्तगुरोः प्राक्स्थितस्य तथा 'ल S' इत्यस्य पञ्चमगणगुरोरग्रे स्थितस्य च मध्यगत इति सुसमन्वितमिह पूर्वार्धे चपलालक्षणम् । उत्तरार्धे च पथ्यालक्षणं समन्वितमस्ति । उत्तरार्धस्य विपुलारूपत्वेऽपीयं भवति । तद्यथा—

विपुलाऽभिजातवंशोद्भवापि, रूपातिरेकरम्यापि ।
निःसार्यते गृहाद्वल्लभापि, यदि भवति मुखचपला ॥

अत्र पूर्वार्धे चपलालक्षणमपि संघटितं भवति । उत्तरार्धे च 'पि' इत्यत्र पादसमाप्तिः, गणत्रयमुल्लङ्घ्य वर्तते । अतो विपुलाक्रान्तमुत्तरार्धम् । तथा चेयं विपुलाक्रान्ता मुखचपला ॥

हिं० टी०—जिस आर्या का पूर्वार्ध चपला के सम्पूर्ण लक्षण से युक्त हो और उत्तरार्ध आर्या पथ्या व विपुला के सामान्य लक्षण से युक्त हो आर्या के उस प्रकार को पिंगल मुनि ने मुखचपला कहा है ।

यहाँ पर पूर्वार्ध में 'दलं ।S स S' यह द्वितीय गण और 'भजेत ।S।' यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चतुर्थ गण जगण हैं और दोनों 'चं ऽ–म ऽ' इन गुरुओं के तथा 'स्तंऽ–लं ऽ' इन गुरुओं के मध्य में क्रम से है। अतः यह पूर्वार्ध चपला का है। उत्तरार्ध में पथ्यार्या साधारण रूप में है क्योंकि आर्या का सामान्य लक्षण उसमें घटता है और तृतीय गण के अन्त में ११ वीं मात्रा पर पाद की समाप्ति हुई है। अतः यह मुखचपला का उदाहरण है। विपुला से मिली भी मुखचपला होती है। 'विपुला—' इत्यादि संस्कृत टीका में कहे पद्य के पूर्वार्ध में चपला है और उत्तरार्ध में तीन गणों से आगे 'पि' पर पादसमाप्ति होने के कारण विपुला है। अतः यह विपुलामिश्रित मुखचपला हुई॥ ६॥

जघनचपलालक्षणम्—

१ २ ३ ४ ५ ६ ज ७ ८ गु
ऽ। ।, ऽ।।, ।ऽऽ, ।।ऽ, ।।ऽ, ।ऽ ।, ।।ऽ, ऽ
प्राक् प्रतिपादितमर्धे प्रथमे प्रथमेतरे तु चपलायाः।
१ गु २ज गु ३ ४ ज गु ५ ६ल ७ गु
ऽऽ, ।ऽ। ऽ ऽ, ।ऽ।, ऽऽ, । ।।।।ऽ
लक्ष्माश्रयेत सोक्ता विशुद्धधीभिर्ज–घनचपला॥ ७॥

सं० टी०—जघनचपलां लक्षयति—प्रागित्यादिना। **अन्वय**—(या आर्या) प्रथमे अर्धे प्राक् प्रतिपादितम् (लक्ष्म); प्रथमेतरे तु चपलायाः लक्ष्म आश्रयेत। सा विशुद्धधीभिर्जघनचपला उक्ता। **व्याख्या**—या आर्या प्रथमे–आद्ये, अर्धे–अर्धभागे पूर्वार्धे इत्यर्थः, प्राक्–पूर्वम्, प्रतिपादितम्–उक्तम्, अर्थादार्यासामान्यम्, पथ्याया विपुलायाश्चेति यावत्, लक्ष्म आश्रयेत इति शेषः। प्रथमेतरे–द्वितीये अर्थादुत्तरार्धे, चपलायाः लक्ष्म–लक्षणम्, आश्रयेत–भजेत, सा आर्या, विशुद्धधीभिः–विशुद्धा–छन्दोविवेचन-निपुणा, धीर्येषां तैः, पिङ्गलादिभिराचार्यैः, जघनचपला, उक्ता। मूलश्लोके चिह्नैरङ्कितैः समन्वयः कार्यः। यथा वा मम—

१ २ ३ ४ ५ ६ज ७ ८गु
ऽऽ, ऽऽ, ।।ऽ, ऽ।।, ।।।।, ।ऽ।, ।।ऽ, ऽ
बुद्धो योगी विदितो यौवनमदलवविहीन–करुणाब्धिः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१गु, २ज, ३गु, ४ज गु ५ ६ल ७ गु०
ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ ।, ऽ ।।, ।, ।। ऽ, ऽ
आसीन्नवाङ्गनानां सुदुर्लभो जघन—चपलानाम् ॥

अस्मिन् पद्ये पूर्वार्धमार्यासामान्यस्त्र। उत्तरार्धं च चपलाया इति जघनचपलेयम्। इमे प्रदर्शिता आर्याभेदा विषमच्छन्दांसि प्रतिपादं भिन्नलक्षणत्वात्। आर्यासामान्यमेव विषमं वृत्तमिति समाकलनीयम्।

हिं० टी०—जिस आर्या के प्रथम अर्ध में आर्या का सामान्य लक्षण घटता हो और उत्तरार्ध में चपला का। उसे छन्दःशास्त्र के विद्वान् 'जघनचपला' कहते हैं। पूर्वोक्त मुखचपला के पूर्वार्ध उत्तरार्ध का परिवर्तन करने से 'जघनचपला' होती है।

इत्यार्याप्रकरणम्।

———

अथ गीतिप्रकरणम्।

गीतिलक्षणम्—

१ २ ३ ४ ५ ज६ ७ गु०
ऽ ऽ, ।।।।, ऽ ऽ, ।। ।, ।।। । ऽ, । ऽ।, ऽ।, । ऽ
आर्याप्रथमदलोक्तं यदि कथमपि लक्षणं भवेदुभयोः।
१ २ ३ ४ ५ ६ज ७ गु०
।। ऽ, ।।।।, ऽ ऽ, ऽ ऽ, ऽ ऽ, । ऽ ।, ऽ ऽ, ऽ
दलयोः कृतयतिशोभां तां गीतिं गीतवान्भुजङ्गेशः ॥ ८ ॥

सं० टी०—गीतिं लक्षयति–आर्या इत्यादिना। अन्वयः–आर्याप्रथमदलोक्तं लक्षणं कथमपि उभयोर्दलयोर्भवेत्। (तर्हि) भुजङ्गेशः कृतयतिशोभां तां गीतिं गीतवान्। व्याख्या–आर्यायाः प्रथमदले–पूर्वार्धे, प्रथमद्वितीयचरणयोरिति यावत्, पूर्वार्द्धविषये इति तात्पर्यम्, उक्तम्–कथितम्, लक्षणम्–'लक्ष्मैतत्सप्त गणा गोपेताः' इत्यादिरूपम्, त्रिंशन्मात्रारूपमित्यर्थः। यदि कथमपि–केनापि प्रकारेण। एतदुक्तं भवति–यद् द्वितीयेऽप्यर्धे षष्ठो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गणो जकारो (।ऽ।) नलघुरूपो (।।।।) वा भवेत्। अनेनैव प्रकारेण द्वितीयार्धं पूर्वार्धसमं भवति। यथा चोक्तं श्रुतबोधे—'आर्यापूर्वार्धसमं द्वितीयमपि भवति यत्र हंसगते। छन्दोविदस्तदानीं गीतिं ताममृतवाणि भाषन्ते'। षष्ठगणो जगणो नलघुरूपो वा द्विधा। उभयोः द्वयोरेव, दलयोः—अर्द्धयोः, भवेत्। तर्हि भुजङ्गानाम्—सर्पाणाम्, ईशः—स्वामी, शेषनागः, इह तदवतारभूतः पिङ्गलमुनिः, कृतयतिशोभाम्—कृता, यत्या—विरामरूपया, शोभा—श्रवणसौन्दर्यं, यस्यास्ताम्, हेतुगर्भं विशेषणम्। ताम्—पूर्वोक्तलक्षणलक्षितामार्याम्, गीतिम्—गीतिनाम्नीम्, गीतवान्—कथितवान्, तस्या गीतिरिति संज्ञां कथितवानित्यर्थः।

अयमाशयो यद् गीत्यां पूर्वार्धमार्यासमं गुरुयुक्तसप्तगणोपेतं भवति उत्तरार्धमपि च पूर्वार्धवदेव त्रिंशन्मात्रात्मकम्, न तु षष्ठगणस्य लघुरूपत्वेन सप्तविंशतिमात्रात्मकम्। किं चैवं गीतिरर्धसमा, अस्याः प्रथमतृतीयचरणयोः प्रत्येकं द्वादशमात्राः, तृतीयचतुर्थयोश्च प्रत्येकमष्टादशेति फलति। अतः पूर्वोत्तरार्धयोः समानतयोभयत्र यतिरपि समानैवेति श्रवणसौन्दर्यमिह समुद्भासते। किञ्चात एवास्या गाने मनोहरता। गीयते इति गीतिरित्यन्वर्थेयं संज्ञा। समन्वयस्तु सरलः। उत्तरार्धे 'तवान्भु ।ऽ। इति षष्ठो गणो जगण इति पूर्वार्धसममस्तीति गीतिरियम्॥ उदाहरणान्तरं यथा—

मधुरं वीणारणितं पञ्चमसुभगश्च कोकिलालापः।
गीतिः पौरवधूनामधुना कुसुमायुधं प्रबोधयति ॥ ८ ॥

हिं० टी० आर्या के पूर्वार्ध का जो लक्षण कहा गया है यदि वह दोनों—पूर्वार्ध और उत्तरार्ध—में हो तो यति की शोभा से युक्त उस छन्द को पिङ्गल मुनि ने 'गीति' कहा है।

गीति के पूर्वार्ध में आर्या के समान एक गुरु सहित सात गण अर्थात् ३० मात्रायें होती हैं और उत्तरार्ध में भी। इससे गीति अर्धसम छन्द हुआ। इसी लिये इसमें यति का स्थान दोनों दलों में एक होने से, सुनने में मनोहरता आ जाती है। इसी कारण इसे 'गीति' कहा गया है। आजकल जो छन्द गाये जाते हैं उन्हें साधारण रूप से गीति कहा जाता है। हिन्दी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के 'गीतिका' और 'हरगीतिका' छन्द भी गाने से सम्बन्ध रखने के कारण ही उक्त नाम से कहे गये हैं ॥ ८ ॥

उपगीतिलक्षणम्—

१ , २ , ३ , ४ , ५ , ६ल, ७,गु
ऽऽ।ऽ।ऽऽ ऽ।।ऽ ऽ।ऽ ऽऽ
आर्याद्वितीयकेऽर्धे यद्गदितं लक्षणं तत्स्यात् ।
१ , २ , ३ , ४ , ५ , ६ल, ७,गु
ऽ।।ऽ।। ।।ऽ।।ऽऽ ऽ ।ऽऽ
यद्युभयोरपि दलयोरुपगीतिं तां मुनिर्ब्रूते ॥ ९ ॥

सं० टी०—उपगीतिं लक्षयति—आर्या इत्यादिना । अन्वयः—आर्याद्वितीयकेऽर्धे यत् लक्षणं गदितम्, तद् यदि, उभयोः अपि दलयोः स्यात्, (तर्हि) मुनिः ताम् उपगीतिं ब्रूते । व्याख्या—आर्यायाः, द्वितीयके—द्वितीये उत्तरे इत्यर्थः, अर्धे—अर्धभागे, उत्तरार्धे इति भावः, तद्विषये इत्यर्थः, विषयसप्तमी, यत् लक्षणम्—'इह भवति षष्ठो लः' इत्येवं रूपम्, गदितम्—कथितम् । तद् यदि उभयोः—द्वयोरपि, दलयोः—भागयोः, स्यात् । तर्हि मुनिः—पिङ्गलाचार्यः ताम्—पूर्वोक्तलक्षणाम्, उपगीतिम्—एतन्नाम्नीम्, ब्रूते—कथयति । एतल्लक्षणलक्षिताया आर्यायाः पिङ्गलमुनिना 'उपगीतिः' इति संज्ञा कथितेति भावः ।

उपगीत्याः प्रत्येकस्मिन् दले गुरुयुक्तसप्तगणरूपाः सप्तविंशतिर्मात्रा भवन्ति । षष्ठो गणश्च द्वयोरेव दलयोरेकलघुरूप एव भवति । यथा—इहैव 'क्ष' 'मु' इति । उभयार्धयोः समत्वादियमपि गीतिवदर्धसमं छन्दः । अस्याः प्रथमतृतीयचरणयोः प्रत्येकं द्वादशमात्राः, तथा द्वितीयचतुर्थयोः प्रत्येकं पञ्चदशेति भवत्यस्या अर्धसमत्वम् ॥ उदाहरणान्तरं यथा—

विषयामिषाभिलाषः करोति चित्तं सदा चपलम् ।
वैराग्यभावनानां तथोपगीत्या भवेत् स्वस्थम् ॥

अत्र द्वयोर्दलयोः 'स' 'भ' इति एकलघुरूपः षष्ठो गणः ॥ ९ ॥

हिं० टी०—आर्या के उत्तरार्ध का जो लक्षण कहा गया है यदि उस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लक्षण के अनुसार दोनों भाग—पूर्वार्ध और उत्तरार्ध—बने हों तो उसे पिङ्गल मुनि 'उपगीति' छन्द कहते हैं।

उपगीति के प्रत्येक भाग में सत्ताईस मात्राएँ होती हैं। प्रत्येक चरण की मात्राएँ पृथक् पृथक् इस प्रकार होंगी—पहले और तीसरे में बारह-बारह, दूसरे और चौथे चरण में पन्द्रह-पन्द्रह मात्रायें। इस प्रकार सात गण और एक गुरु भी पूरा हो जाता है। क्योंकि छठा गण एक लघु—एक मात्रा रूप—होता है। शेष छः गणों की २४ और गुरु की २ मात्राएँ सब मिलाकर सत्ताईस मात्रायें हो जाती हैं। गीति के समान यह भी अर्धसम छन्द है॥९॥

उद्गीतिलक्षणम्

१, २, ३. ४. ५. ६ल, ७,गु

S S I I S I I S S I I I I S I S S S S

आर्याशकलद्वितयं व्यत्यय-रचित भवेद्यस्याम्।

१, २, ३, ४, ५, ६ज, ७, गु

S S S I I I I S S S S S I S I S S S

सोद्गीतिः किल कथिता तद्वद्यत्यंशभेदसंयुक्ता॥ १०॥

सं० टी०—उद्गीतिं लक्षयति—**आर्या** इत्यादिना। **अन्वयः**—यस्याम् आर्याशकलद्वितयं व्यत्ययरचितं भवेत्, सा तद्वत् यत्यंशभेदसंयुक्ता किल 'उद्गीतिः' कथिता। **व्याख्या**—यस्याम्, आर्यायाः शकलद्वितयम्—खण्ड-द्वयम्, व्यत्ययेन—विपर्ययेण, रचितम्, भवेत्। अर्थात् पूर्वार्धः उत्तरार्धलक्षण-युक्तः उत्तरार्धश्च पूर्वार्धलक्षणयुक्तः स्यात्। सा—उक्तलक्षणा, तद्वत्—आर्यावत्, यत्या—विरामेण यः, अंशभेदः—पादभेदः, तेन संयुक्ता—सहिता, किल—प्रसिद्धौ, पिङ्गलादिभिराचार्यैरुक्तत्वात्प्रसिद्धिः 'उद्गीतिः' कथिता—प्रतिपादिता।

विपर्ययरचितेयमार्यारूपैव। अत एवेयमपि विषमच्छन्दः, प्रतिपादं भिन्नलक्षणसत्त्वात्। तथाहि-अस्याः प्रथमे चरणे द्वादश, द्वितीये पञ्चदश, तृतीये द्वादश, चतुर्थे चाष्टादशमात्रा भवन्ति। आर्याया उत्तरार्धं एकमात्रा-रूपैकलघुस्वरूपषष्ठगणसहितसप्तगणा एको गुरुश्चेति संकलिताः सप्तविंश-तिर्मात्राः। ताश्चेह पूर्वार्धे सन्ति। किं च—आर्यायाः पूर्वार्धं अपेक्षिता एकगुरु-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युतसगणानां त्रिंशन्मात्रा इहोत्तरार्धे सन्ति। आर्यावदिहापि विषमगणेषु जगणो न स्यादित्यवसेयम्। लक्षणसमन्वयस्तूक्त एव॥ उदाहरणान्तरं यथा—

एषा तवापरोद्गीतिरत्र विपुला परिभ्रमति।
तद्वल्लभापि यत् कीर्तिरखिलदिक्पालपार्श्वमुपयाति॥

अपि च—सकलं प्रसादयन्ती विमलतमा धूतविधुमाना।
नवकामिनीव कविजनशरणा सा बाणभारती भाति॥ १०॥

हि० टी०—जहाँ पर आर्या के दोनों भाग विपरीत क्रम से हों अर्थात् पूर्वार्ध को उत्तरार्ध और उत्तरार्ध को पूर्वार्ध बना लिया जाय तथा आर्या के समान ही यति और पाद व्यवस्था हो, उसको 'उद्गीति' कहते हैं।

उद्गीति के पूर्वार्ध में सत्ताइस मात्रायें होती हैं। गुरु सहित सात गण होते हैं। पर छठा गण एक लघु रूप होता है। उत्तरार्ध में सात गण गुरु सहित होते हैं जिससे तीस मात्रायें हो जाती हैं। इसके प्रथम तथा तृतीय चरण में बारह-बारह, द्वितीय में पन्द्रह और चतुर्थ में अठारह मात्रायें होती हैं। विषमगण जगण न होना चाहिये। आर्या के समान ही यह विषम छन्द है। भेद पूर्वार्ध के उत्तरार्ध और उत्तरार्ध के पूर्वार्ध बनने में है।

आर्यागीतिः -

१ २ ३ ४ ५ ६ज ७ ग ग
ऽ ऽ, ऽऽ ऽ, ।।, ।।ऽ,ऽ ऽ, । ऽ ।, ।।ऽ, ऽ, ऽ

आर्यापूर्वार्धं यदि गुरुणैकेनाधिकेन निधने युक्तम्।

१ २ ३ ४ ५ ६ज ७ ग ग
।।ऽ,ऽऽ।, ।।ऽ, ।ऽ।, ऽ।।, ।ऽ।, ऽऽ, ऽ, ऽ

इतरत्तद्वन्निखिलं दलं यदीयमुदितेयमार्यागीतिः॥ ११॥

सं० टी०—आर्यागीतिं लक्षयति—आर्या इत्यादिना। अन्वयः—यदि आर्यापूर्वार्धं निधने एकेन अधिकेन गुरुणा युक्तम्, (स्यात्)। (किं च) यदीयम् इतरद् दलं निखिलं तद्वत् (स्यात्)। इयम् आर्यागीतिः उदिता। व्याख्या—यदि, आर्यायाः पूर्वार्धम्, निधने—अन्ते, एकेन अधिकेन गुरुणा युक्तम्, स्यादिति शेषः। इदं पूर्वार्धलक्षणमुक्तम्, उत्तरार्धमपि पूर्वार्धसममेवे-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्याह—किं च, यदीयम्—यत्सम्बन्धि, यस्याः, इतरद्—अन्यत्, उत्तरार्धमिति यावत्, दलम्—भागः, निखिलं—समग्रम्, सर्वप्रकारेण गणसंख्या यतिचरण-भेदरूपेण, तद्वत्—पूर्वार्धवत्, स्यादिति शेषः। इयम्—उच्यमानलक्षणा, आर्यागीतिः—एतन्नाम्नी, उदिता—कथिता, पूर्वाचार्यैः पिङ्गलादिभिरिति शेषः।

आर्यागीत्याः पूर्वोत्तरार्धयोरपि अष्टौ अष्टौ गणा भवन्ति, किन्तु अष्टमो गणः अन्तगुरुरूप एव भवति। एवं च प्रतिभागे द्वात्रिंशन्मात्रा भवन्ति। सर्वाः संकलिताश्चतुष्षष्टिर्मात्राः। पथ्यासंयुक्ताया अस्याः प्रथमतृतीययोः प्रत्येकं द्वादश, द्वितीयचतुर्थयोश्च प्रत्येकं विंशतिर्मात्रा भवन्तीति फलितार्थः। एवं चपलादियुक्ताया अपि स्वयमूह्यम्। अत एवेयमर्धसमं छन्दः। विषमस्थलेषु जगणो न स्यादिति पूर्ववदेव बोध्यम्। लक्षणसमन्वयस्तु प्रदर्शितो रेखाङ्कितऽकारेण लक्षणपद्ये। तथाहि—सप्तगणानन्तरं 'युक्तम् ऽऽ' इत्यष्टमश्चतुर्मात्रारूपो गणः पूर्वार्धे, उत्तरार्धे च 'गीतिः ऽऽ' इत्यष्टमो गणः। इदमपरमुदाहरणम्—

अजमजरममरमेकं प्रत्यक् चैतन्यमीश्वरं ब्रह्म परम्।
आत्मानं भावयतो भवमुक्तिः स्यादितीयमार्यागीतिः॥

अत्र लक्षणसमन्वय उक्तप्रकारेण स्वयमूहनीयः॥ ११॥

हिं० टी०—यदि आर्या के पूर्वार्ध में अन्त में एक गुरु अधिक रख दिया जाय अर्थात् सातगणों के अनन्तर चार मात्रा का आठवां भी गण हो और उत्तरार्ध जिसका पूर्वार्ध के सर्वथा समान हो अर्थात् यति, चरण समाप्ति आदि भी पूर्वार्ध के जैसे ही हों—तो इसे आर्यागीति छन्द कहते हैं।

आर्यागीति अर्धसम छन्द है। इसके पूर्वार्ध उत्तरार्ध समान होते हैं। प्रत्येक में बत्तीस २ मात्रायें होती हैं। जब यह पथ्या मिश्रित हो तब प्रथम और तृतीय में बारह २, और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण में बीस २ मात्रायें होती हैं। चपलादियुक्त की मात्रायें प्रतिचरण की उन्हीं के अनुसार होंगी। प्रत्येक दल में आठ गण होते हैं। आठवां गण अन्तगुरु होना चाहिये। विषम गण यथापूर्व जगण न आना चाहिये। लक्षण वाक्य में ही पूर्वोक्त प्रकार से लक्षण का समन्वय कर लेना चाहिये॥ ११॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वैतालीयप्रकरणम् ।

(मात्रिकार्धसमानि)

वैतालीयलक्षणम्—

६ मात्रा र० ल गु ८ मात्रा र ल गु

S I I S, S I S, I S SI I I S S I S, I S I S

षड् विषमेऽष्टौ समे कलाः, ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः ।
न समाऽत्र पराश्रिता कलाः वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः ॥ १२ ॥

सं० टी०—अथ वैतालीयं लक्षयति—षडित्यादिना । **अन्वयः**—वैतालीये विषमे (पादे) षड् (कलाः) स्युः , समे (पादे) अष्टौ कलाः स्युः । अन्ते रलौ गुरुः । समे च ताः (कलाः) निरन्तरा नो स्युः । अत्र समा कला पराश्रिता न (भवति) । **व्याख्या**—वैतालीये—एतन्नामके छन्दसि, विषमे अर्थात् पादे, प्रथमे तृतीये च, षट्, कलाः—मात्राः स्युः । समे पादे द्वितीये चतुर्थे चरणे इत्यर्थः, अष्टौ कलाः स्युः । अन्ते—उक्तानां मात्राणां परस्तात् , द्वयोः समयोः विषमयोश्च पादयोः, रलौ-रगणलघू , गुरुश्च भवन्तीति शेषः । अयमाशयः—विषमे पादे चतुर्दश, समे च षोडश मात्राः अत्र कार्याः । तासु अन्तिमा अष्टौ मात्रा रगणलघुगुरुरूपाः कार्याः । एतावान् वैतालीये छन्दसि साधारणो नियमः ।

रगणलघुगुरुभ्योऽवशिष्टानां विषमे षण्णां समे चाऽष्टानां मात्राणां निवेशने विशेषनियममाह—ताश्चेति । समे पादे च ताः कला नि न्तराः—व्यवधानशून्याः, केवलाः अष्टौ यद् विषमे प्रथमे तृतीये तु नैव नियम इति तत्र यथेच्छं केवला लघवः प्रयोक्तुं शक्यन्ते इति । किञ्च अत्र-अवशिष्टासु षट्सु अष्टसु च कलासु, समा द्वितीया, चतुर्थी, षष्ठी च, कला—मात्रा, पराश्रिता—परया तृतीयपञ्चम-सप्तमकलया, आश्रिता—मिश्रिता, न, भवतीति शेषः । अयमभिप्रायः—द्वितीयतृतीययोः, चतुर्थपञ्चमयोः षष्ठसप्तमयोश्च कलयोरेकेन गुरुणोपादानं न कार्यम् । पराश्रितत्वस्यैव प्रतिषेधे पूर्वाश्रितत्व-मनुमतमिति लभ्यते । एष च नियमो वैतालीयस्य साधारणः । अत एव वैतालीयविशेषेषूदीच्यवृत्तिप्रभृतिषु तत्र तत्र विशेष उक्तः ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लक्षणसमन्वयो यथात्रैव प्रथमे पादे 'षड् विषमे ऽ ।।ऽ' इत्येतावत्पर्यन्तं षण्मात्राः, ततः 'ष्टौ समे ऽ ।ऽ' इति लघुमध्यो रगणः, ततश्च 'कलाः । ऽ' इति क्रमेण लघुगुरू। द्वितीये पादे च 'ताश्च ऽ। समे ऽ। स्युः ऽ' इत्येतावत्पर्यन्तमष्टौ मात्राः, ततः 'नी निर ऽ ।ऽ' इति लघुमध्यो रगणः, ततश्च 'न्तराः ।ऽ' इति क्रमेण लघुगुरू। एवं तृतीये चतुर्थेऽपि समन्वयः कार्यः। किं च नात्र समा कला पराश्रितेति चिह्नैः स्वयञ्ज्ञेयम्। इदं च वैतालीयं छन्दोऽर्धसमं वृत्तम्। अस्य समचरणयोः द्वितीयचतुर्थयोः, विषमचरणयोः प्रथमतृतीययोश्च परस्परं समानत्वात्।

उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

क्षुत्क्षीणशरीरसञ्चया व्यक्तीभूतशिरोऽस्थिपञ्जराः।
केशैः परुषैस्तवारयो वैतालीयतनुं वितन्वते॥

समन्वयः स्वयं विधेयः॥ १२॥

हिं० टी०—जिसके विषम–प्रथम और तृतीय–चरणों में ६ मात्रायें तथा सम–द्वितीय और चतुर्थ–चरणों में ८ मात्रायें हों और इन मात्राओं के अनन्तर दोनों सम विषम में एक रगण, एक लघु और एक गुरु क्रम से आयें उसे बैतालीय छन्द कहते हैं।

सम चरणों में मात्रायें निरन्तर न हों अर्थात् सब लघु रूप न हों, विषम में चाहे हों चाहे न हों। इसमें सम मात्रा-द्वितीय, चतुर्थ, छठी–आगे वाली तीसरी, पाँचवीं मात्रा तथा छठी और सातवीं मात्रा एक गुरु रूप में न हों। विषम मात्रा के लिये स्वतन्त्रता है।

तात्पर्य यह है कि वैतालीय छन्द के विषम चरणों में १४ और सम चरणों में १६ मात्रायें होती हैं तथा विषम में ६ और सम में ८ मात्राओं के बाद रगण लघु और गुरु होना चाहिये।

विषमपाद की प्रथम ६ मात्रायें प्रस्तार की रचना के अनुसार आठ प्रकार से आ सकती हैं—

१,	२,	३,	४,	५,	६,	७,	८,
ऽऽऽ	।।ऽऽ	ऽ।।ऽ	।।।।ऽ	ऽऽ।।	।।ऽ।।	ऽ।।।।	।।।।।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम पाद की प्रथम आठ मात्रायें उक्त प्रकार से १३ रूप में आ सकती हैं। वे प्रकार ये हैं—

१, २, ३, ४, ५, ६,

SSSS ||SSS |S|SS ||||||S SS||S ||S||S

७, ८, ९, १०, ११, १२, १३,

S||||S SSS|| ||SS|| S||S|| ||||S|| SS|||| ||S||||

वैतालीय का एक और उदाहरण हिन्दी का दिया जाता है। यथा—

६ मात्रा, र लगु ८ मात्रा, र लगु

| | | | | | S | S | S S S | | | | S | S | S

हर हर भज जाम आठहूँ। जंजालहिं तजि, कै करौ यही।

तन मन धन, दे लगा सबै। हर धामहिं जइहौ सखा सही॥

छन्दः प्रभाकर।

इस उदाहरण में विषम चरणों में 'हर हर भज' 'तन मन धन' यहाँ तक ६ मात्रायें हैं और 'जा S म। आ S' 'दे S ल। गा S' यह रगण और 'ठहूँ |S' 'सबै |S' यह लघु गुरु हैं। सम चरणों में 'जंजालहिं तजि' 'हर धामहिं जइ' यहाँ तक ८ मात्रायें और उसके आगे 'कै करौ' 'ये धरौ' ये रगण तथा 'यहीं' 'सही' लघु गुरु हैं।

वैतालीय छन्द मात्रिक अर्द्धसम है, क्योंकि इसके सम सम और विषम विषम चरण आपस में समान होते हैं॥ १२॥

औपच्छन्दसिकम्—

६ मात्रा, र य ८ मात्रा र य

S S S, S | S, | S S, S S S | |, S | S, | S S

पर्यन्ते यौं तथैव शेषं त्वौपच्छन्दसिकं सुधीभिरुक्तम्॥ १३॥

सं० टी०—अथ वैतालीयविशेषान्निरूपयन् तत्र प्रथममौपच्छन्दसिकं लक्षयति—पर्यन्ते इत्यादिना। इहान्वयः सरलः। यस्य वैतालीयस्येति तु अस्य प्राग् योज्यम्। तु—किन्तु, यस्य वैतालीयस्य पर्यन्ते-विषमसमचरणयोः षण्णामष्टानां च कलानामन्ते, यौं—रश्च यश्चेति द्वन्द्वः, रगणयगणौ इति यावत्, स्याताम्, शेषम्—षड्कलानियमादि, तथैव—पूर्वोक्तवैतालीयसामा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न्यलक्षणोक्तमेव स्यात्, तदा सुधीभिः–छन्दःशास्त्राचार्यैः, तत् औपच्छन्दसिकम्–एतत्संज्ञम्, उक्तम्।

अयम्भावः–यदि वैतालीयसामान्ये एव प्रतिचरणमेकस्य गुरोराधिक्यं क्रियते तर्हि औपच्छन्दसिकं नाम छन्दो जायते। एवं चौपच्छन्दसिकस्य समपादयोः प्रत्येकमष्टादश, विषमपादयोश्च प्रत्येकं षोडश मात्रा भवन्तीति लभ्यते। वैतालीयसामान्यनियमास्तु नात्र विस्मर्तव्याः।

उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

वाक्यैर्मधुरैः प्रतार्य पूर्वं, यः पश्चादभिसन्दधाति मित्रम्।
तं दुष्टमतिं विशिष्टगोष्ठ्यामौपच्छन्दसिकं वदन्ति बाह्यम्॥

लक्षणसमन्वयः स्वयमूह्यः॥ १३॥

हिं० टी०—जिस वैतालीय के अन्त में–अर्थात् विषम चरणों में ६ मात्राओं के और सम चरणों में ८ मात्राओं के बाद–रगण और यगण हों उसे छन्दःशास्त्र के विद्वान् 'औपच्छन्दसिक' छन्द कहते हैं।

तात्पर्य यह है कि वैतालीय सामान्य के प्रत्येक चरण में एक एक गुरु बढ़ा देने से औपच्छन्दसिक छन्द बन जाता है। इस प्रकार औपच्छन्दसिक के प्रत्येक चरण में वैतालीय की अपेक्षा एक गुरु की दो मात्राओं के बढ़ जाने से सम चरणों में प्रत्येक की १८ मात्रायें और विषम में प्रत्येक की १६ मात्रायें होती हैं। शेष सब बातें–सम चरणों में सब लघु न होना, सम मात्राओं का आगे की मात्रा से न मिलना आदि वैतालीय सामान्य के जैसे होती हैं। अन्य उदाहरण—

हर हर भज जाम आठहूँ तू। जंजालहिं तजि कै यहै करौ नू।
तन मन धन दे लगा सभी तू। हर धामहिं जइहौ हिये धरौ॥

इस पद के चारों चरणों में सामान्य वैतालीय की अपेक्षा एक एक गुरु बढ़ गया है। लक्षण का समन्वय स्वयं करना चाहिये॥ १३॥

आपातलिका—

६ मात्रा, भ गुगु ८ मात्रा भ गुगु
ऽऽ।।, ऽ ।।, ऽऽ, ऽ।। ऽ। ।, ऽ ।।, ऽ ऽ

आपातलिका कथितेयं भाद्गुरुकावथ पूर्ववदन्यत्॥ १४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—आपातलिकां लक्षयति—**आपातलिका** इत्यादिना। अत्राप्यन्वयः सुगमः। केवलं 'पर्यन्ते' इति 'सुधीभिः' इति च पदद्वयं पूर्वतोऽनुसञ्जनीयम्। यत्र पर्यन्ते—षण्णामष्टानां च मात्राणामन्ते भाद्-भगणाद् आदिगुरोः, गुरुकौ—द्वौ गुरू, स्याताम्। रगणलघुगुरूरसामान्यशक्तस्यापि शादोऽयम्। अथ अन्यत्—शेषम्, पूर्ववत्—वैतालीयवद् भवेत्। इयम्, सुधीभिः छन्दःशास्त्राचार्यैः 'आपातलिका' कथिता।

लक्षणसमन्वयस्त्वित्थम्—प्रथमे विषमचरणे 'आपातलि ऽऽ।।' इति षण्मात्राः, ततः 'काकथि ऽ।।' इति आदिगुरुर्भगणः, ततोऽपि 'तेयं ऽऽ' इति द्वौ गुरू। द्वितीये समे चरणे च 'भाद् गुरुकावथ ऽ।।ऽ।।' इत्येता अष्टौ मात्राः, अग्रे 'पूर्वव ऽ।।' इत्येष भगणः, ततश्च 'दन्यत् ऽऽ' इति गुरुद्वयम्। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

६ मात्रा भ गु गु ८ मात्रा भ गुगु
ऽ।।ऽ, ऽ।।, ऽऽ, ऽऽऽ ।।, ऽ।।, ऽऽ
पिङ्गलकेशी कपिलाक्षी, वाचाटा विकटोन्नतदन्ती।
आपतलिका पुनरेषा, नृपतिकुलेऽपि न भाग्यमुपैति॥

अत्र चिह्नानुसारं समन्वयो विधातव्यः। किञ्च चतुर्थचरणान्ते 'ति' इत्यस्य लघुत्वेऽपि पादान्तत्वात् 'वा पादान्ते गु' इति नियमाद् गुरुत्वं बोध्यम्॥ १४॥

हिं० टी०—जिसके विषम—प्रथम और तृतीय—चरणों में ६ मात्राओं के अनन्तर एक भगण तथा दो गुरु हों उस छन्द को छन्दःशास्त्रवेत्ता आपातलिका कहते हैं।

उदाहरण में समन्वय संस्कृत टीका में किया गया है। हिन्दी का एक उदाहरण और दिया जाता है—

६ मात्रा भगण गु गु ८ मात्रा भगण गु गु
।।।।।।, ऽ।।, ऽऽ, ऽऽ।।।।, ऽ।।, ऽऽ
हर हर भज, रात दिना रे। जंजालहिं तज या जग माहीं।
तन मन धन सों जपिहौ जो। हर धाम मिलत्र संशय नाहीं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चिह्नों के अनुसार उत्तरार्ध में भी समन्वय कर लेना चाहिये ॥ १४ ॥

दक्षिणान्तिका—

२-३ र लगु २-३ र लगु

। ऽ, । ऽ ऽ । ऽ, । ऽ, । ऽ । ऽ ऽ, ऽ । ऽ । ऽ

तृ-ती-ययुग्दक्षिणान्तिका स-म-स्तपादेषु द्वितीयलः ॥ १५ ॥

सं० टी०—दक्षिणान्तिकां लक्षयति—तृतीययुगित्यादिना। समस्तपादेषु समस्तेषु चतुर्ष्वपि चरणेषु, द्वितीयलः—द्वितीया मात्रा, लशब्दस्येह मात्रार्थः, तृतीययुग्—तृतीयया मात्रया युग्-युक्ता चेत्स्यात्, तदा दक्षिणान्तिका नाम छन्दो भवति। चेत्तदाशब्दावध्याहार्यौं। सर्वेषु चरणेषु द्वितीयो वर्णो गुरुरेव विधेय इति भावः। तत एव द्वितीया मात्रा तृतीयया युक्ता भविष्यति। अतः 'न समाऽत्र पराश्रिता कला' इति वैतालीयसामान्यलक्षणोक्तस्यायमपवादः। शेषं यथाप्राप्तमेव। यथात्रैव लक्षणवाक्ये द्वितीया मात्रा तृतीयया मिश्रिता। उदाहरणान्तरं यथा वैद्यनाथशास्त्रिणो नारायणीयटीकाटिप्पणे—

२-३ र लगु २-३ र लगु

।, ऽ, । ऽ, ऽ । ऽ, । ऽ ।, ऽ, । ऽ ऽ, ऽ । ऽ । ऽ

य-दी-यपादाब्जचिन्तया, प-ला-यनं पापानि कुर्वते।

सदैव भण्डासुरान्तकं, तमादिदेवं मानसे दधे ॥

पूर्वार्धे रेखाभिरुत्तरार्धे च स्वयं लक्षणसमन्वयो विधेयः। इयं वैतालीयौपच्छन्दसिकापातलिकापूर्वकत्वेन त्रिधा संभवति। लक्षणरूपमुदाहरणान्तरं च प्रदर्शितं वैतालीयमिश्रणे इत्थमवगन्तव्यम्। अस्मिन् भेदत्रयेऽपि विषमचरणयोः प्रस्तारचनया द्वौ विकल्पौ संभवतः, तौ चेमौ ॥ऽ।ऽ, ।ऽ॥। समयोश्चत्वारो यथा ॥ऽ।ऽऽ, ।ऽ॥।ऽ, ।ऽ।ऽ॥, ।ऽ॥॥, ॥ १५ ॥

हि० टी०—जिसके चारों चरणों में दूसरी मात्रा तीसरी से मिली हो अर्थात् दूसरी तीसरी मात्रा मिलकर एक गुरु हो उसे दक्षिणान्तिका कहते हैं।

सब चरणों में द्वितीय वर्ण गुरु होना चाहिये तभी दूसरी मात्रा तीसरी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मात्रा से मिली रहेगी। इस नियम के कारण वैतालीय का सम मात्रा का आगे वाली मात्रा से मिली न होना—यह सामान्य नियम नहीं लगता। शेष सब नियम इसमें लगेंगे। वैतालीय, औपच्छन्दसिक और आपातलिका के साथ इसका संमिश्रण होता है अतः यह तीन प्रकार की हो सकती है ॥१५॥

उदीच्यवृत्तिः—

१-३ मात्रा र लगु ८ मात्रा र लगु

।ऽ, ।ऽ, ऽ।ऽ, ।ऽ ऽ ऽ ऽ।।, ऽ।ऽ, ।ऽ

उदीच्यवृत्तिर्द्वितीयलः, सक्तोऽग्रेण भवेदयुग्मयोः ॥ १६ ॥

सं० टी०—उदीच्यवृत्तिं लक्षयति—उदीच्येत्यादिना। यदि अयुग्योः-विषमयोः प्रथमतृतीययोश्चरणयोः द्वितीयलः-द्वितीया मात्रा, लशब्दो मात्रार्थकः, अग्रेण-तदग्रे भवेन लेन, अग्रिमया मात्रयेत्यर्थः, सक्तः-युक्तः, मिश्रितो भवेत्, तदा उदीच्यवृत्तिरिति नाम छन्दो भवतीत्यर्थः। शेषं पूर्ववद्। लक्षणसमन्वयतु सरल एव। प्रथमे चरणे द्वितीयो वर्णः 'दी' इति दीर्घः। अत एकवर्णोपात्तत्वाद् द्वितीया मात्रा तृतीयया युक्तेह विद्यते। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

२, ३ मात्रा

अ–वा–चकमनूर्जिताक्षरं श्रुतिदुष्टं यतिदुष्टमक्रमम्।

२, ३ मात्रा

प्र–सा–द रहितं च नेष्यते कविभिः काव्यमुदीच्यवृत्तिभिः।

अत्र द्वितीया मात्रा 'वा' 'सा' इति चोभयोर्विषमयोश्चरणयोस्तृतीयासंयुक्ता।

इयमपि पूर्ववत् त्रिविधा संभवति। किञ्च–विषमयोः द्वौ विकल्पौ ।ऽ।ऽ, ।ऽ।।। इत्येवं रूपौ, समयोश्च पूर्वोक्तास्त्रयोदश। परस्परगुणेन षड्विंशतिः पूर्वार्धभेदाः। एतावन्त एवोत्तरार्धस्यापि। तेषामपि परस्परगुणेन २६ × २६ = ६७६ षट्शतानि षट्सप्ततिश्च भेदाः सर्वे उदीच्यवृत्तेर्भवन्ति। एवं पूर्वोक्तदक्षिणान्तिकादीनामपि भेदाः संभवन्ति। विस्तरभिया तु नोक्ताः ॥ १६ ॥

हि० टी०—जिस वैतालीय के विषम चरणों में दूसरी मात्रा तीसरी से मिली हो अर्थात् दूसरी मात्रा और तीसरी मात्रा मिलकर एक गुरु वर्ण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हां उसे उदीच्यवृत्ति कहते हैं। दूसरे वर्ण के गुरु होने से दूसरी मात्रा तीसरी से संयुक्त रहेगी। हिन्दी का एक उदाहरण रेखा सहित छन्दःप्रभाकर से दिया जाता है—

६ मात्रा   ८ मात्रा

२-३   र   लगु   र   लगु

। ऽ ।, । ।, ऽ । ऽ । ऽ   ऽ ऽ । ।, ।।, ऽ, । ऽ । ऽ

ह—रै—हिं भज जाम आठहू। जंजालहिं तजि कै करौ यही।

६ मात्रा   ८ मात्रा

२, ३   र   लगु   र   लगु

।, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, । ऽ   ऽ । ऽ । । ।, ऽ । ऽ, । ऽ

त—नै—मनै दे लगा सबै। पाइहौ परम धाम ही एही ॥ १६ ॥

प्राच्यवृत्तिः—

६ मात्रा र लगु ४, ५ ८ मात्रा र लगु

ऽ ऽ । ।, ऽ । ऽ, । ऽ, ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

पूर्वेण युतोऽथ पञ्चमः, प्राच्यवृत्तिरु-दि-तेति युग्मयोः ॥ १७ ॥

सं० टी०—प्राच्यवृत्तिं लक्षयति—पूर्वेणेत्यादिना। अन्वयः—अथ युग्मयोः पञ्चमो (लः) पूर्वेण युतः (स्यात्) तदा प्राच्यवृत्तिरिति उदिता। व्याख्या—अथ यदि, निपातानामनेकार्थत्वात् 'अथ' शब्दो यद्यर्थे। युग्मयोः—समयोः, अर्थात् पादयोः द्वितीयचतुर्थचरणयोः पञ्चमः, ल इति पूर्वतोऽनुवर्तनीयम्, पञ्चमी मात्रेत्यर्थः पूर्वेण चतुर्थेन, लेनेत्यर्थः, चतुर्थ्या मात्रयेति यावत्, युतः—संयुक्तः, मिलितः स्यादिति भावः। तदा एकेन गुरुणा चतुर्थपञ्चममात्रयोर्ग्रहणं यदि स्यादिति भावः। तदा प्राच्य-वृत्तिरिति—नाम्ना, उदिता—कथिता, पिङ्गलादिभिराचार्यैरिति शेषः। शेषं यथाप्राप्तम्। अत्रापि 'न समाऽत्र पराश्रिता कला' (वृ० र० २—१२) इति नियमो न, परेण विशेषणेन तस्य बाधात्।

यथात्रैव लक्ष्यरूपे लक्षणे द्वितीयचरणे 'वृ' इत्यस्य 'त्ति' इति संयोग-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परत्वेन गुरुतया तेनैव चतुर्थपञ्चममात्रयोरुपादानमिति भवति पञ्चममात्रायाः पूर्वयुतत्वम् । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

४,५

विपुलार्थसुवाचकाक्षराः, कस्य–ना (ऽ) म न हरन्ति मानसम् ।

४,५

रसभावविशेषपेशलाः, प्राच्य–वृ (ऽ)–त्तिकविकाव्यसम्पदः ।

अत्रापि द्वितीयचतुर्थयोः समचरणयोः पञ्चमी मात्रा । चतुर्थ्या मिश्रिता 'ना' 'वृ' इत्येकगुरुरूपा । शेषं सर्वं वैतालीयसामान्यवत् ।

इयमपि पूर्ववत् त्रिधा संभवति । विषमचरणयोः पूर्वोक्ता अष्टौ प्रकाराः समयोश्चत्वारः—

१, २, ३, ४,

।ऽ।ऽ।ऽ ।।।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।।। ।।।ऽ।।। इत्येते । परस्पर-गुणने द्वात्रिंशत् पूर्वार्धभेदाः । एतावन्त एवोत्तरार्धेऽपि । तयोरपि परस्पर-गुणने १०२४ भेदाः प्राच्यवृत्तेर्भवन्ति ॥ १७ ॥

हिं० टी०—यदि सम चरणों में पांचवीं मात्रा चौथी-से मिली हो अर्थात् चौथी और पांचवीं मात्रा एक गुरु के रूप में हो तो उस वैतालीय छन्द को (पिङ्गलादि आचार्यों ने) प्राच्यवृत्ति कहा है ।

इस लक्षण में ही—जोकि उदाहरण भी है—द्वितीयचरण में 'वृ' इस एक गुरु के द्वारा पांचवीं और चौथी मात्रा का ग्रहण हुआ है । इस लिये पांचवीं मात्रा से युक्त है । अतः यह प्राच्यवृत्ति है । दूसरा उदाहरण (छन्दःप्रभाकर)—

४,५

हर हर भज जाम आठहूँ । तज सबै (ऽ) भरम रे करौ यही ।

४,५

तन मन धन दै लगा सबै । पाइहौ (ऽ) परम धामहि सही ॥

इस में द्वितीय और चतुर्थ चरण में 'बै' 'हौ' इन गुरुओं के द्वारा चौथी पांचवीं मात्रा का ग्रहण किया गया है ॥ १७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रवृत्तकम्—

६ मात्रा   ८ मात्रा

२,३ , र , लगु   ४,५ , र , लगु

। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

य–दा समावोजयुग्मकौ, पूर्वं–यो–र्भवति तत्प्रवृत्तकम् ॥ १८ ॥

सं० टी०—प्रवृत्तकं लक्षयति—यदेत्यादिना। अन्वयः—यदा पूर्वयोः समौ ओजयुग्मकौ (क्रमेण स्याताम्) तदा तत् प्रवृत्तकं भवति। व्याख्या—यदा पूर्वयोः पूर्वोक्तयोरुदीच्यवृत्तिप्राच्यवृत्त्योः ओजयुग्मकौ–विषमसमपादौ, समौ–तुल्यौ, अर्थात् सहितौ क्रमेण अर्थात् उदीच्यवृत्तेर्विषमौ प्राच्यवृत्तेश्च समौ पादौ मिलित्वा, स्याताम्, तदा तत्–छन्दः प्रवृत्तकं नाम भवति। अयमाशयो यद् यत्र विषमपादयोर्द्वितीयतृतीयमात्रा योगः, समयोश्च चतुर्थपञ्चममात्रायोगः स्यात् तत्प्रवृत्तकं नाम वैतालीयं छन्दो भवति।

यथाऽत्रैव प्रदर्शिते उदाहरणरूपे लक्षणे प्रथमचरणे 'दा' इति एकेन गुरुणा द्वितीयतृतीयमात्रयोरुपादानम्, द्वितीयचरणे च 'यो:' इति एकेन गुरुणा चतुर्थपञ्चममात्रयोर्ग्रहणम् अतो विषमं प्रथमचरणमुदीच्यवृत्तेः, समं द्वितीयचरणं प्राच्यवृत्तेरित्युभयोः विषमसमचरणयोः सत्त्वाद् लक्षणं समन्वेति। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

२,३   ४,५

इदं (ऽ) भरतवंशभूभृतां श्रूयतां (ऽ) श्रुतिमनोरसायनम्।

२,३   ४,५

प–वि (ऽ)–त्रमधिकं शुभोदयं, व्यास–व (ऽ)–क्त्रकथितं प्रवृत्तकम्।

अत्र प्रथमे 'दं' तृतीये 'वि' इति गुरुद्वये द्वितीयतृतीयमात्रायोगः। द्वितीये 'तां' चतुर्थे 'व' इति चतुर्थपञ्चममात्रायोगः, शेषं सामान्यवत्समन्वेतव्यम्। अत्रापि प्रस्ताररचनया भूयसी भेदसंख्या संभवति। विस्तरभयात्तु तदुपेक्षा ॥ १८ ॥

हिं० टी०— यदि उदीच्यवृत्ति के विषम–प्रथम तृतीय–पादों से तथा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राच्यवृत्ति के सम-द्वितीय चतुर्थ-चरणों को मिलाकर छन्द बनाया जाय तो उसे प्रवृत्तक कहेंगे।

तात्पर्य यह है कि वैतालीय छन्द के विषम पादों में दूसरी और तीसरी तथा सम में चौथी और पाँचवीं मात्रा मिली हों अर्थात् एक गुरु से कही गई हों तो प्रवृत्तक होता है।

इस लक्षण में ही जो कि उदाहरण भी है विषम प्रथम चरण में 'दा' इस एक गुरु के द्वारा ग्रहण होने से दूसरी मात्रा तीसरी से मिली है और सम दूसरे चरण में 'यां:' इस एक गुरु के द्वारा ग्रहण होने से चौथी और पाँचवीं मात्रा मिली हैं। अतः विषम चरण उदीच्यवृत्ति का और सम चरण प्राच्यवृत्ति का होने से यह प्रवृत्तक है।

अन्य उदाहरण—

२,३ ४,५

ह—रै (ऽ)—हिं भज जाम आठहूं। तज स—बै (ऽ) भरम रे करौ यही।

२,३ ४,५

त—नै (ऽ) मनं दे लगा सबै। पाइ—हाँ (ऽ) परम धामहिं सही।

यहाँ प्रथम और तृतीय विषम चरणों में 'रै' 'नै' इन गुरुओं के द्वारा दूसरी और तीसरी मात्रा का ग्रहण हुआ है तथा द्वितीय और चतुर्थ सम चरणों में 'बै' 'हाँ' इन गुरुओं के द्वारा चौथी और पांचवीं मात्रा का ग्रहण हुआ है। इस लिये लक्षण समन्वय हो जाता है॥ १८॥

अपरान्तिका—(मात्रिकसमम्)

८ मात्रा र ल गु

ऽ । ऽ । । ।, ऽ ।ऽ, ।ऽ

अस्य युग्मरचिताऽपरान्तिका ॥ १९ ॥

सं० टी०—अपरान्तिकां लक्षयति—अस्य इत्यादिना। अस्य प्रवृत्तकस्य युग्मैः समपादैः या रचिता, सा अपरान्तिका नाम भवतीति शेषः। चतुर्ष्वपि पादेषु प्रत्येकं षोडशमात्रा स्युः, पञ्चमी मात्रा च चतुर्थीसंयुक्ता भवेदित्यर्थः।

इदं हि मात्रिकं समं छन्दः, चतुर्ष्वपि पादेषु समानलक्षणसत्त्वात्। अत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवैकेनैव पादेन लक्षणं कृतम्, तदेव चोदाहरणम्। समवृत्तं हि चरणानां समानत्वादेकस्मिन् ज्ञातेऽन्ये पादा अपि तत्समानतया विज्ञाता भवन्तीति तेषामेक एव पाद उदाह्रियते। यथात्रैव 'अस्य युग्मरचि' इत्येतावत्पर्यन्तम् अष्टौ मात्राः, तत्र च 'यु' इति पञ्चमी मात्रा चतुर्थीमिश्रिता। ततः 'ता परा' इति रगणः, 'न्तिका' इति क्रमेण गुरुलघू। अयमेकः पादः, एवमन्येऽपि पादाः कर्तव्याः। यथा वोदाहरणान्तरं छन्दोवृत्तौ—

८ मात्रा ८ मात्रा
४-५ ४-५ र लगु
। । । ऽ । । ।, ऽ । ऽ, । ऽ, । । । ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, । ऽ
स्थिरविलासनत-मौक्तिकावली, कमलकोमलाङ्गी मृगेक्षणा।

८ मात्रा ८ मात्रा
४-५ र लगु ४-५ र लगु
। । । ऽ । । ।, ऽ । ऽ, । ऽ । । । ऽ । । ।, ऽ । ऽ, । ऽ
हरति कस्य हृद-यं न कामिनः, सुरतकेलिकुशलापरान्तिका।

दर्शितरेखाभिः समन्वयो विधेयः। अस्या अपि वैतालीयादिपूर्वकत्वेन त्रैविध्यम्। ततः परस्परसंमिश्रणे पूर्ववद् २४२ भूयसी भेदसंख्या संभवति। विस्तरभिया तु तदुपेक्षा कृता ॥ १९ ॥

हिं० टी०—प्रवृत्तक के सम चरणों से यदि सम्पूर्ण छन्द रचा गया हो तो उसे अपरान्तिका कहते हैं। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक चरण में सोलह सोलह मात्रायें हों और पांचवीं मात्रा चौथी से मिली हो।

यह मात्रिक समवृत्त है। क्योंकि इसके चारों चरण समान लक्षण से युक्त हैं। समवृत्तों के एक चरण का लक्षण बता देना ही पर्याप्त होता है। अतएव अपरान्तिका के एक ही पाद का लक्षण किया गया है। शेष चरण भी इसी प्रकार बनेंगे। उदाहरण भी लक्षण वाक्य ही है। इस चरण में १६ मात्राय हैं और पांचवीं मात्रा चौथी से मिली है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूसरा उदाहरण (छन्दःप्रभाकर से)—

८ मात्रा ८ मात्रा

४-५ र लगु ४-५ र लगु

ऽ। ऽ ।।।, ऽ ।ऽ, ।ऽ ।। ।ऽ ।।।, ऽ । ऽ, । ऽ

शंभु को भजहु रे सबै घरी। तज सबै भरम रे हिये धरी।

८ मात्रा ८ मात्रा

४-५ र लगु ४-५ र लगु

ऽ । ऽ । ऽ, ऽ। ऽ, । ऽ ऽ। ऽ ।।।, ऽ। ऽ, । ऽ

त्यागिये सबै झूठ जालहीं। पाइहौ परम धाम ही सही।

लक्षणसमन्वय रेखा लगाकर कर दिया है॥ १९॥

चारुहासिनी—(मात्रिकसमम्)

२-३, ६ मात्रा र लगु

। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ

अयुग्भवा* चारुहासिनी॥ २०॥

सं० टी०—चारुहासिनीं लक्षयति—अयुग्मेत्यादिना। अस्येति पूर्वतोऽनुवर्तनीयम्। अस्य प्रवृत्तकस्य अयुग्भिः–विषमैः, अर्थात् पादैः, भवा जाता रचिता, अयुग्मगा इति पाठेऽपि समान एवार्थः, चारुहासिनी भवति। चतुर्ष्वपि चरणेषु प्रत्येकं चतुर्दश मात्राः स्युः, द्वितीया मात्रा च तृतीयया सम्बद्धा स्यात्, तत् चारुहासिनीनामकं वैतालीयं भवतीत्यर्थः। यथात्रैव प्रदर्शिते लक्षणे उदाहरणरूपे चतुर्दश मात्राः सन्ति 'युं' इति द्वितीये गुरुवर्णे च द्वितीया मात्रा तृतीयया संयुक्ता। इयं चारुहासिन्यपि समं वृत्तं चतुर्णामपि पादानां समानलक्षणलक्षितत्वात्। उदाहरणान्तरं यथा—

६ मात्रा ६ मात्रा

२-३ र लगु २-३ र लगु

। ऽ । ।।, ऽ । ऽ, । ऽ । ऽ। । ।, ऽ । ऽ, । ऽ

मनाक्प्रसृतदन्तदीधितिः, स्मरोल्लसितगण्डमण्डला।

---

* 'अयुग्मगा' इति पाठान्तरम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

६ मात्रा ६ मात्रा

२-३ र लगु २-३ र लगु

।ऽ।।।,ऽ।ऽ,।ऽ ।ऽ।।।, ऽ।ऽ,।ऽ

कटाक्षललिता तु कामिनी, मनोहरति, चारुहासिनी।

अत्र समन्वयो रेखाभिः प्रदर्शिताभिः कार्यः। अस्या अपि पूर्ववद् भूयसी भेदसंख्या वैतालीयौपच्छन्दसिकादिपूर्वकत्वे ततः परस्परमिश्रणे च संभवति ॥ २० ॥

हिं० टी०—यदि प्रवृत्तक के विषम चरणों में संपूर्ण छन्द की रचना हो तो उसे चारुहासिनी कहते हैं। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक चरण में चौदह मात्रायें हों और दूसरी मात्रा तीसरी से मिली हो। शेष वैतालीय के सामान्य नियमों के अनुसार ही हों।

जैसे इस उदाहरण रूप लक्षण वाक्य में ही १४ मात्रायें हैं 'यु' यह द्वितीय वर्ण गुरु है। इसमें दूसरी और तीसरी मात्रा मिली हैं। यह छन्द भी वैतालीय का ही भेद है। इसलिये वैतालीय के प्रत्येक भेद से युक्त प्रवृत्तक से यह बन सकता है। अपरान्तिका के समान यह भी समवृत्त है क्योंकि इसके चारों चरण समान लक्षण से लक्षित हैं। इसका अन्य उदाहरण (छन्दःप्रभाकर से)—

६ मात्रा ६ मात्रा

२-३ र लगु २-३ र लगु

। ऽ । ।।,ऽ। ऽ,। ऽ । ऽ ।ऽ,ऽ। ऽ,। ऽ

प्र–भू–हिं जप सर्व काल रे। त–जौ सबै मोह जाल रे।

६ मात्रा ६ मात्रा

२-३ र लगु २-३ र लगु

। ऽ ।ऽ, ऽ।ऽ,।ऽ ।ऽ ।ऽ,ऽ।ऽ, ।ऽ

ज–पौ यही रे सबै घरी। हरी हरी रे हरी हरी।

लक्षण समन्वय ऊपर रेखा लगाकर किया गया है ॥ २० ॥

इति वैतालीयप्रकरणम्।

———

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ अनुष्टुप्प्रकरणम् ।

(वार्णिकानि अष्टाक्षरपादानि समवृत्तानि अनुष्टुप्छन्दांसि ।)

वक्त्रलक्षणम्—

गु म य गुगु म य गु

ऽ, ऽ ऽऽ, । ऽ ऽ, ऽ ऽ, ऽऽ ऽ, । ऽ ऽ, ऽ

वक्त्रं नाद्यान्नसौ स्यातामब्धेर्योऽनुष्टुभि ख्यातम् ॥ २१ ॥

सं० टी०—वक्त्रं लक्षयति—वक्त्रमित्यादिना । **अन्वयः**—(यत्र) अनुष्टुभि आद्यात् नसौ न स्याताम्, अब्धेः यः (स्यात्) । तत् वक्त्रं ख्यातम् । **व्याख्या** – यत्र अनुष्टुभि–अनुष्टुप्नाम्न्यामष्टाक्षरपादात्मकवार्णिक-समवृत्तरूपायां जातौ आद्यात्-प्रथमात्, अर्थात् वर्णात्, ऊर्ध्वमिति शेषः । नसौ–नगणसगणौ सर्वलघु-अन्तगुरुरूपौ त्रिवर्णात्मकौ, न स्याताम्, नगण-सगणयोरेव निषेधादन्येषां गणानां स्थितिस्त्वनुमतेति लभ्यते । किं च–अब्धेः–समुद्रात्, चतुर्थादित्यर्थः, वर्णादेव, यः–यगणः आदिलघुरूपः, स्यादिति शेषः, तत् छन्दः, वक्त्रम्–वक्त्रमिति नाम्ना, ख्यातम्–प्रसिद्धम् । तस्य वक्त्र-मिति संज्ञेत्यर्थः । एष नियमः सर्वपादेषु । समपादयोश्च प्रथमवर्णाद् ऊर्ध्वं रगणो न भवतीत्यपि नियमः !

लक्षणसमन्वयो यथात्रैव 'वक्त्रं नाद्यान्नसौ स्याता' इति प्रथमे पादे प्रथमादक्षरादूर्ध्वं 'क्त्रं नाद्या' इति न नगणः, न च सगणः । चतुर्थाद् वर्णात् 'द्या' इत्यतो 'न्नसौस्या । ऽ ऽ' इति आदिलघुर्यगणोऽस्ति । एवं द्वितीयेऽपि पादे प्रथमात् 'म' वर्णात् 'ब्धेर्योऽनु' ऽ ऽ । इति न नगणः न च सगणः । चतुर्थात् 'नु' इति वर्णाच्च 'ष्टुभिख्या' । ऽ ऽ इति यगणो वर्तते । अपरमुदाहरणं यथा छन्दोवृत्तौ—

ल य य लल य य गु

।,। ऽ ऽ, । ऽऽ, ।, ।,। ऽऽ, । ऽ ऽ, ऽ

नव–धाराम्बुसंसिक्त–वसुधागन्धि निःश्वासम् ।

गु ज य गु य य गु

ऽ, । ऽ।,। ऽऽ, ऽ, । ऽ ऽ, ।,।ऽ ऽ, ऽ,

किञ्चिदुन्नत–घोणाग्रं, म–ही कामयते वक्त्रम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्र रेखाभिः समन्वयः कृतः। यद्यपि अनुष्टुप् वर्णवृत्तमिति तस्य तृतीयाध्याये वर्णवृत्तेष्वेव निरूपणं प्रासङ्गिकम्, नात्र मात्रावृत्तेषु। तथापि वक्त्रादीनामेषामनुष्टुप्प्रकाराणां न तथान्यवर्णवृत्तानामिव वर्णक्रमो नियतः! अपि तु क्वचिल्लघुगुरुनियम एवापेक्षित इति मात्रिकसमत्वादिहैव मात्रावृत्तप्रसङ्गे तन्निरूपितम्। मात्रिकेषु निरूपितत्वाद् वक्त्रादीनि मात्रिकाणीति तु भ्रम एव॥ २१॥

हिं० टी० – जिस अनुष्टुप् में–आठ अक्षर के वर्ण समवृत्त में–पहले वर्ण के आगे नगण और सगण न हो और चौथे वर्ण से आगे यगण हो उसका नाम पिङ्गलादि मुनियों ने वक्त्र कहा है।

यह नियम चारों चरणों के लिये है। सम चरणों में प्रथम अक्षर के आगे रगण भी नहीं आना चाहिये–यह भी नियम है। लक्षणसमन्वय लक्षण में ही रेखा लगाकर किया गया है।

इस वक्त्र प्रकरण में बताये हुए छन्द वर्णिक समवृत्तों में आठवीं जाति अनुष्टुप् के प्रकार हैं। यहाँ मात्रिक प्रकरण में इनका निरूपण यद्यपि कुछ अप्रासङ्गिक सा है तथापि वर्णवृत्त होते हुए भी इनमें वर्णों का क्रम उस प्रकार नियत नहीं 'जिस प्रकार अन्य वर्णवृत्तों में। इनमें कहीं कहीं गुरु लघु का नियम है अतः ये मात्रिकों के तुल्य प्रतीत होते हैं। परन्तु हैं ये वर्णिक। प्रस्तार की रचना से अनुष्टुप् के ये सब प्रकार बन सकते हैं। परन्तु फिर भी अनुष्टुप् का सामान्य लक्षण पूर्वाचार्यों ने कहा है। यथा–

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः॥

छन्दःप्रभाकर में भी कहा है—जामे पंचल षड गुरु, सप्तौला सम पाद को।
श्लोक अनुष्टुपै सोई, नेम ना जँह आन को॥

तात्पर्य यह है कि श्लोक के–श्लोक अनुष्टुप् को ही कहते हैं–सब चरणों में छठा गुरु और पांचवां लघु होता है दूसरे और चौथे पाद में सातवाँ लघु होता है और पहले और तीसरे पाद में गुरु॥ २१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पथ्यावक्त्रम्—

ल त ज गु गु म ज गु

।, ऽ ऽ ।, । ऽ ।, ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ, । ऽ ।, ऽ

युजोर्जेन सरिद्भर्तुः, पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम् ॥ २२ ॥

सं० टी०—वक्त्रभेदान् निरूपयन् तत्रादौ पथ्यावक्त्रं लक्षयति-युजोर्जेनेति। युजोः—समयोः, अर्थात् चरणयोः, सरिद्भर्तुः—समुद्रात्, चतुर्थात्, ऊर्ध्वमिति शेषः, जेन—जगणेन, (यदि युक्तं स्यात् तर्हि तत्) पथ्यावक्त्रम्, इति नाम, प्रकीर्तितम् प्रकथितम्, पिङ्गलमुनिनेति शेषः।

चतुर्थाक्षराज्जगणे सति पञ्चमसप्तमयोर्लघुत्वं षष्ठस्य गुरुत्वं च नियतमिति स्वयमुद्भवति। अन्यथा जगणो नैव संभवति। पथ्यावक्त्रं हि प्रचलितानुष्टुप्छन्दोमयमेव। तत्रापि सर्वेषु चरणेषु पंचमं लघु षष्ठं च गुरु भवति। केवलं सप्तमस्य लघुत्वं तत्र समपादयोर्नियतम्, विषमपादयोश्च तस्य दीर्घत्वमपेक्षितम्। इह तु सर्वेष्वेव चरणेषु सप्तमस्य लघुत्वमपेक्षितमिति भेदः। परन्त्वेतदनुकूलमपि सामान्यानुष्टुभो लक्षणं वर्तते तद्यथा—

पंचमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयोः।

गुरु षष्ठं तु पादानामन्येष्वनियमो मतः॥

अस्मिन् लक्षणे समचरणयोः सप्तमस्य लघुत्वं तु विहितम्, विषमयोर्दीर्घमेव स्यादिति नोक्तम्। न चेदमुक्तं यद्लघु न स्यात्। अतोऽप्रतिषिद्धत्वाल्लघु अपि संभवति। अप्रतिषिद्धमनुमतं भवतीतिन्यायात्। यथात्रैव चतुर्थादक्षरात् प्रथमे 'सरिद्भ' इति, द्वितीये 'प्रकीर्ति' इति जगणः। यथा वा—

भ ज

। ऽ, ऽ । ।, ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ऽ ऽ, । ऽ ।, ।

नित्यं नीतिनिषण्णस्य, राज्ञो राष्ट्रं न सीदति।

य ज

। । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ, । ऽ ।, ऽ

नहिं पथ्याशिनः काये, जायन्ते व्याधिवेदनाः॥

अत्र द्वितीये चतुर्थे चरणे चतुर्थाज्जगणः॥ २२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—जिसके सम चरणों में चौथे अक्षर के बाद जगण का प्रयोग हो उसे पथ्यावक्त्र कहा जाता है।

वह पथ्यावक्त्र अनुष्टुप् छन्द ही है। यह अधिक प्रचलित है। इन सभी अनुष्टुप् के भेदों में पांचवां वर्ण लघु और छठा गुरु अवश्य होना चाहिये। दूसरे और चौथे चरणों में सातवाँ भी लघु रहे। और शेष चरणों में चाहे गुरु रहे अथवा लघु इसका नियम नहीं।

विपरीतपथ्यावक्त्रम्—

ज य

ऽ । ऽ ऽ, । ऽ ।, ऽ, ।, ऽ,। ।, । ऽ ऽ, ।

*ओजयोर्जेन वारिधे, स्तदेव विपरीतादि ॥ २३ ॥

सं० टी०—विपरीतपथ्यावक्त्रं लक्षयति—ओजयोरित्यादिना। ओजयोः विषमपादयोः, प्रथमे तृतीये चरणे, वारिधेः—चतुर्थादक्षरात्, ऊर्ध्वमिति शेषः, जेन जगणेन प्रयुक्तेन हेतुना तदेव पथ्यावक्त्रमेव, विपरीतादि—विपरीतशब्द आदिर्यस्य तत् विपरीतपथ्यावक्त्रमित्यर्थः। भवतीति शेषः। समयोश्च सामान्यनियमेन यगण इति बोध्यम्। अयुजोरिति पाठेऽपि सैवार्थः।

यथात्रैव प्रथमे चतुर्थादक्षरादूर्ध्वं 'नवारि ।ऽ।' इति जगणः, द्वितीये समे पादे च 'परीता ।ऽऽ' इति यगणः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

ज य

ऽ।ऽऽ,।ऽ।, ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ, । ऽ ऽ, ऽ

भर्तुराज्ञानुवर्तिनी, या स्त्री स्यात् सा स्थिरा लक्ष्मीः।

ज य

ऽ ।ऽऽ, ।ऽ ।, ऽ ।।ऽऽ,।ऽऽ, ऽ

सा प्रभुत्वाभिमानिनी, विपरीता परित्याज्या॥

अत्र प्रथमे तृतीये चरणे चतुर्थादूर्ध्वम् 'नुवर्ति ।ऽ।' इति 'भिमानि ।ऽ।' इति च जगणः। समे द्वितीये चतुर्थे पादे च 'स्थिरा ल ।ऽऽ' इति 'परित्या ।ऽऽ' इति यगणः॥ २३॥

---

*'अयुजोः' इति पाठान्तरम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—यदि विषम चरणों में चतुर्थ अक्षर के बाद जगण हो तो उसे विपरीत पथ्यावक्त्र कहते हैं।

विषम चरणों में कहने से सम चरणों के लिये सामान्य नियम यगण का होना ही निश्चित प्रतीत होता है। अतएव यहाँ प्रथम चरण में चौथे अक्षर के बाद जगण और द्वितीय चरण में यगण प्रयुक्त किया गया है।२३।

चपलावक्त्रम्—

न य

। । ऽ ऽ, । । ।, ऽ, । ऽ ऽ ऽ, । ऽ ऽ, ऽ

चपलावक्त्रमयुजो-र्नकारश्चेत्पयोराशेः ॥ २४ ॥

सं० टी०— चपलावक्त्रं लक्षयति—चपलेत्यादिना। चेत् यदि अयुजोः विषमचरणयोः, पयोराशेः चतुर्थादक्षरात्, नकारः नगणः स्यात्, तदा तच्छन्दः चपलावक्त्रम्, भवतीति शेषः अत्रापि अयुजोरित्युक्ते समयोस्तु यगण एवेति लभ्यते।

यथात्रैव प्रथमे चरणे चतुर्थाद् वर्णाद् ऊर्ध्वम् 'क्त्रमयु ।।।' इति नगणः, द्वितीये च 'पयोरा ।ऽऽ' इति यगणः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न य

ऽ । ऽ ऽ, । । ।, ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ, । ऽ ऽ, ऽ

क्षीयमाणाग्रदशना, वक्त्रा निर्मांसनासाग्रा।

न य

ऽ । ऽ ऽ, । । ।, ऽ, । । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, ऽ

कन्यका वक्त्रचपला, लभते धूर्तसौभाग्यम् ॥

लक्षणसमन्वयो रेखाभिः कृतः ॥ २४ ॥

हिं० टी०—जिसके विषम चरणों में चौथे अक्षर के बाद नगण हो उसे चपलावक्त्र कहते हैं।

यहाँ केवल विषम चरणों के लिये कहने से सम चरणों में सामान्य नियम के अनुसार यगण का होना आवश्यक है। जैसे यहाँ प्रथम चरण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में चौथे अक्षर के बाद 'क्रमयु ।।।' यह नगण और द्वितीय चरण में 'पयोरा ।ऽऽ' यह यगण प्रयुक्त हुआ है। इसी प्रकार दूसरे उदाहरण में भी रेखाओं से समन्वय स्वयं कर लेना चाहिये ॥ २४ ॥

युग्मविपुला—

म र गु गु त स ल गु
ऽ ऽ ऽ, ऽ । ऽ, ऽ ऽ, ऽ ऽ ।, । । ऽ, । ऽ

यस्यां लः सप्तमो युग्मे, सा युग्मविपुला मता ॥ २५ ॥

सं० टी०—युग्मविपुलां लक्षयति—यस्यामित्यादिना। यस्यां पथ्यायां युग्मे समे द्वितीये चतुर्थे चरणे इत्यर्थः, सप्तमो वर्णः लः लघुः स्यादिति शेषः, सा युग्मविपुला मता सम्मता।

यद्यपि पथ्यायामपि समयोः सप्तमो लघुरस्ति, तथापि तत्र जगणेनैव इह तु नभजत गणैः सप्तमस्य लघुत्वमिति हेतोर्न साङ्कर्यम्। तथापि जगणपक्षे साङ्कर्यमस्त्येवेति चेत् तर्हि तत्र संज्ञाविकल्प एव भवतु, यदुभे संज्ञे चतुर्थादूर्ध्वं जगणेन सप्तमे लघू भवतः। यथात्रैव द्वितीये 'म' इति सप्तमो लघुः। उदाहरणान्तरं यथा पथ्यावक्त्रोदाहरणम्—'नित्यं नीतिनिषण्णस्य' इत्यादि। इह समे द्वितीये 'द' इति चतुर्थे 'द' इति सप्तमो लघुवर्णः। विषमयोस्तु सप्तमो गुरुः।

हिं० टी०—जिस पथ्या के सम चरणों में सातवां वर्ण लघु हो उसे युग्मविपुला कहा जाता है।

युग्मविपुला के विषम चरणों में सातवां वर्ण गुरु रहना चाहिये। अत एव आगे सैतव आचार्य का मत सङ्गत होगा कि सब चरणों में सातवाँ लघु हो। अन्यथा मतभेद रहता ही नहीं। सैतव का मत दिखलाने से स्पष्ट मालूम पड़ता है कि ग्रन्थकार का सैतव आचार्य से मतभेद है।

यद्यपि पथ्यावक्त्र में भी समचरणों में सातवां वर्ण लघु होता है तथापि वहाँ चौथे अक्षर के बाद केवल जगण के प्रयुक्त होने से सातवां वर्ण लघु होता है और यहाँ नगण, भगण, जगण और तगण के प्रयुक्त होने से। हाँ, जगण पक्ष में यद्यपि फिर भी भेद नहीं सिद्ध होता तथापि संज्ञा भेद हो इस पक्ष में समझना चाहिये ॥ २५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विपुला (सैतवमतेन)—

ल

ऽ । ऽऽ । ऽ । ऽ

सैतवस्याखिलेष्वपि ॥ २६ ॥

पिङ्गलमतेन विपुलामुक्त्वा संप्रति सैतवमतेनाह—सैतवस्येत्यादिना। सप्तमो ल इति पूर्वतोऽनुवर्तनीयम्। अखिलेषु समस्तेषु, अर्थात् चरणेषु यत्र सप्तमो लघुः, सा विपुलेति सैतवस्य मतमित्यर्थः। तथा चोक्तं वृत्तरत्नाकरसेतौ—

स्यात्सप्तमो यत्र लघुश्चतुर्षु चरणेषु सा।
विपुलोक्ता सुमतिभिः सैतवस्य मतेन हि॥

यथात्रैवैकस्मिन् प्रदर्शिते चरणे 'ष्व' इति सप्तमो लघुः। चतुर्णां चरणानामिह समानत्वादेकेनैव लक्षितमुदाहृतं च। यथा च—

ल ल
। ।
सैतवेन पथार्णवं, तीर्णो दशरथात्मजः।
ल ल
। ।
रक्षःक्षयकरीं पुनः, प्रतिज्ञां स्वेन बाहुना॥

अत्र चतुर्ष्वपि चरणेषु रेखाङ्कितः सप्तमो लघुः।

हिं० टी०—सैतव आचार्य का मत है कि विपुला के चारों चरणों में सातवाँ वर्ण लघु होता है।

जैसे संस्कृत टीका में दिये हुए 'सैतवेन' इस पद्य में 'र्ण' 'त्म' 'पु' 'हु' ये क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ चरण में सातवें वर्ण लघु हैं॥ २६॥

भविपुला—

भ

ऽ ऽ । ऽ' ऽ । ।, ऽ

भेनाब्धितो भाद्विपुला॥ २७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ विपुलाभेदान्निरूपयन् प्रथमं भविपुलामाह—भेनेति। अन्वितः चतुर्थात् वर्णात्, ऊर्ध्वमिति शेषः, भेन भगणप्रयोगेण भात्—भ इति वर्णात् परा, विपुला, भविपुलेत्यर्थः। भवतीति शेषः। सप्तमो लघुस्तु सामान्य-लक्षणप्राप्त एव। केचिदत्र[1] 'अखिलेषु' इत्यनुवर्त्य समस्तचरणेषु चतुर्थाद् भगणमिच्छन्ति। वृत्तिकारस्तु विषमपादविषयकमेवैतं नियममाह। अथास्योदाहरणं यथाऽत्रैव चतुर्थाद् वर्णात् परः 'माद्विपु' इति भगणः। यथा वा वृत्तौ—

भ ज

।ऽ।ऽ, ऽ।।,ऽ ।ऽऽ ऽ, । ऽ ।,ऽ

इयं सखे चन्द्रमुखी, स्मितज्योत्स्ना च मानिनी।

भ ज

ऽऽ।ऽ,ऽ ।।,ऽ ऽ।ऽ।, ।ऽ।,ऽ

इन्दीवराक्षी हृदयं दन्दहीति तथापि मे।

अत्र प्रथमतृतीयचरणयोश्चतुर्थात् वर्णात्परः 'चन्द्रमु' इति 'क्षी हृद' इति भगणः॥

हिं० टी०—यदि चतुर्थ वर्ण के बाद भगण हो तो उसे भविपुला कहते हैं।

१—अत्र विषये वृत्तरत्नाकरसेतौ यदुक्तं तदविकलमुद्ध्रियते—'चतुर्षु चरणेषु चतुर्थाद्भगणप्रयोगेण भविपुला स्यात्। अत एवैकेन चरणेनेयं लक्षिता। यत्तु सुलक्षणेनोक्तं विषमपादयोर्भगणप्रयोगेण भविपुलेति, तन्न। 'भ्रौ न्तौ च' इति सामान्यतश्चतुर्थाद् भगणेन भविपुलायाः सूत्रकारेण लक्षितत्वाद् विषमपादयोरित्यत्र मानाभावात्। यदपि—'भ्रौ न्तौ च' इत्यत्र 'च शला युजोर्न' इति 'सूत्रादयुग्ग्रहणमनुवर्तते इति वृत्तिकारेणोक्तम्, तदपि न। 'सर्वतः सैतवस्य' इति सूत्रात् संनिहितस्य सर्वपदस्यैवानुवृत्तेर्युक्तत्वात्। 'विपुला युग्लः सप्तमः' इति सूत्रे युग्ग्रहणेन व्यवहितपदानुवृत्तिर्नास्तीति सूत्रकृता ज्ञापितत्वाच्च 'इति'।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुछ लोगों का मत है कि चारों चरणों में भगण होना चाहिये। पर वृत्तिकार केवल विषम चरणों में ही भगण का होना आवश्यक समझते हैं। संस्कृत टीका में दिये 'इन्दीवराक्षी' इत्यादि पद्य में प्रथम और तृतीय चरण में चतुर्थ वर्ण के बाद 'चन्द्रमु' 'क्षीहृद' यह भगण हैं ॥ २७ ॥

रविपुला—

र
ऽ । ऽ ऽ, ऽ । ऽ, ऽ
इत्थमन्या रश्चतुर्थात् ॥ २८ ॥

सं० टी०—रविपुलां लक्षयति—इत्थमित्यादिना। चतुर्थाद् वर्णात् चेत् रगणः रगणप्रयोगः, तदा इत्थमन्या—यथा भात् विपुला तथैव राद्विपुला रविपुलेत्यर्थः।

यथात्रैव चतुर्थाद् वर्णात् 'रश्चतु' इति रगणः। यथा वा—

र　　　　ज
ऽ ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ, । ऽ । ।, । ऽ ।, ऽ
लक्ष्मीपतिं लोकनाथं रथाङ्गधरमीश्वरम्।
र　　　　ज
ऽ ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ, । । ऽ ।, । ऽ ।, ऽ
यज्ञेश्वरं शार्ङ्गपाणिं प्रणमामि त्रयी तनुम्।

अत्र प्रथमतृतीयचरणयोश्चतुर्थात्परः 'लोकना' 'शार्ङ्गपा' इति रगणः ॥ २८ ॥

हिं० टी०—यदि चतुर्थ वर्ण के बाद रगण हो तो रविपुला होती है।

जैसे संस्कृत टीका में दिये 'लक्ष्मीपति' इस पद्य में प्रथम तृतीय चरण में चतुर्थ वर्ण के बाद 'लोकना' 'शार्ङ्गपा' यह रगण है ॥ २८ ॥

नविपुला—

न
ऽ । ऽ ऽ, । । ।, ऽ
नोऽम्बुधेश्चेन्नविपुला ॥ २९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—नविपुलां लक्षयति—नोऽम्बुधेरिति। अम्बुधेः—चतुर्थाद् वर्णात् चेत् नः—नगणः स्यात्तर्हि नविपुला भवति।

यथात्रैव चतुर्थाद् वर्णात्परः 'नविपु' इति नगणः। यथा वा—

न

। । ।

युयुत्सुनेव कवचं किमामुक्तमिदं त्वया।

न

। । ।

तपस्विनो हि वसते केवलाजिनवल्कले ॥ (कि० ११-१५)

अत्र चतुर्थात्परौ रेखाङ्कितो नगणौ ॥ २९ ॥

हिं० टी०—यदि चतुर्थ वर्ण के आगे नगण हो तो उसे नविपुला कहते हैं।

जैसे 'युयुत्सुना' इस पद्य में चतुर्थ वर्ण से आगे 'वकव' 'हिवस' यह क्रमशः प्रथम और तृतीय चरण में नगण हैं ॥ २९ ॥

तविपुला—

त

ऽ ऽ ।

तोऽब्धेस्तत्पूर्वाऽन्या भवेत् ॥ ३० ॥

सं० टी०—तविपुलां लक्षयति—तोऽब्धेरिति। अब्धेः—चतुर्थात्परस्तगणश्चेत्तदा तत्पूर्वा तकारपूर्वा अन्या विपुला, तविपुलेत्यर्थः, भवतीति शेषः।

यथात्रैव 'र्वोन्याभ' इति तगणः। यथा वा—

त

ऽ ऽ ।

सा वैदुष्ये प्रौढिर्यदि, सर्वशास्त्रानुगामिनी।

त

ऽ ऽ ।

सा शूरता प्रौढा यदि, सर्वशस्त्रानुगामिनी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्र प्रथमे तृतीये चरणे चतुर्थाद् वर्णात्परौ रेखाङ्कितौ तगणौ। एवं मगणेन मविपुला यगणप्रयोगेण यविपुलेत्येवं भूयसी भेदसंख्या विपुलायाः संभवति। किञ्चैतेषां प्रकाराणां परस्परसंमिश्रणेनापि भूयांसः प्रकाराः संभवन्ति। सन्ति च सर्वेऽप्येतेऽनुष्टुप्प्रकारास्तत्र महाकाव्यादिषु प्रयुक्ताः। इदमवश्यमवधेयं यच्छन्दसो लयः शोभनः स्यात्। लयविहीनानि च्छन्दांसि न शोभन्ते, न च रोचन्ते कस्मैचित् सहृदयाय। वर्णवृत्तस्याप्यस्यानुष्टुपो मात्रिकेषु निरूपणमत एव, यतो मात्रिकेषु लयः श्रवणमधुरो भवति। लये माधुर्यापादनार्थं सर्वथा प्रयतनीयम्।

अत्र सेतुः—अत्रान्याग्रहणान्मयसगणैर्विपुलात्रयमनुक्तमपि ज्ञेयमिति प्राञ्चः। सूत्रादावनुक्तत्वादप्रमाणमिति नव्याः। अयन्तेषामाशयः–विशेषलक्षणैर्यदाक्रान्तं तस्य तेन तेन नाम्ना व्यवहारः, यत्त्वनाक्रान्तं तस्यानुष्टुबिति सामान्यजातिनाम्ना व्यवहार इति न लक्ष्यविरोधः, इति। वस्तुतस्तु सर्वेषाम् 'अनुष्टुप्' इति नाम्नैव व्यवहारो दृश्यते, न तु तत्तद्विशेषनाम्नेति बोध्यम्॥३०॥

हि० टी०—यदि चतुर्थ वर्ण के आगे तगण हो तो तविपुला होती है। जैसे 'सा वैदुष्ये' इस पद्य में 'प्रौढिर्ये' यह प्रथम चरण में 'प्रौढाय' यह तृतीय चरण में तगण है।

इसी प्रकार चतुर्थ वर्ण के बाद मगण के प्रयोग से मविपुला, यगण के प्रयोग से यविपुला आदि अनेक भेद विपुला के हो सकते हैं। तथा इनके परस्पर मिश्रण से तो भेद संख्या बहुत हो जाती है। परन्तु इस अनुष्टुप् की रचना में विशेष ध्यान लय का रखना आवश्यक है। वर्णवृत्त होते हुए भी अनुष्टुप् का मात्रिकों में निरूपण इसी लिये है कि मात्रिकों के समान इसमें भी लय की मधुरता रहे। मात्रिक वृत्तों की लय अधिक श्रवण-मधुर होती है इसी लिये काव्यादिकों में लययुक्त अनुष्टुप् का ही प्रयोग मिलता है। सब को अनुष्टुप् सामान्य नाम से ही कहा जाता है। लय का माधुर्य सब चरणों में पांचवां लघु और छठा गुरु होने से तथा सम चरणों में सातवें के लघु होने से होता है। प्रायः प्रयोग में आये हुए अनुष्टुप् पद्यों में ऐसा पाया जाता है॥ ३०॥

इत्यनुष्टुप्प्रकरणम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ मात्रिकसमप्रकरणम्।

अचलधृतिः—

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६

। । । । । । । । । । । । । । । ।

द्वि—क-गु-णि-त—व-सु—ल—घु—र—च—ल—धृ—ति-रि-ति॥३१॥

मात्रासमानि निरूपयन् तत्रादावचलधृतिं लक्षयति—द्विकगुणिते-त्यादिना। वसवः-अष्टौ, द्विकगुणिता वसव इति द्विकगुणितवसवः, षोडशेत्यर्थः। षोडश लघवो मात्रा यस्यां सा अचलधृतिर्नाम। प्रत्येकं षोडश-लघुपरिमिताश्चत्वारः पादा अस्या भवन्ति। पिङ्गलमुनिरेनां गीत्यार्येति नाम्ना व्यपदिशति।

द्विगुणितवसुपदस्योत्तरत्रानुवृत्तिर्भवति। तेन मात्रासमकादिषु षोडश-मात्रात्वमधिकृतं वेदितव्यम्। अस्मिन् मात्रासमकप्रकरणे केवलं षोडशमात्रात्म-कानामेव छन्दसां निरूपणं कृतम्। अन्यसंख्यकमात्रात्मकान्यपि छन्दांसि संभवन्तीति बोध्यम्। उदाहरणं यथात्रैव लक्षणे पादात्मके षोडशमात्रा लघुरूपाः। यथा वा—

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६

म—द-क-ल-ख-ग-कु-ल-क-ल—र-व—मु-ख—रि-णि।
वि—क-सि-त-स-र-सि-ज-प-रि—म-ल—सु-र—भि-णि।
गि-रि—व-र—प-रि-स-र-स-र—सि, म—ह-ति, ख-गु।
र-ति—र-ति-श-य-मि-ह, म-म, हृ—दि, वि-ल-स-ति।

अत्र प्रतिपादं षोडशमात्रा लघुरूपाः॥ ३१॥

हिं० टी०—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में १६ लघु हों उसे अचलधृति कहते हैं। जैसे ऊपर लक्षण में ही १६ मात्रायें लघुरूप हैं और 'मदकल' इत्यादि पद्य के प्रत्येक चरण में १६ लघु हैं।

यद्यपि यह वर्ण छन्द मालूम पड़ता है तथापि इस प्रकरण में १६ मात्रा के चरण वाले छन्द बतलाये जायँगे, यह सूचित करने के लिये यहाँ कहा गया है। अतः आगे बताये जाने वाले छन्दों के प्रत्येक चरण १६ मात्रा के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होंगे यह निश्चय है। यह भी ध्यान रहे कि १६ मात्रा के छन्दों के अतिरिक्त भी मात्रिक सम छन्द होते हैं पर यहाँ नहीं बतलाये गये हैं। ॥ ३१ ॥

मात्रासमकम्—

१, २ ३, ४ ५ ६ ७,८ ९ल १० ११, १२ १३, १४ १५, १६
मा—त्रा—स-म-कं न—व -मो— —ल्गा—न्तम् ॥ ३२ ॥

सं० टी०—मात्रासमकं लक्षयति—मात्रासमकमित्यादिना। अत्र षोडशमात्रापादच्छन्दसि नवमो ल्—नवमी मात्रा लघुः स्यात्, गान्तम्—गः गुरुरन्ते यस्य तत्तथाभूतम्, अन्तिमो वर्णो गुरुरेव स्यादित्यर्थः, तन्मात्रासमकं नाम छन्दो भवति। नवमान्त्ययोर्लघुगुरुनियमात् शेषेष्वनियमः सूचितः।

उदाहरणं यथात्रैव 'न' इति नवमो लघुः, 'न्तं' इति अन्तिमो गुरुश्च। सर्वाश्च मात्राः षोडश। यथा वा वृत्तौ—

लघु लघु
ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ
अश्मश्रुमुखो वि—रलैर्दन्तै—र्गम्भीराक्षो मि—तनासाग्रः।
लघु लघु
ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । । । ऽ ऽ
निर्मांसहनुः स्फुटितैः केशै—र्मात्रासमकं ल—भते दुःखम् ॥

अत्र सर्वेषु चरणेषु नवमी मात्रा लघुः, अन्तिमो वर्णश्च गुरुरिति रेखाभिर्निरूपितम्। मात्रासमेषु सममात्रा परेण युक्ता न विधेयेत्यपि संप्रदायः ॥ ३२ ॥

हिं० टी०—१६ मात्रा के चरण वाले जिस मात्रिकसम छन्द के प्रत्येक चरण में नवीं मात्रा एक लघुरूप हो और अन्तिम वर्ण गुरु हो उसे मात्रासमक कहते हैं।

जैसे यहाँ लक्षणवाक्य में 'न' यह नवीं मात्रा लघु है और अन्तिम वर्ण 'न्तम्' यह गुरु है। 'अश्मश्रुमुखी' इस पद्य के प्रत्येक चरण में भी नवीं मात्रा लघु और अन्तिम वर्ण गुरु है ॥ ३२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विश्लोकः—

जगण

१,२ ३,४ ५ ६,७ ८ ९,१० ११,१२ १३,१४ १५,१६

जो न्ला-व(।)-था (ऽ)-म्बु (।)—धे—र्वि——श्लो——कः ॥३३॥

सं० टी०—विश्लोकं लक्षयति—ज्रो इति। अम्बुधेः–चतुर्थ्या मात्रायाः, मात्रावृत्तप्रसङ्गात् चतुर्थी मात्रास्वेव ग्राह्यः। ऊर्ध्वमिति शेषः। जः–जगणः स्यात्, शेषं प्राग्वत्, तदा विश्लोक इति नामकं छन्दो भवति। अथ–अथवा, अथेत्यव्ययमिह विकल्पार्थे। चतुर्थमात्रातो, न्लौ–नगणो लघुश्च अर्थात् चत्वारो लघवः, यस्य स्युः, तस्यापि विश्लोक इति संज्ञा भवति।

यथात्रैव 'वथाम्बु। ऽ।' इति चतुर्थमात्रापरो जगणः। लघुचतुष्टयपक्षे– 'जो न्लावथ जलधेर्विश्लोकः।।।।' इति लक्षणं रचनीयम्। अत्र 'वथजल' इति चत्वारो लघवः। यथा वा—

जगण गु जगण गु

। ऽ। ऽ । ऽ। ऽ

यो नैव चिन्तयेत्ते पादौ, नामापि न स्मरेज्जातु।

जगण गु जगण गु

। ऽ। ऽ । ऽ। ऽ

नूनं कृपानिधे हे मात-र्लोके स जायते विश्लोकः।

न० ल गु न० ल गु

।।।। ऽ ।।।। ऽ

अपिच—भ्रातर्गुणरहितं विश्लोकं दुर्णयकरणकदर्थितलोकम्।

न० ल गु न० ल गु

।।।। ऽ ।।।। ऽ

जातं महि-न्त-कुलेऽप्यविनीतं, मित्रं प-रि-ह-र साधुविगीतम्।

इदं नगणलघुपक्षे उदाहरणम् ॥ ३३ ॥

हिं० टी०—यदि चतुर्थ मात्रा के बाद जगण अथवा नगण लघु हों तो उसे विश्लोक कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उदाहरण दोनों पक्ष के संस्कृत टीका में दिये गये हैं और समन्वय रेखाओं के द्वारा कर दिया गया है ॥ ३३ ॥

वानवासिका—

जगण

१,२ ३ ४ ५,६ ७,८ ९ १०,११ १२ १३,१४ १५,१६

। ऽ ।

त—द्यु-ग-ला—द्वा-न—वा—सि—का स्यात् ॥ ३४ ॥

सं० टी०—वानवासिकां लक्षयति–तद्युगलादिति। यत्र षोडशमात्रा-पादात्मके छन्दसि प्रतिपादं, तद्युगलात्—तस्य अम्बुधेः, चतुर्णाम्, युगलात्–युगात् अष्टाभ्य इत्यर्थः, मात्राभ्य इति शेषः। 'जो न्लौ' इति पूर्वतोऽनुवर्तनीयम्। जगणः, नगणलघू वा स्याताम्, तच्छन्दो वानवासिका इति नामकं स्यात्।

तद्यथात्रैव अष्टाभ्य मात्राभ्य ऊर्ध्वम् 'नवासि' इति जगणः। न्लपक्षे—

८ मात्रा न० ल

ऽ । ऽ । ऽ, । । । ।, ऽ ऽ

'वानिवासिका जलधियुगात्स्यात्' इति लक्षणम्। जगणपक्षे उदाहरणान्तरं यथा वैद्यनाथशास्त्रिणः—

या निजभर्तुर्हिताय नित्यं, दुःखसुखे मन्यते तृणाभ्याम्।
स्मेरमुखा स्वप्रियप्रिया स्तात्, सा रमणी वानवासिकाऽपि।

८ मात्रा न० ल

ऽ । । ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ

इह स्वयं लक्षणं संगमनीयम्। नगणलघुपक्षे 'लोकहितार्थं हरिहरमूर्ती' इति। अत्र अष्टमात्रानन्तरं 'हरिहर' इति नगणलघू।

हिं० टी०—जिस १६ मात्रा के चरण वाले छन्द के प्रतिचरण में ८ वीं मात्रा के बाद जगण अथवा नगण लघु रूप चार लघु हों उसे वानवासिका कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जैसे इसी लक्षण वाक्य में ८ वीं मात्रा के बाद 'नवासि' यह जगण है और 'या निजभर्तुः' इत्यादि संस्कृत टीका में दिये पद्य के प्रतिचरण में ८ वीं मात्रा के बाद जगण है। 'लोकहितार्थम्' इत्यादि पद्य खण्ड में ८ वीं मात्रा के बाद नगण लघु रूप चार लघु हैं ॥ ३४ ॥

चित्रा—

५ ल   ८ल ९ल

ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ

बा–णा–ष्ट–न–व–सु यदि लश्चित्रा ॥ ३५ ॥

सं० टी०—चित्रां लक्षयति—बाणाष्टेति। बाणाः—पञ्च। यत्र पञ्चमाष्टमनवम्यो मात्रा लघुरूपाः, अन्यत्सर्वं शेषः पूर्ववत्स्यात्, तत् छन्दः चित्रा इति नाम भवति। यथात्रैव लक्षणवाक्ये 'ष्ट' 'सु' 'य' इत्येते पञ्चमाष्टमनवम्यो मात्रा लघुरूपाः। यथा वा—

५ ल ८ल ९ल   ५ल ८ल ९ल

। । ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । । । ऽ ऽ

यदि वाञ्छसि प–र–प–दमारोढुं, मैत्रीं प–रि–ह–र स–ह वनिताभिः।

५ल ८ल ९ल   ५ल ८ल ९ल

ऽ । । । । । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ

मुह्यति मु–निरपि विषयासङ्गात् चित्रा भ–वति हि म–नसो वृत्तिः ॥

अस्मिन् पद्ये प्रतिचरणं पञ्चमाष्टमनवम्यो मात्रा लघुरूपाः ॥ ३५ ॥

हिं० टी०—जिस १६ मात्रा के चरण वाले समछन्द के प्रत्येक चरण में पांचवीं, आठवीं और नवीं मात्रा लघुरूप हो उसे चित्रा कहते हैं।

जैसे यहीं लक्षण वाक्य में 'ष्ट' 'सु' 'य' ये क्रमशः पांचवीं, आठवीं और नवीं मात्रा लघुरूप हैं। 'यदि वाञ्छसि' इत्यादि पद्य के चरण में 'ञ्छ' 'र' 'प' ये क्रमशः पांचवीं, आठवीं और नवीं मात्रा लघुरूप हैं। इसी प्रकार अन्य चरणों में भी रेखाओं से समन्वय करें ॥ ३५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपचित्रा—

९,१०

।। ऽऽ ।। ऽ।।ऽऽ

उपचित्रा नव–मे–परयुक्तं ।। ३६ ॥

सं० टी०—उपचित्रां लक्षयति—उपचित्रेत्यादिना। नवमे–नवम्यां मात्रायाम्, परयुक्ते–दशम्या मात्रया संयुक्ते, अर्थात् नवमदशममात्रयोरेकेन गुरुणोपादानं यदि स्यात् तदा 'उपचित्रा' इति नामकं मात्रिकसमं छन्दो भवतीत्यर्थः। शेषं च प्राग्वत्।

तद्यथा—इहैव लक्षणवाक्ये 'म' इति एकेन गुरुणा नवदशममात्रयोरु-पादानाद् भवति नवम्या दशमपरयुक्तत्वम्। यथा वा वृत्तौ—

९,१० ९,१०
ऽ ऽ
यच्चित्तं गुरु–स–क्तमुदारं विद्याभ्यासम–हा–व्यसनञ्च।

९,१० ९,१०
ऽ ऽ
पृथ्वी तस्य गु–णै–रुपचित्रा, चन्द्रमरीचिनि–भै–र्भवतीयम्।

अस्मिन् पद्ये प्रतिचरणं नवमी मात्रा दशम्या संयुक्ता ॥ ३६ ॥

हिं० टी०—यदि नवीं मात्रा दशवीं से मिली हो अर्थात् यदि नवीं और दशवीं मात्रा का एक गुरु से ग्रहण किया जाय तो उस सोलह मात्रा के प्रतिचरण वाले मात्रिक सम छन्द को उपचित्रा कहते हैं।

जैसे इस लक्षण वाक्य में ही 'मे' इस एक गुरु के द्वारा नवीं और दशवीं मात्रा का ग्रहण किया गया है अतएव नवीं मात्रा दशवीं से मिली है। इसी प्रकार 'यच्चित्तं' इत्यादि पद्य के प्रतिचरण में नवीं मात्रा दशवीं से मिली हुई है जैसा कि रेखाओं के द्वारा दिखाया गया है ॥ ३६ ॥

उपचित्रा (मतान्तरेण)—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[1]अष्टाभ्यो गो ल्यावुपचित्रा ।

सं० टी०—मतान्तरेणोपचित्रां लक्षयति–अष्टाभ्य इति । अष्टाभ्यो मात्राभ्यः, ऊर्ध्वमिति शेषः । यदि गः–गुरुः, लू–लघुः, यः–यगणश्च स्युस्तदा उपचित्रा भवति । सेतुसम्मतपाठेऽप्येष एवार्थः 'अष्टाभ्यो भाद्गावुपचित्रा' इति पाठे अष्टमात्रानन्तरं भगणः गुरुद्वयं चेति शब्दार्थः । निष्कृष्टार्थस्तु समान एव । यतो गुरुलघुयगणेषु सत्सु
गुल, य
ऽ । । ऽ ऽ एष आकारो भवति ।
भ गुगु
भगणगुरुद्वये चापि ऽ । ।, ऽ ऽ स एव रूप इति सर्वं समञ्जसम् ।

भ गुगु
ऽ । । ऽ ऽ

यथात्रैव 'ल्यावुपचित्रा' इति भगणगुरुद्वयरूपोऽपि गुरुलघुयगणरूपोऽपि च ।

हिं० टी०—अन्य मत से उपचित्रा का लक्षण कहते हैं यदि आठवीं मात्रा के बाद एक गुरु और एक लघु तथा यगण हो तो उसे उपचित्रा कहते हैं ।

जैसे इस लक्षण वाक्य में ही आठवीं मात्रा के बाद "ल्यावुपचित्रा ऽ । । ऽ ऽ" ये गुरु लघु और यगण हैं । सेतुसम्मत पाठ में भी यही अर्थ होगा । 'अष्टभ्यो भाद्गावुपचित्रा' इस पाठ में भी आठवीं मात्रा के बाद भगण और दो गुरु चाहिये यह अर्थ होता है । वास्तव में दोनों का तात्पर्य एक ही है । गुरु, लघु और यगण रखें तब
गुल, य
ऽ । । ऽ ऽ यह रूप होगा और भगण तथा दो गुरु रखें तब भी
भ गुगु
ऽ । । ऽ ऽ यह पूर्वोक्त ही रूप होगा ।

---

[1] अयं पाठो नारायणीटीकानुसृतः । सेतौ स्वल्पतरान्तरेण यथा–'अष्टाभ्यो गल्यावुपचित्रा' इति । क्वचित्तु 'अष्टाभ्यो भाद्गावुपचित्रा' इति पाठः ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पादाकुलकम्—

। । ऽ । । । । । । ऽ । । ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ

यदतीतकृतविविधलक्ष्मयुतैः, मात्रासमादिपादैः [1]कलितम् ।

। । । । ऽ । । । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ

अनियतवृत्तपरिमाणयुक्तं, प्रथितं जगत्सु पादाकुलकम् ॥ ३७ ॥

सं० टी०—पादाकुलकं लक्षयति—यदतीतेत्यादिना । अन्वयः—अतीतकृतविविधलक्ष्मयुतैः मात्रासमादिपादैः कलितम् अनियतवृत्तपरिमाणयुक्तं च यत्, (तत्) जगत्सु पादाकुलकं प्रथितम् । व्याख्या—अतीतानि पूर्वोक्तानि, कृतानि विविधानि मात्रासमकादीनि नानारूपाणि, यानि लक्ष्माणि लक्षणानि तैर्युक्तैः, मात्रासमादीनां पादैः, कलितम्—रचितम्, तथा अनियतवृत्तम्—पादचतुष्टयेऽपि नियतैकवृत्तलक्षणहीनम्, परिमाणेन षोडशमात्रारूपेण च युक्तम्, यत्स्यात्, तच्छन्दः जगत्सु पादाकुलकम्—इति नाम्ना प्रथितम्—प्रख्यातम् ।

अयं भावः—यत्र पूर्वोक्तानां मात्रासमकादीनां साङ्कर्यं, तत् पादाकुलकं भवति । तच्च साङ्कर्यं द्विधा संभवति—प्रतिचरणं भिन्नलक्षणसत्त्वात् । एकस्मिन्नेव चरणे च केषांचित् पूर्वोक्तछन्दसां लक्षणसमावेशाच्च । अतः पादैराकुलितत्वादिदं पादाकुलकमित्यन्वर्थेयं संज्ञा । तत्र द्वितीयप्रकारस्य लक्षणपद्यमुदाहरणम् । तद्यथा—इह प्रथमे चरणे नवम्या मात्राया 'वि' इत्यस्या लघुरूपत्वात्, अन्ते च 'तैः' इति गुरुत्वान्मात्रासमकम्, कलाचतुष्टयादूर्ध्वं 'तकृतवि' इति नगणलघुसत्त्वाद् विश्लोकोऽपि, 'त' 'वि' 'वि' इति पञ्चमाष्टमनवममात्राणां लघुरूपतया च चित्राऽपीति त्रिसंयोगः । द्वितीये च चरणे मात्राचतुष्टयादूर्ध्वं 'समादि' इति जगणसत्त्वाद् विश्लोकः, 'पा' इत्यत्र नवम्या मात्राया दशमसंयुक्तत्वादुपचित्रा चेति द्वयोः समावेशः । तृतीये चरणे 'रि' इति नवममात्राया लघुत्वात् 'क्तं' इत्यन्तगुरुत्वाच्च मात्रासमकम् । अष्टमात्रानन्तरं 'रिमाण' इति जगणसत्त्वाच्च वानवासिकेति

---

१ 'सहितम्' इति पाठान्तरम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वयोर्योगः। चतुर्थे 'पा' इति नवममात्राया दशसंयुक्तत्वादुपचित्रा, चतुर्थमात्रानन्तरं 'जगत्सु' इति जगणसत्त्वाच्च विश्लोक इत्युभयोर्योगः। द्वितीयप्रकारके साङ्कर्येऽपि भूयांसो भेदाः संभवन्ति। तद्यथा—प्रतिचरणं भिन्नलक्षणाक्रान्तम्, एकं चरणमेकलक्षणाक्रान्तमपराणि चेतरलक्षणाक्रान्तानीत्यादि। तत्र प्रथमस्य तृतीयस्य चरणस्य भिन्नभिन्नलक्षणाक्रान्तत्वे द्वितीयचतुर्थयोश्च भिन्नलक्षणयुक्तत्वे उदाहरणं वृत्तौ—

> S S I I I I S I I S S S I I I I S S I I S S
> पुंस्कोकिलकृतशोभनगीते, दक्षिणपवनप्रेरितशीते।
> I I I I S S I I S S S S S I I S S I I SS
> मधुसमयेऽस्मिन् कृतविश्लोकः पादाकुलकं नृत्यति लोकः॥

अत्र पद्ये प्रथमे चरणे विश्लोकः, तृतीये मात्रासमकम्, द्वितीयचतुर्थयोरुपचित्रेति रेखाभिरङ्किताभिः स्वयं समन्वेतव्यम्। अत्र मात्रासमकादीनां पञ्चानां परस्परसङ्करेऽनन्ता एव भेदाः संभवन्तीति बोध्यम्॥ ३७॥

हिं० टी०—अब तक इस प्रकरण में मात्रासमकादि जिन छन्दों के लक्षण कहे गये हैं उन मात्रासमादि छन्दों के चरणों से जिस छन्द की रचना की गई हो, जिसके चारों चरण एक लक्षण से युक्त न हों तथा हों सोलह-सोलह मात्रा के ही, वह छन्द जगत् में पादाकुलक नाम से कहा गया है।

तात्पर्य यह है कि पूर्वोक्त मात्रासमक आदि छन्दों का संकर जिस छन्द में होगा उसे पादाकुलक कहेंगे। वह संकर दो प्रकार से हो सकता है। एक तो यह है कि चारों चरणों में पृथक् पृथक् छन्द हों और दूसरा प्रकार यह कि एक ही चरण में अनेक छन्दों के लक्षण घट जाते हों। लक्षण वाक्य दूसरे प्रकार का उदाहरण है। इसके प्रथम चरण में नवीं मात्रा के लघु और अन्त्य वर्ण के गुरु होने से मात्रासमक, चौथी मात्रा के बाद नगण और लघु होने से विश्लोक, तथा पांचवीं नवीं और दशवीं मात्रा के लघु होने से चित्रा छन्द भी कहते हैं। इस प्रकार एक ही चरण में तीन छन्दों का सङ्कर है। दूसरे चरण में चौथी मात्रा के दशवीं से मिली होने के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारण उपचित्रा का संयोग है। तीसरे में नवीं मात्रा के लघु और अन्त्य वर्ण के गुरु होने से मात्रासमक तथा आठ मात्राओं के बाद जगण होने से वानवासिका का समावेश है। चौथे में नवीं मात्रा के दशवीं से संयुक्त होने के कारण उपचित्रा तथा चौथी मात्रा के बाद जगण होने से विश्लोक का संकर है। चिह्न लगा कर मूल पद्य में यह सब स्पष्ट कर दिया गया है। दूसरे प्रकार के संकर के भी कई भेद हो सकते हैं—जैसे एक चरण में कोई छन्द हो और शेष तीन में एक ही कोई अन्य, दो चरणों में कोई अन्य छन्द तथा शेष दो में अन्य इत्यादि कई प्रकार बन सकते हैं, 'पुंस्कोकिल' इत्यादि पद्य के प्रथम चरण में विश्लोक, तृतीय में मात्रासमक और द्वितीय चतुर्थ में उपचित्रा छन्द है। रेखाओं से समन्वय किया गया है। मात्रासमक आदि के परस्पर संकर के द्वारा इसके अनन्त भेद हो सकते हैं॥ ३७॥

इति मात्रिकसमप्रकरणम्।

वृत्तानां गुरुलघुमात्रावर्णसंख्यापरिज्ञानोपायः—

ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ

वृत्तस्य ला[1] विना वर्णैर्गा वर्णा गुरुभिस्तथा।

। । ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ

गुरवो लैर्दले नित्यं प्रमाणमिति निश्चितम्॥ ३८॥

अथोक्तानां वक्ष्यमाणानां च छन्दसां गुरुलघुमात्रावर्णसंख्यापरिज्ञानोपायमाह—वृत्तस्येति। अन्वयः—वृत्तस्य लाः वर्णैः विना गाः (ज्ञेयाः) तथा (वृत्तस्य लाः) गुरुभिः विना वर्णाः (ज्ञेयाः)। (वृत्तस्य लाः) लैः विना दले गुरवः (ज्ञेयाः)। इति प्रमाणं नित्यं निश्चितम् (अस्ति)। व्याख्या—वृत्तस्य–छन्दसः, लाः–मात्राः, मात्रासंख्येत्यर्थः, लशब्दोऽयं

१ 'ला' इत्ययं पाठो नारायणीसेतुटीकासम्मतः। 'लो' इति पाठान्तरम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मात्रार्थकः, वर्णैः—वर्णसंख्यया, विना—रहिताः, गाः—गुरवः गुरुसंख्या, ज्ञेया इत्यध्याहार्यः। ला वर्णा गा इत्यादिवर्णैस्तत्संख्या लक्ष्यते। अयमाशयः—यदि वृत्तस्य मात्रावर्णयोः संख्या विदिता भवेत्, गुरुलघुसंख्या च न विदिता, तदा मात्रासंख्यातो वर्णसंख्यामपनीयावशिष्टा गुरुसंख्या ज्ञेयेति। अपि चैवं ज्ञाताया गुरुसंख्याया ज्ञातवर्णसंख्यातोऽपहारेऽवशिष्टा लघुसंख्या भवतीत्यपि ज्ञेयम्। यदि तु मात्रासंख्यायाश्च ज्ञानं भवेत्, वर्णसंख्या चाज्ञाता, तदा तद्बोधोपायमाचष्टे—**वर्णा** इति। तथा वृत्तस्य मात्रा गुरुभिर्विना वर्णा ज्ञेयाः, अर्थात् वृत्तमात्रासंख्यातो गुरुसंख्याया अपहारेऽवशिष्टा वर्णसंख्या भवति। वृत्तमात्रालघुसंख्याज्ञाने सति गुरुज्ञाने प्रकारान्तरमाह—**गुरव** इति। वृत्तस्य ला इति तु पूर्ववत्पूर्वतोऽनुवर्तते। वृत्तस्य मात्रासंख्यातो लघुसंख्याया अपनयिनेऽवशिष्टसंख्याया दले—अर्धे कृते गुरुसंख्या ज्ञेयेत्यर्थः। उक्तप्रकारमुपसंहरति—**नित्यमिति**। इति अनेन प्रकारेण प्रमाणं गुर्वादीनां संख्या, नित्यं—सदा, निश्चितम्, वास्तीति शेषः। गुर्वादिसंख्यापरिज्ञानोपायोऽयं सर्वथा निश्चितः, न क्वापि व्यभिचरित इति भावः।

वृत्तस्येति गद्यस्याप्युपलक्षकम्। गद्यादावपि एतेन प्रकारेण गुरुलघुसंख्याज्ञानस्य संभवात्। किञ्चात्र गुरुवर्णसंख्यायाः परिज्ञानोपायप्रदर्शनमप्युपलक्षणम्। तथाहि मात्रावर्णगुरुलघुमये वृत्ते कयोरपि द्वयोः परिज्ञाने तद्द्वारैव तदितरयोर्ज्ञानं संभवम्। तद्यथा मात्रावर्णयोर्मात्रालघ्वोर्मात्रागुर्वोर्वर्णलघ्वोर्वर्णगुर्वोर्गुरुलघ्वोश्च षट्सु द्विकेषु एकैकद्विकज्ञानेऽप्यपरं द्विकमनेनैव प्रकारेण परिज्ञातुं शक्यते। तदेतत्सर्वमुदाहरणे संगमय्य प्रदर्श्यते। तद्यथा—

ऽऽ। ऽ ।ऽ ऽऽ

इहैव पद्ये प्रथमे चरणे 'वृत्तस्य ला विना वर्णैः' इति चतुर्दश सर्वा मात्रा, वर्णाश्चाष्टौ। १४—८=६, इत्येवं मात्रासंख्यातो वर्णसंख्याया अपहारेऽवशिष्टा षट् संख्या गुरूणाम्। किञ्च—१४—६=८ इतीयं वर्णसंख्या फलति मात्रासंख्यातो गुरुसंख्यापगमे। प्रकारान्तरेण १४—२=१२÷६ इत्येवं मात्रासंख्यातो लघुसंख्यापहारेऽवशिष्टसंख्याया अर्धभागे कृते फलिता षट्संख्या गुरूणाम्। एवं सर्वत्र गद्यपद्येषु प्रकारोऽयं प्रवर्तनीयः॥ ३८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—छन्द के गुरु लघुओं की तथा मात्रा वर्णों की संख्या जानने का प्रकार यह है कि छन्द की मात्रा संख्या में वर्णों की संख्या घटा देने से शेष संख्या गुरुओं की समझनी चाहिये। तथा मात्रासंख्या में गुरुसंख्या घटा देने से बची हुई संख्या वर्णों की जाननी चाहिये। गुरुसंख्या जानने का एक अन्य उपाय यह है कि मात्रासंख्या में लघु संख्या घटा देने से शेष संख्या का आधा किया जाय तो वह आधी संख्या गुरुओं की होगी। यह प्रमाण–इस प्रकार मालूम की हुई संख्या–सदा निश्चित–ठीक–होती है अथवा यह उपाय सदा ठीक ही रहता है।

तात्पर्य यह है कि छन्द में सब मिलाकर चार बातें होती हैं गुरु, लघु, वर्ण और मात्रायें। छन्द में कितने गुरु हैं ? कितने लघु हैं ? कितनी मात्रायें हैं ? और कितने वर्ण हैं ? इन बातों को जानने के लिये सबको अलग-अलग गिनने की आवश्यकता नहीं। किन्ही दो को गिन लीजिये शेष दो का ज्ञान उन्हीं से हो जायगा। इन चार के दो दो के छ वर्ग बनते हैं— १ मात्रा वर्ण, २ मात्रा लघु, ३ मात्रा लघु गुरु, ४ वर्ण लघु, ५ वर्ण गुरु, ६ गुरु लघु। इन वर्गों में किसी एक का ज्ञान हो तो शेष का ज्ञान इनके आधार पर हो जायगा–यह बिल्कुल ठीक है। यदि मात्रा और वर्णों की संख्या मालूम हो तो शेष गुरु लघुओं की संख्या का ज्ञान इन्हीं के आधार पर किया जायेगा अलग गिनने की आवश्यकता नहीं। 'वृत्तस्य'–इत्यादि पद्य में (१) मात्रा और वर्णों की संख्या के गिन कर मालूम होने पर गुरुओं की और (२) मात्रा तथा गुरुओं की संख्या के ज्ञात होने पर वर्णों की तथा (३) मात्रा और लघु संख्या के ज्ञात होने पर गुरुओं की संख्या के जानने का उपाय बतलाया है। कुल तीन बातें बताई गईं हैं, दो तो गुरुओं की संख्या जानने की और एक वर्ण संख्या जानने की। अन्य बातें इसी प्रकार समझनी चाहिये, ग्रन्थकार ने तो मार्ग बताया है, स्वयं और उपायों की कल्पना की जा सकती है।

इस पद्य में बताये गये गुरुसंख्या जानने के प्रथम उपाय के अनुसार मात्रासंख्या और वर्णसंख्या पहले गिन कर मालूम कर लेनी चाहिये। जैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस पद्य के ही प्रथम चरण में गिनकर मालूम हुआ कि मात्रा संख्या १४ और वर्णसंख्या ८ है। १४–८=६ इस प्रकार मात्रा संख्या १४ में वर्णसंख्या ८ घटा देने से शेष ६ गुरु संख्या होगी। वर्ण संख्या जानने के लिये पहले मात्रासंख्या और गुरुसंख्या को मालूम कर लिया १४ और ६। १४–६=८ इस प्रकार मात्रा संख्या १४ में गुरु संख्या ६ घटा देने से शेष बचा ८, यह संख्या वर्णों की है। गुरुसंख्या ज्ञान के दूसरे उपाय के अनुसार पहले गिनकर मात्रासंख्या और लघुसंख्या का ज्ञान करलेना चाहिये। जैसे—यहीं प्रथम चरण में १४ मात्रायें और २ लघु हैं। अब १४–२=१२÷२=६ इस प्रकार मात्रा संख्या १४ में से लघु संख्या २ घटा दी शेष बचा १२ इसका आधा किया ६ हुआ, यह गुरुसंख्या हुई।

इसके द्वारा न केवल एक ही चरण के गुरुओं का ज्ञान होता है अपितु सम्पूर्ण छन्द का भी जैसे इस सम्पूर्ण पद्य में गिनने से मालूम हुआ कि कुल ५१ मात्रायें और ३२ वर्ण हैं। ५१–३२=१९ इस प्रकार ५१ मात्रासंख्या में ३२ वर्ण संख्या घटा दी। शेष रहा १९, यह गुरु संख्या हुई। मात्रासंख्या ५१ में गुरुसंख्या १९ घटा देने से शेष संख्या ३२ वर्णों की निकल आती है। गुरु संख्या जानने के दूसरे उपाय के अनुसार पहले मालूम किया कि सम्पूर्ण मात्रायें ५१ और लघु १३ हैं। अब ५१–१३=३८÷२=१९ इस प्रकार से मात्रा संख्या ५१ में लघुसंख्या १३ घटा दी। शेष रहा ३८, उसका आधा करने पर १९ हुआ, यह गुरुसंख्या है।

यह उपाय केवल पद्यों के लिए ही नहीं। अपितु इसके द्वारा गद्यों में भी गुरु, लघु, मात्रा और वर्ण संख्या जानी जा सकती है॥ ३८॥

अथ द्विखण्डकछन्दांसि

शिखा—

। । । । ।।।।।। ।।। ।।।।।।।।।।।।। ।।। ।ऽ

शिखिगुणितदशलघुरचितमपगतलघुयुगलमपरमिदमखिलम्।
सगरु शकलयुगलकमपि सपरिघटितपदविततिर्भवति शिखा॥ ३९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथ मात्रानियमघटितत्वान्मात्रावृत्तप्रसङ्गेन द्विखण्डकानि[1] छन्दांसि निरूपयन् प्रथमं शिखां लक्षयति—शिखिगुणितेति। अन्वयः—शिखिगुणितदशलघुरचितमपगतलघुयुगलम् (एकं-प्रथमं-खण्डं भवेत्)। अपरमिदमखिलम्। शकलयुगलकमपि सगुरु सुपरिघटितपदवितति (च स्यात्) (तदा) शिखा भवति। व्याख्या—शिखिनः—[2]अग्नयः, अर्थात् त्रयः, तैस्त्रित्वसंख्या लक्ष्यते। अतः शिखिभिर्गुणिताः—त्रिगुणिता इत्यर्थः, ये दश लघवस्तै रचितम्, एकं प्रथमं खण्डं स्यादित्यध्याहारः। अपरमित्य-ग्रेऽभिधानात्। अपगतं न्यूनं लघुयुगलं लघुद्वयं यस्मात् तत् तथाभूतम्, अष्टाविंशतिलघुकमित्यर्थः। अपरम्-द्वितीयं खण्डम्, इदम्-पूर्वोक्तम्, अखि-लम्—सम्पूर्णम्, लघुद्वयन्यूनताविहीनम् त्रिंशल्लघुकमित्यर्थः, अस्तीति शेषः। एवं पूर्वोत्तरार्धयोः पृथक् पृथक् लघुसंख्यानियमसुक्त्वा संप्रति द्वयोः सामान्यं नियममाह—सगुरु इति। शकलयुगलकमपि—खण्डद्वयमपि, सगुरु-गुरुणा सहितम्, अन्ते एकेनाधिकेन गुरुणा युक्तमित्यर्थः। सुष्ठु परिघटिता रचिता ललिता मनोहारिणी पदानां विततिः-आवलिः यत्र तत् तथाभूतं शकलयुगलं यस्यां सा शिखा भवति। यत्तच्छब्दाध्याहारेणार्थः संभवति। अयं भावः—पूर्वार्धेऽष्टाविंशतिर्लघवः अन्ते एको गुरुश्चेति एकोनत्रिंशद् वर्णाः उत्तरार्धे त्रिंशल्लघवः, अन्ते एकश्च गुरुरित्येकत्रिंशद् वर्णा यत्र तत् शिखा-नामकं छन्दो भवति। सुपरिघटितेति पदेन कर्णमधुरा यतिर्विधेयेति सूच्यते। यद्यपीह 'अन्ते गुरुः' इति स्पष्टतया नोक्तम्, तथापि लघूनामनन्तरं गुरोरपेक्ष्य-माणत्वात्स्वत एव तस्यान्ते स्थितिः सिद्ध्यतीति बोध्यम्।

लक्षणसमन्वयो यथात्रैव लक्षणवाक्ये पूर्वार्धे सन्ति अष्टाविंशतिर्लघव एकगुरुसहिताः, उत्तरार्धे च त्रिंशल्लघव एकगुरुसहिताः। यथा वा श्रीवैद्य-नाथशास्त्रिणः—

१—एषु छन्दःसु न पादव्यवस्था। केवलं द्वे दले पूर्वोत्तरार्धरूटे भवतः। अतः केवलं खण्डद्वयघटितत्वादिमानि द्विखण्डकान्युच्यन्ते। मात्रानियम-घटिततया मात्रावृत्तेषु निरूप्यन्ते।

२—ते त्रयः—गार्हपत्य-आहवनीय—दक्षिणाः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भगवति पुरमथनमहिषि सुरमुनिगणपरिचरितचरणकमले।
भव निजचरणकमलयुगलपरिचरणदृढमतिनितरणकृदविरतम्॥

समन्वयः स्वयं विधेयः॥ ३६॥

हिं० टी०—जिस छन्द का प्रथम खण्ड ३×१०=३० लघुओं से दो लघु रहित-अर्थात् २८ लघुओं से और दूसरा खण्ड पूर्वोक्त सम्पूर्ण ३० लघुओं से रचा गया हो तथा दोनों खण्डों में पूर्वोक्त लघुओं के अनन्तर गुरु हो और पदावली को रचना मनोहारिणी हो उसे शिखा कहते हैं।

तात्पर्य यह है कि पूर्वार्ध में २८ लघु और १ गुरु रूप २६ वर्ण और उत्तरार्ध में ३० लघु और १ गुरु रूप ३१ वर्ण हों तो उसे शिखा कहते हैं। पदावली की रचना इस प्रकार की हो कि यति समुचित स्थान पर हो सके जिससे पद्य कर्णमधुर प्रतीत हो।

जैसे इस लक्षण वाक्य में ही तथा 'भगवति' इत्यादि पद्य पूर्वार्ध में २८ लघु और १ गुरु तथा उत्तरार्ध में ३० लघु और १ गुरु हैं।

शिखा आदि छन्दों में पाद की व्यवस्था नहीं है। इनमें पूर्वार्ध और उत्तरार्ध की ही व्यवस्था है। इसी लिये इन्हें द्विखण्डक छन्द भी कहते हैं। मात्रावृत्तों के नियमों के अनुसार इनकी रचना होने से इनका मात्रिक छन्दों में निरूपण किया गया है॥ ३६॥

खञ्जा—

विनिमय[1]विनिहितशकलयुगलकलितपदविततिविरचितगणनिचया।
श्रुतिसुखकृदियमपि जगति द्विजशिर उपगतवति सति भवति खजा॥

सं० टी०—खञ्जां लक्षयति-विनिमयेति। इयमपि—इयमेव, एवार्थेऽपिशब्दप्रयोगः, छन्दोभङ्गभिया तु न 'अपि' शब्द एव प्रयुक्तः, अर्थात् शिखैव पूर्वोक्ता, विनिमयेन परिवर्तनेन विनिहितं निवेशितं यत् शकलयुगलं खण्ड-

---

१ अयं पाठो नारायणीसेतुटीकासमादृतः। 'विनिमयविहितशकलयुगललघुललित' इति क्वचित्पाठः। 'विनिमयविनिहतशकलयुगलघुललितपदविततिरचित' इत्यपि पाठा०।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वयं तेन कलिता युक्ता, पदानां वितत्या आवल्या विरचितः कृतः, गुणानां सौकुमार्यादीनां निचयः समुदायो यत्र सा तादृशी। कलितान्तमेकं पदं तृतीयानत्पुरुषान्तम्, पदादिकमवशिष्टं बहुव्रीहिसमासवत्, एतयोर्द्वयोः कर्मधारयः। श्रुतिसुखकृत्—कर्णानन्ददायिनी च, अनेन पूर्ववद् यतिर्विधेयेति सूच्यते। जि—जकारे, जशिरः—जकारात्प्राक्, उपगतवति—प्राप्ते सति खजा भवति। खञ्जेति यावत्। खञ्जेति स्पष्टं तु नोक्तं गुरुद्वयसमावेशस्य छन्दसि कर्तुमशक्यत्वात्। अर्थात् शिखायाः प्रथमं दलमन्तगुरुयुतमष्टाविंशत्यक्षरमयं द्वितीयं दलं विधीयेत तथा द्वितीयं दलमन्तगुरुयुतमेकत्रिंशद्वर्णरूपं प्रथमं दलं क्रियेत तदा खञ्जानामकं छन्दो भवति। यथात्रैव लक्षणवाक्ये। 'भगवति' इति शिखाया उदाहरणे व्यत्यस्ते वा॥ ४०॥

हिं० टी०—यदि शिखा के दोनों खण्डों का विनिमय कर दिया जाय अर्थात् प्रथम खण्ड को द्वितीय और द्वितीय को प्रथम बना दिया जाय तथा पदावली ललित हो जिससे कि कानों को सुख हो। ऐसे छन्द को खञ्जा कहते हैं।

तात्पर्य यह है कि खञ्जा के प्रथम खण्ड में ३१ वर्ण होंगे जिनमें अन्तिम गुरु होगा और द्वितीय खण्ड में २९ वर्ण होंगे और उनमें अन्तिम गुरु होगा। जैसे इस लक्षण वाक्य में ही प्रथम खण्ड ३१ वर्णों का है और द्वितीय २९ वर्णों का। 'भगवती' यह पद्य भी उदाहरण बन जायगा यदि पूर्वार्ध और उत्तरार्ध को एक दूसरे के स्थान में रख दिया जाय॥४०॥

अनङ्गक्रीडा—

अष्टावर्धे गा द्व्यभ्यस्ता यस्याः साऽनङ्गक्रीडोक्ता।
दलमपरमपि वसुगुणितललित-
निधिलघुकविरचितपदवितति भवति॥ ४१॥

सं० टी०—अनङ्गक्रीडां लक्षयति—अष्टावर्धे इति। यस्या अर्धे—प्रथमेऽर्धे इत्यर्थः, अष्टौ गाः—गुरवः, द्व्यभ्यस्ताः—द्विगुणिताः, अर्थात् षोडश स्युः, अपरमपि—अपरं च, द्वितीयमित्यर्थः, अपिशब्दश्चार्थे दलम्—खण्डम्, वसवः—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अष्टौ, तैर्गुणिताः सलिलनिधयः—चत्वारः, अर्थात् द्वात्रिंशत्। लघवः स्वार्थे कः, तैर्विरचिता पदानां विततिर्विस्तारो यत्र तादृक् भवति। साऽनङ्गक्रीडा[1] उक्ता छन्दःशास्त्रविशारदैरित्यर्थः। अयमाशयः—पूर्वार्धे षोडश गुरवः, उत्तरार्धे द्वात्रिंशल्लघवश्चानङ्गक्रीडायां भवन्ति। नारायणीटीकायां 'सलिलनिधिलघुकविरचित' इत्यत्र 'कवि' इत्येकं पदं मत्वा 'कविना रचिता' इत्यादि व्याख्यातम्। यथात्रैव लक्षणवाक्ये पूर्वार्धे षोडश गुरवः, उत्तरार्धे च द्वात्रिंशल्लघवः सन्ति। उदाहरणान्तरं यथा—

सौम्यां दृष्टिं देहि स्नेहाद्देहेऽस्माकं पापं हृत्वा।
शशधरमुखि सुखमुपनय मम हृदि भवभयरुजमपहर लघुतरमिह॥

अत्र पद्ये पूर्वार्धे षोडशगुरवः, उत्तरार्धे च द्वात्रिंशल्लघवः सन्ति। इयमेव वैपरीत्येन रचिता पिङ्गलमुनिना 'ज्योतिः' इत्युक्ता। 'सौम्याम्' इत्यादि पद्यं वैपरीत्येन पठितं भविष्यत्युदाहरणम्॥ ४१॥

हिं० टी०—जिसके पूर्वार्ध में १६ गुरु हों और उत्तरार्ध ३२ लघु से बना हो तथा पदावली यतियुक्त कर्णमधुर हो उसे 'अनङ्गक्रीडा' कहते हैं। जैसे इस लक्षण वाक्य में ही पूर्वार्ध में १६ गुरु और उत्तरार्ध में ३२ लघु हैं। 'सौम्याम्' इत्यादि पद्य के भी पूर्वार्ध में १६ गुरु और उत्तरार्ध में ३२ लघु हैं। इस अनङ्गक्रीडा के पूर्वार्ध और उत्तरार्ध को उलट देने से ज्योति नाम का छन्द बनता है। इन अनङ्गक्रीडा के उदाहरणों को उलट कर ज्योति के उदाहरण भी बना सकते हैं॥ ४१॥

अतिरुचिरा—

त्रिगुणनवलघुरवसितिगुरुरिति दलयुगकृततनुरतिरुचिरा॥४२॥

इति श्रीकेदार भट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे द्वितीयोऽध्यायः।

सं० टी०—अतिरुचिरां लक्षयति—त्रिगुणेति। त्रिगुणाः—त्रिगुणिताः, नव—नवसंख्याका लघवो यत्र, सप्तविंशतिरित्यर्थः। अवसितौ—अन्ते गुरुर्यस्याः सा, अर्थात् एकगुरुसहिताः सप्तविंशतिलघवः, अष्टाविंशतिर्वर्णाः। इति—अनेन

---

१ पिङ्गलाचार्येणेयं 'सौम्या' इति नाम्ना व्यवहृता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकारेण, दलयुगेन खण्डद्वयेन, कृता रचिता, तनुः—शरीरं यस्याः सा। खण्डद्वयेऽपि प्रत्येकम् एकगुरुयुतसप्तविंशतिलघुरूपा अष्टाविंशतिवर्णा यत्र भवेयुः सा 'अतिरुचिरा' इति नाम छन्दो भवतीति शेषः।

एवं वर्णार्धसमत्वेऽप्यस्य मात्रामात्रघटितत्वादिह निरूपणम्।

यथात्रैव लक्षणवाक्ये एकखण्डरूपे सप्तविंशतिलघवोऽन्तगुरुसहिताः सन्ति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

घनपरिमलमिलदलिकुलमुखरितनिखिलकमलमलयपवने।
जनयति मनसि शशिमुखि मुदमतिशयमिह मम मधुरयमधुना॥

अत्र पद्येऽन्तगुरुसहितसप्तविंशतिलघुरूपा अष्टाविंशतिर्वर्णाः प्रत्यर्धे सन्ति॥४२॥

हिं० टी०—जिस छन्द के दोनों अर्धों की रचना पृथक् पृथक् २७ लघुओं और अन्त में एक गुरु से हो उसे अतिरुचिरा कहते हैं।

तात्पर्य यह है कि इस अतिरुचिरा छन्द के प्रति आधे भाग में २८ वर्ण होते हैं और वे २७ लघु और अन्त में एक गुरु रूप होते हैं।

'इह रुचिरा' इस पाठ में छन्द का नाम रुचिरा होगा। परन्तु यहाँ दिया हुआ पाठ—जिस में छन्द का नाम अतिरुचिरा है—नारायणी टीका तथा सेतु टीका का सम्मत है।

यद्यपि यह वर्णिक अर्धसम प्रतीत होता है तब भी केवल मात्राओं से इसकी रचना होने के कारण यहां मात्रिकों में निरूपण किया गया है॥ ४२॥

इति व्याकरणसाहित्याचार्यश्रीधरानन्दशास्त्रिविरचितायां प्राज्ञतोषिणी-
समाख्यायां वृत्तरत्नाकरव्याख्यायां द्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

---

१ 'कृततनुरिह रुचिरा' इति पाठान्तरम्। अस्मिन् पाठे छन्दोनाम 'रुचिरा' इति। अत्र निवेशितः पाठस्तु नारायणीसेतुटीकासम्मतः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ तृतीयोऽध्यायः ।

वर्णसमवृत्तानि ।

अथ उक्ता[1] (एकाक्षरा जातिः । वृत्तसंख्या[2] २)

सं० टी०—द्वितीयेऽध्याये मात्रिकच्छन्दांसि निरूप्य संप्रति वर्णवृत्तानां निरूपणस्य प्राप्तावसरतया तेषूक्तादिजातिरूपाणि समवृत्तानि क्रमशो निरूपयितुं तृतीयाध्यायं प्रारभते । तत्र प्रथममनेकाक्षरजातिमुक्तामाह—**अथ उक्ता** इति । अथेत्ययं शब्दः प्रारम्भेऽर्थे प्रयुक्तः । उक्ता नाम एकाक्षरा जातिः प्रारब्धा वेदितव्या इत्यर्थः । उक्तायामिति सप्तम्यन्तपाठे 'भेदा अभिधीयन्ते' इत्यध्याहार्यार्थः संगमनीयः । एवमत्युक्तादिष्वपि सर्वत्र व्याख्येयम् ।

श्रीः (गु)—

ऽ ऽ

गुः श्रीः ॥ १ ॥

सं० टी०—अथोक्तायाः प्रथमं (१) भेदं 'श्री' नाम लक्षयति—गुरिति । एकाक्षरपादायामुक्तायां गुरुरेकश्चेत्पादस्तदा 'श्रीः' इति नाम छन्दो भवतीत्यर्थः । यथात्रैव लक्षणवाक्ये एकेन गुरुणा पादः । लक्षणवाक्यमिदं पादद्वयरूपम् । अस्य समवृत्ततया एकेनैव पादेन लक्षणस्य वक्तुं समुचितत्वेऽ-

---

१ 'उक्तायाम्' इति पाठान्तरम् । सर्वासु जातिषु सप्तम्यन्तं पाठान्तरमिति बोध्यम् ।

२ वक्ष्यमाणसंख्याप्रत्ययानुसारं यावन्तो भेदा यस्या जातेः संभवन्ति सा भेदसंख्या । सर्वासु जातिषु अनेनैव प्रकारेण निरूपयिष्यते । उक्ताजातेः संख्यानुसारं द्वौ भेदौ संभवतः । एवमग्रेऽपि बोध्यम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पीहार्थग्रहणम्—एकेन पादेन लक्षणस्य छन्दोनाम्नश्च सङ्ग्रहीतुमशक्यत्वात्। यथा वा—

ऽ ऽ ऽ ऽ
श्रीशः। पायात्।

इदं सम्पूर्णं चतुष्पादं पद्यम्। अस्य प्रतिपादमेको गुरुः ॥ १ ॥

हिं० टी०—जिस वर्ण समवृत्त के चारों चरणों में एक एक गुरु हो उसे 'श्री' छन्द कहते हैं।

जैसे यह लक्षण वाक्य 'गुः श्रीः' यह दो गुरु के दो चरणरूप है। अथवा—'श्रीशः पायात्' इस पद्य में एक एक गुरु के चार चरण हैं, इसलिये यह 'श्री' छन्द है।

वास्तव में थोड़े अक्षरों वाले छन्दों में कुछ चमत्कार नहीं। न इनके प्रयोग पर कोई ध्यान ही देता है। यों तो प्रत्येक चार वर्ण गुरु आ गये तो छन्द बन जायगा। पर ऐसे छन्दों की कोई प्रतिष्ठा नहीं। अतएव सूत्रकार पिङ्गलाचार्य ने सुप्रतिष्ठा–पञ्चाक्षर–जाति पर्यन्त छन्दों का निरूपण नहीं किया। यहाँ तो केवल शास्त्रक्रमानुरोध से कहे जारहे हैं।

इस अध्याय में वर्ण समवृत्तों का निरूपण किया जा रहा है। इसलिये लक्षण एक ही पाद से कहा जायगा। सब चरण एक जैसे होंगे। अतः एक पाद के बतलाने से कार्यनिर्वाह हो जाता है।

यह भी ध्यान रहे कि वहाँ लक्षण ही उदाहरण हैं। जिस छन्द का लक्षण किया गया है वह उसी छन्द में। इस बात को ग्रन्थकार ने स्वयं 'लक्ष्य-लक्षणसंयुक्तम्' (वृ० अ० १ श्लोक ३) में कहा है और टीका में भी लक्षण का समन्वय लक्षण वाक्य में किया गया है अभ्यास के लिये अन्य उदाहरण भी दिये गये हैं। यही क्रम अब आगे भी रहेगा ॥ १ ॥

अथात्युक्ता (२, वृ० सं० ४)

स्त्री (गु, गु)—
गौ स्त्री ॥ २ ॥

सं० टी०—अथात्युक्ताभेदेषु प्रथमं (१) स्त्रीं नाम छन्दो लक्षयति—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गौ स्त्री इति। गौ–द्वौ गुरू यदि पादे स्तस्तदा 'स्त्री' नाम छन्दो भवतीत्यर्थः। यथात्रैव लक्षणवाक्ये एकपादरूपे गुरुद्वयमस्ति। यथा वा—

ऽऽ ऽऽ ऽऽऽऽ

श्रीमान्, विष्णुः। नित्यं ध्येयः।

अत्र चतुर्षु चरणेषु प्रत्येकं गुरुद्वययुक्तं वर्तते॥ २॥

हिं० टी०—यदि द्व्यक्षर जाति के प्रतिचरण में दो गुरु हों तो उसको 'स्त्री' छन्द कहते हैं॥ २॥

अथ मध्या (३, वृ० सं० ८)

नारी (मगणः)—

मगण

ऽ ऽऽ

मो नारी॥ ३॥

सं० टी०—त्र्यक्षरपादायां मध्यायां प्रथमं (१) भेदं नारीं नाम छन्दो लक्षयति—मो नारी इति। यस्य प्रतिचरणं मगणः स्यात्, तस्य छन्दसः 'नारी' इति संज्ञेत्यर्थः। यथा लक्षणवाक्ये मगणोऽस्ति। यथा वा सेतौ—

म म म म

ऽऽऽ, ऽऽऽ, ऽऽऽ, ऽऽऽ

नारीणां कल्याणी। मां पायात्सा वाणी।

अस्मिन् पद्ये प्रतिचरणं मगणोऽस्तीति रेखाभिः प्रदर्शितः॥ ३॥

हिं० टी०—जिसके प्रत्येक चरण में एक मगण हो उस छन्द को नारी कहते हैं॥ ३॥

मृगी (रगणः)—

रगण

ऽ।ऽ

रो मृगी॥ ४॥

सं० टी०—मध्याभेदेषु तृतीयं (३) मृगीं नाम छन्दो लक्षयति—रो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मृगी इति । यत्र पादौ रगणः स्यात् , तस्य 'मृगी' संज्ञा । यथात्र लक्षणवाक्ये रेखाभिः प्रदर्शितो मध्यलघू रगणः । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

र र र र

ऽ ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ

सा मृगी-लोचनी । राधिका श्रीपतेः

अत्र पद्ये प्रतिचरणं रगणो रेखाभिर्निरूपितः ॥ ४ ॥

हिं० टी०—जिस (तीन वर्ण वाले) छन्द के प्रतिचरण में रगण हो उसे मृगी कहते हैं।

लक्षण वाक्य छन्द का एक चरण है। इसमें रगण है, लघु-गुरु के चिह्न लगाकर बतला दिया है। 'सा मृगी' इस सम्पूर्ण पद्य में भी प्रतिचरण रगण से बना है, यह भी लघु गुरु के चिह्न लगाकर बतला दिया गया है। आगे भी इसी प्रकार चिह्नों के द्वारा गणादि बतलाये जायंगे ॥ ४ ॥

अथ प्रतिष्ठा (४. १६)

कन्या (म, गु)—

म गु

ऽ ऽ ऽ, ऽ

म्गौ चेत्कन्या ॥ ५ ॥

सं० टी०—अथ प्रतिष्ठाभेदेषु प्रथमं कन्यां नाम छन्दो लक्षयति—म्गौ इति । म्गौ–मगणगुरू, चत्वारो गुरवः, चेत् प्रतिचरणं स्युस्तदा कन्या नाम छन्दो भवति । यथा[1] वा छन्दोमञ्जर्याम्—

म गु म गु म गु म गु

ऽ ऽ ऽ, ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ, ऽ, ऽ ऽऽ,

भास्वत्कन्या सैका धन्या । यस्याः कूले कृष्णोऽखेलत् ॥ ५ ॥

हिं० टी०—चतुरक्षर जाति के प्रत्येक चरण में यदि एक एक मगण और एक गुरु अर्थात् चार गुरु हों तो उस छन्द को कन्या कहते हैं ॥ ५ ॥

१ प्रदर्शितचिह्नैर्लक्षणसमन्वयः सरलतयोहितुं शक्यते इति हेतोरित आरभ्योपेक्षितः, विशेषस्तु तत्र तत्र प्रदर्शयिष्यते इति सुधीभिर्विभावनीयम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ सुप्रतिष्ठा (५, ३२)—

पङ्क्तिः (भ. गु. गु)—

भ गु गु

ऽ ।।, ऽ ऽ

भ्गौ गिति पङ्क्तिः ॥ ६ ॥

सं० टी०—अथ सुप्रतिष्ठायाः सप्तमं (७) भेदं पङ्क्तिनामानं लक्षयति भ्गौ इति । भ्गौ–भगणगुरू, ग-गुरुः, भगणो गुरुद्वयं चेत्यर्थः, यदि प्रतिचरणं स्युः, इति–अनेन प्रकारेण, पङ्क्तिर्नाम छन्दो भवति । यथा वा छन्दोमञ्जर्याम्—

भ गु गु, भ गु गु - गु गु, भ गु गु

कृष्णसनाथा, तर्णकपङ्क्तिः । यमुन-कच्छे, चारु चचार ॥ ६ ॥

हिं० टी०—जिस (पाँच वर्ण के) छन्द के प्रत्येक चरण में एक भगण और उसके आगे दो गुरु हों उसे पङ्क्ति कहते हैं ॥ ६ ॥

अथ गायत्री (६, ६४)—

तनुमध्या (त, य)—

त य

ऽ ऽ ।, ।ऽ ऽ

[1]त्यौ स्तस्तनुमध्या ॥ ७ ॥

सं० टी०—गायत्रीभेदेषु त्रयोदशं (१३) तनुमध्यानामानं लक्षयति—त्यौ इति । यदि षडक्षरछन्दसः प्रतिचरणं क्रमशस्तगणयगणौ, स्तः[1]–स्याताम्, तर्हि तत् 'तनुमध्या' इति नाम उच्यते । यथा वा छन्दोमञ्जर्याम्—

त य त य त य त य

।ऽ ।,।ऽऽ, ऽऽ।।ऽऽ, ऽ ऽ ।, । ऽऽ, ऽ ऽ ।, ।ऽऽ

मूर्तिर्मुरशत्रो–रत्यद्भुतरूपा । आस्तां म–म चित्ते, नित्यं त–नुमध्या ॥

---

१ 'त्यौ चेत्तनुमध्या' इति सेतुसम्मतः पाठः ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च—नश्यन्ति ददर्श,[1] वृन्दानि कपीन्द्रः।
हारीण्यबलानां, हारीण्यबलानाम् ॥ ७ ॥ (भट्टिः)

हिं० टी०—जिस (षडक्षरपादात्मक) छन्द के प्रतिचरण में एक तगण और एक यगण हो, उसे तनुमध्या कहते हैं ॥ ७ ॥

शशिवदना (न य)—

न य
। । ।, । ऽ ऽ
शशिव-दना न्यौ ॥ ८ ॥

सं० टी०—गायत्र्या एव षोडशं (१६) भेदं शशिवदनां नाम छन्दो लक्षयति—शशिवदनेति। यदि षडक्षरछन्दसः प्रतिचरणं न्यौ—नगणयगणौ स्याताम्, तदा शशिवदना नाम छन्दो भवति। यथा वा—

न य न य
। । ।, । ऽ ऽ, । । ।, । ऽ ऽ
शशिवदनानां व्रजतरुणीनाम्।
। । ।, । ऽ ऽ । । ।, । ऽ ऽ
दधिघ-टभेदं मधुरि-पुरैच्छत् ॥ ८ ॥

हिं० टी०—जिस (षडक्षर) छन्द के प्रतिचरण में एक नगण और एक यगण हो, उसे 'शशिवदना' कहते हैं ॥ ८ ॥

विद्युल्लेखा (म, म)—

म म
ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ
विद्युल्लेखा मो मः ॥ ९ ॥

सं० टी०—अथ गायत्र्याः प्रथमं (१) भेदं विद्युल्लेखानामानं लक्षयति—विद्युल्लेखा इति। यदि षडक्षरपादात्मकछन्दसः प्रतिचरणं मः मगणः मः—मगणः द्वौ मगणौ, अर्थात् सर्वे गुरवः स्युः, तदा 'विद्युल्लेखा' छन्दो भवति। यथा वा ममैव वर्षाविलासे—

१ 'ददर्श' इत्यत्र पादान्तत्वेन गुरुत्वम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वर्षाकाले काले मेघाच्छन्नाकाशे।
विद्युल्लेखा भान्त्यः सर्वैरालोक्यन्ते ॥ ६ ॥

हिं० टी०—जिस (षडक्षरपादात्मक) छन्द के प्रतिचरण में दो मगण अर्थात् सब गुरु हों, उसे विद्युल्लेखा कहते हैं। अन्य उदाहरण (छन्दःप्रभाकर से)—

म म म म
ऽऽ ऽ, ऽ ऽऽ ऽऽ ऽ, ऽ ऽऽ,
मैं माटी ना खाई। झूठे ग्वाला माई।
मू बायो मा देखा। ज्योती विद्युल्लेखा ॥ ६ ॥

वसुमती (त, स)—

त स
ऽ ऽ।,।। ऽ
त्सौ चेद्वसुमती ॥ १० ॥

सं० टी०—गायत्र्या एकोनत्रिंशं (२६) भेदं वसुमतीनामानं लक्षयति—त्सौ इति। त्सौ–तगणसगणौ चेत् पादः, तदा 'वसुमती' नाम छन्दो भवति। उदाहरणान्तरं यथा—

त स त स
ऽ ऽ ।, ।।ऽ, ऽ ऽ ।, ।।ऽ
सास्ते व–सुमती, यास्ते व–सुमती।
पुण्याकरवती, पुण्याकरभवा ॥

गायत्र्यन्तेषु सर्वेषु पादेषु पादान्ते यतिरित्याम्नायः ॥ १० ॥

हिं० टी०—जिस (षडक्षरपादात्मक) छन्द के प्रतिचरण में क्रम से एक तगण और एक सगण हो उसे 'वसुमती' कहते हैं।

गायत्री जाति के छन्दों तक पाद के अन्त में यति होती है ऐसा प्राचीन सिद्धान्त है ॥ १० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ उष्णिक् (७, १२८)

मदलेखा (म, स, गु)—

म स गु
ऽ ऽ ऽ, । । ऽ, ऽ

म्सौ गः स्यान्मदलेखा ॥ ११ ॥

सं० टी०—उष्णिहः पञ्चविंशं (२५) भेदं मदलेखानामानं लक्षयति—म्सौ इति । यत्र म्सौ—मगणसगणौ, गः—एको गुरुश्च, प्रतिचरणं स्यात् . सा मदेलखा । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म स गु म स गु
ऽऽ ऽ, । । ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ, । । ऽ,ऽ
रङ्गे बाहुविरुग्णात् । दन्तीन्द्रान्मदलेखा ।
लग्नाभून्मुरशत्रौ । कस्तूरीरसचर्चा ॥ ११ ॥

हिं० टी०—जिस (सप्ताक्षरपादात्मक) छन्द के प्रतिचरण में क्रमशः एक मगण और एक सगण तथा एक गुरु हो उसे मदलेखा कहते हैं ॥११॥

कुमारललिता (ज, स, गु)—

ज स गु
। ऽ ।,। । ऽ, ऽ

कुमारललिता ज्सौ ग् ॥ १२ ॥

सं० टी०—सप्ताक्षरपादात्मकछन्दःसु त्रिंशं (३०) भेदं कुमारललिता नामकं लक्षयति—कुमारललितेति । जगणसगणगुरुभिः कुमारललिता नाम छन्दो भवति । यथा वा—

ज स गु ज स गु
। ऽ ।,। । ऽ, ऽ । ऽ ।,। । ऽ, ऽ
मुरारितनुवल्ली कुमारललिता सा ।
व्रजैणनयनानां ततान मुदमुच्चैः ॥

हिं० टी०—जिस (सात अक्षर के प्रतिचरण वाले) छन्द के प्रतिचरण में क्रमशः एक जगण, एक सगण और एक गुरु हो, उसे कुमारललिता कहते हैं ॥ १२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हंसमाला (स, र, गु)—

स र गु

। । S, S । S, S

सरगैर्हंसमाला ॥ १३ ॥

सं० टी०—उष्णिहो विंशं (२०) भेदं हंसमालानामकं छन्दो लक्षयति—सरगौरिति । सगणरगणगुरुभिर्हंसमाला नाम छन्दो भवति । यथा वा—ममैव प्रकृतिसौन्दर्यविलासे—

स र गु स र गु

। । S, S । S, S । । S, S । S, S

धवला हंसमाला । सुखपूर्वं विशाला ।

विमलाम्भस्तडागे । भयहीना निदद्रौ ॥

अत्रोष्णिक्षु द्वाभ्यां पञ्चभिश्च केचिद् यतिमिच्छन्ति । अपरे तु पादान्त एव ॥ १३ ॥

हिं० टी०—जिस (सप्ताक्षरपादात्मक) छन्द के प्रतिचरण में सगण, रगण और एक गुरु हो उसे हंसमाला कहते हैं ।

इन सात अक्षर के चरण वाले छन्दों में किन्हीं का मत है कि दूसरे और सातवें वर्ण पर यति होती है । कुछ लोगों का मत है कि पाद के अन्त में ही यति होनी [1]चाहिये ॥

अथ अनुष्टुप् (८, २५६) ।

चित्रपदा (भ, भ, गु, गु,)—

भ भ ग ग

S । ।, S । ।, S S

भौ गिति चित्रपदा गः ॥ १४ ॥

१—उष्णिग् के तीन भेद यहाँ मूल में सेतु टीका सम्मत रखे गये हैं । नारायणी टीका में केवल 'मदलेखा' मूल में रखा गया है और इनके अतिरिक्त 'मधुमति ननगा' 'चूडामणिस्तभगात्' ये दो और छन्द भी कहे हैं ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुष्टुभः पञ्चपञ्चाशत्तमं (५५) भेदं चित्रपदानामकं लक्षयति—भौ इति। यत्र भौ–भगणद्वयम्, गू–गुरुः, गरुद्वयमित्यर्थः, इति–अनेन प्रकारेण भगणद्वयगुरुद्वयसन्निवेशेन, चित्रपदानामकं छन्दो भवति। अत्र पादान्ते यतिः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

भ भ गु गु भ भ गु गु
ऽ। ।,ऽ ।।ऽ ऽ ऽ।।, ऽ।।ऽ ऽ
यस्य मुखे प्रियवाणी। चेतसि सज्जनता च।
चित्रपदाऽपि च लक्ष्मीः। तं पुरुषं न जहाति॥

अपि च—यामुनसैकतदेशे। गोपवधूजलकेलौ।
कंसरिपोर्गतिलीला। चित्रपदा जगदव्यात्॥

अत्र प्रथमे उदाहरणे द्वितीयचतुर्थपादान्ते 'च' 'ति' इति लघुद्वयस्यापि पादान्तत्वाद् गुरुत्वम्॥ १४॥

हिं॰ टी॰—जिस (आठ वर्ण के प्रतिपाद वाले) छन्द के प्रतिचरण में दो भगण और दो गुरु हों उसे चित्रपदा कहते हैं।

इसके पादान्त में यति होती है॥ १४॥

विद्युन्माला (म, म, गु, गु) यतिः[1] ४, ४

म म गु ग
ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽऽ, ऽ ऽ
मो मो गो गो विद्युन्माला॥ १५॥

सं॰ टी॰—अनुष्टुभः प्रथमं (१) भेदं विद्युन्मालां लक्षयति—मो मो इति। मः–मगणः, मः–मगणः, गः–गुरुः, गः–गुरुः, अर्थात् मगणद्वयं गुरुद्वयं च, सर्वे गुरव इति यावत्, यस्य प्रतिचरणं स्युः, तच्छन्दो विद्युन्माला कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा—

१—शीर्षके अन्ते दीयमानाङ्काः यतिस्थानवर्णसंख्यासूचका इति सर्वत्र बोध्यम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

म म गुगु म म गुगु

ऽऽऽ, ऽऽऽ, ऽऽ ऽऽ ऽ,ऽ ऽऽ, ऽऽ

विद्युन्मालालोलान् भोगान्, मुक्त्वा मुक्तौ यत्नं कुर्यात् ।
ध्यानोत्पन्नं निःसामान्यं, सौख्यं भोक्तुं यद्याकाङ्क्षेत् ॥

यथा वा श्रुतबोधे—सर्वे वर्णा दीर्घा यस्यां, विश्रामः स्याद्वेदैर्वेदैः ।
विद्वद्वृन्दैर्वीणावाणि ! व्याख्याता सा विद्युन्माला ॥

अत्र चतुर्षु चतुर्षु यतिः ॥ १५ ॥

हिं० टी०—जिस (अष्टाक्षरजाति के) छन्द के प्रतिचरण में दो मगण और दो गुरु अर्थात् सब गुरु हों उसे विद्युन्माला कहते हैं ॥ १५ ॥

माणवकम् (भ, त, ल, गु) ४,४ –

भ त लगु

ऽ।।, ऽऽ।, ।ऽ

माणवकं भात्तलगाः ॥ १६ ॥

अनुष्टुभः (१०३) त्र्यधिकशततमं भेदं माणवकनामकं लक्षयति—माणवकमिति । भात्, तलगाः—तगणलघुगुरवो यदि तदा माणवकमुच्यते ।

भ त लगु भ त लगु

ऽ।।,ऽऽ।,।ऽ ऽ।।,ऽऽ,।।ऽ

माणवकक्रीडितकं, यः कुरुते वृद्धवयाः ।
हास्यमसौ याति जने, भिक्षुरिव स्त्रीचपलः ॥

यथा वा—आदिगतं तुर्यगतं, पञ्चमकं चान्त्यगतम् ।
स्याद् गुरु चेत्तत्कथितं, माणवकाक्रीडमिदम् ॥
अस्यैव माणवकक्रीडितकमिति माणवकक्रीडमिति च नाम ॥१६॥

हिं० टी०—जिस (अनुष्टुभ्) छन्द के प्रत्येक चरण में भगण, तगण, लघु और गुरु हों, उसे 'माणवक' कहते हैं ।

इसके चार चार वर्णों पर यति होती है । इसके अन्य नाम माणवकक्रीडितक तथा माणवकाक्रीड हैं ॥ १६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हंसरुतम् (म, न, गु, गु)—

म न गुगु

ऽ ऽ ऽ, । । ।, ऽ ऽ

म्नौ गौ हंसरुतमेतत् ॥ १७ ॥

सं० टी०—अथानुष्टुभः (५७) सप्तपंचाशत्तमं भेदं हंसरुतनामानं लक्षयति—म्नौ इति । यस्य प्रतिचरणं म्नौ—मगणनगणौ, गौ—द्वौ गुरू च स्याताम्, तद् वृत्तं 'हंसरुतं' नाम कथ्यते । उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

म न गु,गु म न गु,गु

ऽ ऽ ऽ, । । ।, ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ, । । ।, ऽ ऽ

अभ्यागानिशशिलक्ष्मी—मञ्जीरक्वणिततुल्यम् ।

तीरे राजति नदीनं रम्यं हंसरुतमेतत् ।

अत्र पदान्ते यतिः ॥ १७ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में मगण और नगण, एवं दो गुरु वर्ण हों उसे 'हंसरुत' कहते हैं इसके पादान्त में यति होती है ॥ १७ ॥

समानिका (र, ज, गु, ल)—

र ज गु ल

ऽ । ऽ, । ऽ ।, ऽ ।

जौं समानिका गलौ च ॥ १८ ॥

सं० टी०—अथानुष्टुभः (१७१) तमं भेदं समानिकानामकं छन्दो लक्षयति—जौं इति । यस्य प्रतिचरणं जौं—रगणजगणौ, गलौ—गुरुलघू च स्याताम्, तद् वृत्तं 'समानिका' नामोच्यते । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

र ज गुगु र ज गुगु

ऽ । ऽ, । ऽ ।, ऽऽ ऽ । ऽ, । ऽ ।, ऽ ऽ

यस्य कृष्णपादपद्म—मस्ति हृत्तडागसद्म ।

धीः समानिका परेण, नोचिताऽत्र मत्सरेण ॥

यथा वा—वासवोऽपि विक्रमेण, यत्समानतां न याति ।

तस्य वल्लवेश्वरस्य, केन तुल्यता क्रियेत ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च—ओं नमो जनार्दनाय, पापसङ्घमोचनाय ।

दुष्टदैत्यमर्दनाय, पुण्डरीकलोचनाय ॥

अत्र पादान्ते यतिः ॥ १८ ॥

हिं० टी० —जिस पद्य के प्रत्येक पाद में रगण और जगण तथा गुरु और लघु हों, उसे समानिका कहते हैं । अन्य नाम—समानी ॥ १८ ॥

प्रमाणिका (ज, र, ल गु,)—

ज र लगु

। ऽ ।, ऽ । ऽ, । ऽ

प्रमाणिका जरौ लगौ ॥ १९ ॥

सं० टी०—अथानुष्टुभः (८६) षडशीतितम भेदं प्रमाणिकानाम्ना लक्षयति—प्रमाणिकेति । यस्य प्रतिचरणं जगणरगणौ लघुगुरू च भवतः तद् वृत्तं 'प्रमाणिका' इत्युच्यते । उदाहरणान्तरं यथा—

ज र लगु ज र लगु

। ऽ ।. ऽ । ऽ, । ऽ । ऽ ।, ऽ । ऽ, । ऽ ।

पुनातु भक्तिर—च्युत, सदाच्युताङ्घ्रिपद्मयोः ।

श्रुतिस्मृतिप्रमाणिका, भवाम्बुराशितारिका ॥

यथा वा—नमामि भक्तवत्सलं, कृपालुशीलकोमलम् ।

भजामि ते पदाम्बुजम्, अकामिनां स्वधामदम् ॥

इयमेव श्रुतबोधे 'नगस्वरूपिणी' कथ्यते । तद्यथा—

द्वितुर्यषष्ठमष्टमं गुरुप्रयोजितं यदा ।

तदा निवेदयन्ति तां बुधा नगस्वरूपिणीम् ॥

अत्रापि पादान्ते यतिः ॥ १९ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में जगण, रगण, लघु और गुरु हों, उसे प्रमाणिका कहते हैं ।

इसी को प्रमाणी भी कहते हैं । श्रुतबोध में इसका नाम नगस्वरूपिणी है । सामान्य नियम के अनुसार यति पाद के अन्त में होनी चाहिये । परन्तु इसके उच्चारण से प्रतीत होता है कि यति दो दो वर्णों पर होती है अर्थात यतिस्थान इसमें चार हैं २, २, २, २ । इसके दूने को पञ्चचामर कहते हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वितानम्—

वितानमाभ्यां यदन्यत् ॥ २० ॥

सं० टी०—वितानं लक्षयति—वितानमिति । आभ्याम्–समानिका-प्रमाणिकाभ्यां, यदन्यत्–भिन्नम् , अनुष्टुब्जातीयं छन्दः, तद् वितानमुच्यते । अन्यपदेनेहालक्षितच्छन्दोऽतिरिक्तमनुष्टुब्जातीयमकैकविधमूह्यम् । न तु सर्वथाऽयं नियमः, अपि तु प्रायिकः । प्रायो वितानसंज्ञा भवति न तु सर्वथा[1] ॥ १० ॥

हिं० टी०—जो अनुष्टुप् समानिका और प्रमाणिका से भिन्न हो उसे 'वितान' कहते हैं।

यह नियम नहीं अपि तु प्रायिक है। प्रायः वितान कहा जाता है वैसे और भी छन्द समानिका और प्रमाणिका से भिन्न वर्तमान हैं॥ २० ॥

अथ बृहती (९, ५१२)

हलमुखी (र, न, स) ३, ६

र न स

ऽ । ऽ, । । ।, । । ऽ

रान्नसाविह हलमुखी ॥ २१ ॥

सं० टी०—अथ बृहतीभेदेषु (२५१) तमं हलमुखीनाम्ना लक्षयति—रान्नसाविति । यत्र प्रतिचरणं रात् रगणात् , नसौ–नगणसगणौ स्याताम् , तत् 'हलमुखी' नाम छन्दः कथ्यते । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

---

१ अत्र सेतुः—यत्तु सुलक्षणेन 'ज्योत्स्नावितानमैन्दवं पश्य प्रिये मनोरमम्' इत्यादि पद्यत्रयमुदाहृतम् , तदसंगतम् । 'नाराचिका तरौ लगौ' इति तस्य लक्षितत्वात् । यदपि केचित्–अन्यदितो हि वितानमिति लक्ष्यलक्षणसंयुतं लक्षणमाहुः, तदप्यसंगतम् , चित्रपदालक्ष्यत्वात् । यदपि भट्टाः–वयन्तु गृह्णीम एतत् । एतेषां वितानतेति ग्रन्थेन–एको गुरुः द्वौ लघू, पुनर्गुरुरित्ययमेव पुनरिति क्रमविशिष्टस्यानुष्टुप्छन्दसो वितानत्वं वा–इदमुररीचक्रुः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

र न स र न स

ऽ । ऽ, । । ।, । । ऽ, ऽ । ऽ, । । । । । ऽ

गण्डयो-रतिशयकृशं यन्मुखं प्र-क-ट-द-शनम्।

आयतं कलहनिरतं, तां स्त्रियं त्यज हलमुखीम्॥

अत्र त्रिषु षट्सु च यतिः॥ २१॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में रगण, नगण और सगण हों उसे 'हलमुखी' कहते हैं।

इसके ३ तथा ६ वर्णों पर यति होती है॥ २१॥

भुजगशिशुभृता[1] (न, न, म) ७, २

न न म

। । । । । । ऽ ऽ ऽ

भुजगशिशुभृता नौ मः॥ २२॥

सं० टी०—बृहत्या (६४) चतुष्षष्टितमं भेदं भुजगशिशुभृतानामकं लक्षयति—भुजगेति। यस्य प्रतिचरणं नौ—नगणद्वयम्, मः—मगणश्च, तत् 'भुजगशिशुभृता' नाम छन्द उच्यते। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—तदपि न तस्य माणवकलक्षयत्वात्। आभ्यामन्यदित्यत्रोक्तलक्षणनियमाभावोपलक्षतया स्वयमपि व्याख्यातत्वेन पूर्वग्रन्थविरोधाच्च' इति॥

न न म न न म

। । ।, । । ।, ऽ ऽ ऽ । । ।, । । ।, ऽ ऽ ऽ

हृदत-टनिक-टक्षोणी, भुजग-शिशुभृता यासीत्।

मुररिपुदलिते नागे, व्रजजनसुखदा साभूत्॥

अत्र सप्तभिर्द्वाभ्यां च यतिः॥ २२॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में दो नगण और एक मगण हों उसे 'भुजगशिशुभृता' कहते हैं। इस छन्द में सात और दो अक्षर पर यति होती है॥ २२॥

---

१ अत्र भृतास्थाने 'सृता' 'मृता' 'सुता' इत्यादीनि पाठान्तराणि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ पङ्क्तिः (१०, १०२४)

शुद्धविराड् (म, स, ज, गु,)

म स ज गु

ऽ ऽ ऽ, । । ऽ, । ऽ ऽ ।, ऽ

म्सौ ज्गौ शुद्धविराडिदं मतम् ॥ २३ ॥

सं० टी०—पङ्क्तिभेदेषु (३४५) तमं शुद्धविराड्नामकं लक्षयति—म्सौ इति। यस्य दशाक्षरपादात्मकछन्दसः प्रतिचरणं म्सौ–मगण–सगणौ, ज्गौ–जगणगुरू च, इदं 'शुद्धविराड्' इति मतम्। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

म स ज गु म स ज गु

ऽऽ ऽ, । । ऽ, । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ, । । ऽ, । ऽ, ऽ

विश्वं तिष्ठति कुक्षिकोटरे, वक्त्रे यस्य सरस्वती सदा।

अस्मद्वंशपितामहो गुरुर्ब्रह्मा शुद्धविराड् पुनातु नः।

अत्र पादान्ते यतिः ॥ २३ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में मगण, सगण, जगण और एक गुरु वर्ण रहे, उसको 'शुद्धविराट्' छन्द कहते हैं। इस छन्द के पादान्त में यति होती है ॥ २३ ॥

पणवः[1] (म, न, य, गु) ५,५

म न य गु

ऽ ऽ ऽ, । । ।, । ऽ ऽ, ऽ

म्नौ य्गौ चेति पणवनामेदम् ॥ २४ ॥

सं० टी०—पङ्क्तेः (१२१) संख्यं भेदं पणवनाम्ना लक्षयति—म्नौ

---

१ नारायणीसेतुटीकानुसारं पणवलक्षणम्—'म्नौ ज्गौ चेति पणवनामकम्' इति। अत्र सेतुः—'मगण–नगण–जगण–गुरुभिः पणवं नामेति प्राञ्चः। वस्तुतस्तु जगणस्थाने यगण उचितः। तथा च सूत्रम्–'पणवो म्नौ य्गौ' इति। अत एव हि मूलेऽपि क्वचिदेवं पाठः 'म्नौ य्गौ चेति पणवनामेदम्' इति।'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इति। यस्य प्रतिपादं मगणः, नगणः, यगणः, गुरुश्च, तद् वृत्तं 'पणवः' नाम। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

म न य गु म न य गु
ऽ ऽ ऽ, । । ।, । ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ, । । ।, । ऽ ऽ, ऽ
मीमांसारसममृतं पीत्वा, शास्त्रोक्तिः पटुरितरा माति।
एवं संसदि विदुषां मध्ये, जल्पामो जयपणबन्धत्वात्॥

अस्मिन् पद्ये द्वितीयचरणान्ते 'ति' इत्यस्य पादान्तत्वात् गुरुत्वम्। अत्र पञ्चभिः पञ्चभिर्यतिः॥ २४॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में मगण, नगण, यगण और एक गुरु वर्ण हो उसे 'पणव' छन्द कहते हैं। इसके प्रति पाँचवें वर्ण पर यति होती है॥ २४॥

मयूरसारिणी (र, ज, र, ग)—

र ज र गु
ऽ । ऽ, । ऽ ।, ऽ । ऽ, ऽ
जौं रगौ मयूरसारिणी स्यात्॥ २५॥

सं० टी०—अथ पङ्क्तेः (१७१) तमं भेदं मयूरसारिणीनाम्ना लक्षयति—जौं इति। यस्य प्रतिचरणं रगणः, जगणः, रगणः, एको गुरुश्च, तद् वृत्तं 'मयूरसारिणी' नाम। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

र ज र गु र ज र ग
ऽ । ऽ, । ऽ ।, ऽ ।, ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ, । ऽ ।, ऽ । ऽ, ऽ
या वनान्तराण्युपैति रन्तुं या भुज-ङ्गभोगमुक्तचित्ता।
या द्रुतं प्रयाति सन्नतांसा, तां मयूरसारिणीं विजह्यात्॥

अत्र पादान्ते यतिः॥ २५॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक पाद में रगण, जगण, रगण और एक गुरु वर्ण हो उसे 'मयूरसारिणी' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है॥ २५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रुक्मवती (भ, म, स, ग) ५,५

भ म स गु

ऽ । ।,ऽऽ ऽ, । । ऽ,ऽ

भ्मौ सगयुक्तौ रुक्मवतीयम् ॥ २६ ॥

सं० टी०—पङ्क्तेः (१९९) तमं भेदं रुक्मवतीनाम्ना लक्षयति—भ्मौ इति । यस्य प्रतिचरणं भगणः, मगणः, सगणः, एको गुरुश्च, तद्वृत्तं 'रुक्मवती' नाम । उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

भ म स गु भ म स गु

ऽ । ।, ऽ ऽऽ, । ।,ऽ ऽ ऽ । ।, ऽ ऽ ऽ, । । ऽ, ऽ

पादत—ले पद्मोदरगौरे, राजति यस्या ऊर्ध्वगरे-खा ।
सा भवति क्षीलक्षणयुक्ता, रुक्मवती सौभाग्यवती च ॥

मञ्जर्याम्—कायमनोवाक्यैः परिशुद्धैर्यस्य सदा कंसद्विषि भक्तिः ।
राज्यपदे हर्म्यालिरुदारा रुक्मवती विघ्नः खलु तस्य ॥

श्रुतबोधे—तन्वि ! गुरुः स्यादाद्यचतुर्थं पञ्चमषष्ठं चान्त्यमुपान्त्यम् ।
इन्द्रियबाणैर्यत्र विरामः सा कथनीया चम्पकमाला ॥

इयमेव चम्पकमालाऽप्युच्यते । अत्र पादान्ते यतिरिति वृत्तिः । परं प्रतिपञ्चवर्णं यतिः प्रतीयते ॥ २६ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक पाद में भगण, मगण, सगण और एक गुरु वर्ण हो, उसे 'रुक्मवती' नाम छन्द कहते हैं । इसको चम्पकमाला भी कहते हैं । इसके पादान्त में यति कही है । पर यहाँ प्रति पाँच वर्णों पर यति प्रतीत होती है ॥ २६ ॥

मत्ता (म, भ, स, गु,) ४,६—

म भ स गु

ऽ ऽ ऽ,ऽ । ।,। । ऽ, ऽ

ज्ञेया मत्ता मभसगयुक्ता ॥ २७ ॥

सं० टी०—अथ पङ्क्तेः (२४१) तमं भेदं मत्तानाम्ना लक्षयति—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञेया इति । यस्य पादे मगण-भगण-सगण-गुरवः स्युस्तद् वृत्तं 'मत्ता' नाम । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म भ स गु म भ स गु
ऽऽ ऽ,ऽ ।।, ।।ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ,ऽ ।।, ।।ऽ, ऽ
पीत्वा मत्ता मधु मधुपाली, कालिन्दीये तट-वन-कुञ्जे ।
उद्दीव्यन्ती व्रजजनरामाः, प्रेमाविष्टा मधुजिति चक्रे ॥

अत्र चतुर्भिः षड्भिश्च यतिः ॥ २७ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक पाद में मगण, भगण, सगण और एक गुरु वर्ण हो, उसे 'मत्ता' नामक छन्द कहते हैं । इस छन्द में चार और छः वर्णों पर यति होती है ॥ २७ ॥

मनोरमा (न, र, ज, गु)—

न र ज गु
।।।,ऽ।ऽ,।ऽ।,ऽ
नरजगैर्भवेन्मनोरमा । २८॥

सं० टी०—अथ पङ्क्तेः (३४४) तमं भेद 'मनोरमा' इति व्यपदिशन्लक्षयति—नरजगैरिति । यस्य पादे नगण–रगण–जगण–गुरवः स्युस्तद् वृत्तं 'मनोरमा' नाम कथ्यते । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

न र ज गु न र ज गु
।।।, ऽ।ऽ, ।ऽ।,ऽ ।।।, ऽ।ऽ, ।ऽ।,ऽ
तरणि–जातटे विहारिणी, व्रजविलासिनीविलासतः ।
मुररिपोस्तनुः पुनातु वः सुकृतशालिनां मनोरमाः ॥

अत्र पादान्ते यतिः ॥ २८ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक पाद में नगण, रगण, जगण और एक गुरु वर्ण हो, उसे 'मनोरमा' नामक छन्द कहते हैं । इसके पादान्त में यति होती है ॥ २८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपस्थिता (त, ज, ज, गु,) २, ८—

त ज ज गु

ऽ ऽ ।, ।ऽ।, ।ऽ ।, ऽ

त्जौ जौ गुरुणेयमुपस्थिता ॥ २६ ॥

अथ पङ्क्तेः (३६५) तमं भेदम् 'उपस्थिता' नामकं लक्षयति—त्जौ इति। यस्य पादे तगणो जगणद्वयमेको गुरुश्च, तद् वृत्तम् 'उपस्थिता' नाम भवति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

त ज ज गु त ज ज गु

ऽऽ ।,।ऽ।,।ऽ।,ऽ ऽ ऽ ।,।ऽ ।,।ऽ।,ऽ

एषा जगदेकमनोहरा, कन्या कनकोज्ज्वलदीधितिः।

लक्ष्मीरिव दानवसूदनं पुण्यैर्नरनाथमुपस्थिता ॥

अत्र पादान्ते यतिरिति केचित्। अपरे तु द्वाभ्यामष्टभिश्च यतिं कथयन्ति ॥ २६ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में एक तगण, दो जगण और एक गुरु वर्ण हो उसे 'उपस्थिता' नामक छन्द कहते हैं। इसके दो और आठ वर्णों पर यति होती है ॥

अथ त्रिष्टुप् (११, २०४८)

इन्द्रवज्रा (त, त, ज, गु, गु)—

त त ज गु गु

ऽ ऽ ।, ऽऽ ।, । ऽ ।, ऽ ऽ

स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः ॥ ३० ॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (३५७) तमं भेदमिन्द्रवज्रानामकं लक्षयति—स्यादिन्द्रवज्रेति। यदि प्रतिचरणं तौ–तगणद्वयम्, जगौ जगणो गुरुश्च, गः गुरुः स्यात, तदा 'इन्द्रवज्रा' नाम छन्दो भवति। उदाहरणान्तरं यथा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त त ज गुरु गु त त ज गुरु

ऽऽ।,ऽ ऽ।,।ऽ।, ऽऽ ऽऽ।,।ऽ।,।ऽ।,ऽऽ

गोष्ठे गिरिं सव्यकरेण धृत्वा रुष्टेन्द्रवज्राहतिमुक्तवृष्टौ।

यो गोकुलं गोपकुलं च सुस्थं चक्रे स नो रक्षतु चक्रपाणिः॥

यथा वा वृत्तौ—गोब्राह्मणस्त्रीव्रतिभिर्विरुद्धं मांहात्करोत्यल्पमतिर्नृपो यः।

तस्येन्द्रवज्राभिहतस्य पातः क्षोणीधरस्येव भवत्यवश्यम्॥

अत्र पादान्ते यतिः॥ ३०॥

हिं० टी० जिस पद्य के प्रतिचरण में दो तगण, एक जगण और दो गुरु हों उसे 'इन्द्रवज्रा' कहते हैं। इसके पादांत में यति होती है॥ ३०॥

उपेन्द्रवज्रा (ज, त, ज, गु, गु)—

ज त ज गु गु

।ऽ।,ऽऽ।,।ऽ।,ऽऽ

उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ॥ ३१॥

अथ त्रिष्टुभः (३५८) तमं भेदमुपेन्द्रवज्रानामकं लक्षयति–उपेन्द्रवज्रेति। यस्य प्रतिचरणं जतजाः–जगण–तगण–जगणाः गौ–द्वौ गुरू च स्याताम्, तद् वृत्तमुपेन्द्रवज्रा नाम कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा सुवृत्ततिलके—

ज त ज गुरु ज त ज गुरु

।ऽ ।,ऽऽ।,।ऽ।,ऽऽ ऽऽ।,ऽऽ।,।ऽ।,ऽऽ

जिता जगत्येष भवभ्रमस्तै–र्गुरूदितं ये गिरिशं स्मरन्ति।

उपास्यमानं कमलासनाद्यै–रुपेन्द्रवज्रायुधवारिनाथैः॥

यथा वा–त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।

त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव॥

अपि च–सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता, परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।

अहं करोमीति वृथाऽभिमानः, स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः॥

अत्र पादान्ते यतिः॥ ३१॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक पाद में जगण, तगण, जगण तथा गुरु हों उसे 'उपेन्द्रवज्रा' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुष्टुप् छन्द के बाद यदि किन्हीं छन्दों का अधिक प्रयोग मिलता है तो इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा का। इनके अधिक प्रचलित होने का कारण एक तो यह है कि इनकी रचना सरल है। दूसरी बात यह है कि इनकी लय कर्णमधुर होती है दोनों के मेल से तो कई प्रकार बन जाते हैं, जिन्हें आगे उपजाति कहेंगे। उपजातियों का काव्यादियों में तो बहुत अधिक प्रयोग हुआ है॥ ३१॥

उपजातिस्वरूपम्—

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु स्मरन्ति जातिष्विदमेव नाम॥३२॥

सं० टी०—अथ जातिद्वयसङ्कररूपामुपजातिं लक्षयति—अनन्तरोदीरितेति। अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ—अनन्तरम् अव्यवहितम्, उदीरिते—प्रतिपादिते, लक्ष्मणी—लक्षणे, इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रारूपे, भजत इति तौ पादौ यदीयौ यत्सम्बन्धिनौ, स्यातामिति शेषः ता उपजातयो नाम मताः। इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रयोः संकरे उपजातिर्भवतीत्यर्थः।

अत्रेदं बोध्यम्—यच्चतुरक्षरप्रस्तारवत् प्रस्तारे सति आद्यन्तभेदयोः शुद्धेन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रयोः परित्यागे शिष्टाश्चतुर्दश उपजातयो भवन्ति। चतुर्ष्वेव चरणेषु साङ्कर्यम्। न तु द्वयोः, पादद्वयात्मकस्य छन्दसोऽभावात्। तदुक्तमभियुक्तैः—

एकत्र पादे चरणद्वये वा पादत्रये वान्यतरः स्थितश्चेद्।
तयोरिहान्यत्र तदोहनीयाश्चतुर्दशोक्ता उपजातिभेदाः॥ इति॥

एषां चतुर्दशभेदानां च प्राक्तनाचार्यैः पृथक् पृथक् [1]नामान्यपि निर्दिष्टानि। तदेतत्सर्वं कोष्ठकेन प्रदर्श्यते—

---

१ तथा हि—
"कीर्तिर्वाणी तथा माला शाला हंसी तथैव च।
माया जाया तथा बाला आर्द्रा भद्रा ततः परम्॥
प्रेमा रामा तथा ऋद्धिर्बुद्धिश्चैव विलक्षणैः।
उक्तान्येतानि नामानि विज्ञेयानि यथाक्रमम्॥" इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपजातिप्रस्तारः।

संख्या	रूपम्	नाम	संख्या	रूपम्	नाम
१	इ इ इ इ	इन्द्रवज्रा	९	इ इ इ उ	बाला
२	उ इ इ इ	कीर्तिः	१०	उ इ इ उ	आर्द्रा
३	इ उ इ इ	वाणी	११	इ उ इ उ	भद्रा
४	उ उ इ इ	माला	१२	उ उ इ इ	प्रेमा
५	इ इ उ इ	शाला	१३	इ इ उ उ	रामा
६	उ इ उ इ	हंसी	१४	उ इ उ इ	ऋद्धिः
७	इ उ उ इ	माया	१५	इ उ उ उ	सिद्धिः
८	उ उ उ इ	जाया	१६	उ उ उ उ	उपेन्द्रवज्रा

मूलश्लोकोऽयं [1]दशमो भेद आर्द्रानामकः। प्रथमचतुर्थयोरुपेन्द्रवज्रा,

१ इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रासंकररूपाया उपजातेश्चतुर्दशप्रकाराणामुदाहरणानि क्रमशः प्रदर्श्यन्ते—

१ कीर्तिः—अनन्तशास्त्रं बहुलाश्च विद्याः, अल्पश्च कालो बहुविघ्नता च।
यत्सारभूतं तदुपासनीयं, हंसो यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात्॥

२ वाणी—खादन्न गच्छामि हसन्न जल्पे, गतं न शोचामि कृतं न मन्ये।
द्वाभ्यां तृतीयो न भवामि राजन्, किं कारणं भोज! भवामि मूर्खः॥

३ माला—विना न साहित्यविदाऽपरत्र, गुणः कथंचित्प्रथते कवीनाम्।
आलम्बते तत्क्षणमम्भसीव, विस्तारमन्यत्र न तैलविन्दुः॥

४ शाला—साहित्यसंगीतकलाविहीनः, साक्षात्पशुःपुच्छविषाणहीनः।
तृणं न खादन्नपि जीवमानः, तद्भागधेयं परमं पशूनाम्॥

५ हंसी—दिने दिने सा परिवर्द्धमाना, लब्धोदया चान्द्रमसीव लेखा।
पुपोष लावण्यमयान् विशेषान्, ज्योत्स्नान्तराणीव कलान्तराणि॥

६ माया—यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः, स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः, सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति॥

७ जाया—न नाकपृष्ठं न च सार्वभौमं, न पारमेष्ठ्यं न रसाधिपत्यम्।
न योगसिद्धिं न पुनर्भवं वा, वाञ्छन्ति यत्पादरजःप्रपन्नाः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वितीयचतुर्थयोश्चेन्द्रवज्रा। अन्या अप्युपजात्यो भवन्तीत्याह—इत्थमिति। अन्यास्वपि—जगत्यादिष्वपि, जातिषु, इत्थम्—अनेनैव प्रकारेण मिश्रितासु सर्वास्वपि इदमेव—'उपजातिः' इत्येव, नाम स्मरन्ति किल वृद्धा इति शेषः। महाकाव्यादिषु प्रयुक्ता अवलोक्य कथयन्तीति भावः। अर्थात् वंशस्थेन्द्रवंशयोः शालिनीवातोर्म्योश्च संकरो भवति।

इदन्तु बोध्यम्—समानजातिकयोरेव द्वयोर्वृत्तयोः सङ्करे उपजातिसंज्ञा भवति, न विषमजातिकयोः। किंच यत्र चरणद्वयस्य च जातिर्भिन्ना तत्रापि नोपजातित्वम् अपि त्वर्धसमत्वम्। अन्यथा सर्वस्यापि अर्धसमस्य यथाकथंचिद् जातिसंकरसमाक्रान्तत्वात्तच्छेदापत्तिः। अपि च—संकरोऽपि न सर्वेषां वृत्तानाम्, अपि तु कविजनसमादृतस्य श्रुतिसुखकरस्यैव वृत्तद्वयस्य। समजातिकयोरपि नान्तरीयकं वैशिष्ट्यं विहाय सर्वेष्वंशेषु यत्यादिकेषु यत्र साम्यं संघटेत तत्रैव

---

८ बाला—येषां न विद्या न तपो न दानं, ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूताः, मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति॥

९ आर्द्रा—गुणा गुणज्ञेषु गुणा भवन्ति, ते निर्गुणं प्राप्य भवन्ति दोषाः।
सुस्वादुतोयप्रभवा हि नद्यः, समुद्रमासाद्य भवन्त्यपेयाः॥

१० भद्रा—अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा, हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य, स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥

११ प्रेमा—पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे, कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासा।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावात् अनामिका सार्थवती बभूव॥

१२ रामा—कर्पूरगौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि॥

१३ ऋद्धिः—अपाणिपादो जवनो ग्रहीता, पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्य वेत्ता, तमाहुरग्र्यं पुरुषं पुराणम्॥

१४ बुद्धिः (सिद्धिः)—
दीपाः स्थितं वस्तु विभासयन्ति, कुलप्रदीपास्तु भवन्ति केचित्।
निरन्ततीतानपि पूर्वजान्ये प्रकाशयन्ति स्वकुलप्रकर्षात्॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेलनम्। यथा–इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रयोः, [1]स्वागतारथोद्धतयोः, [2]इन्द्रवंशावंशस्थयोरित्यादि। सर्वासूपजातिषु चतुर्दश मेदा भवन्ति॥ ३२॥

हिं० टी०—जिस पद्य का कोई चरण अभी कहे हुए इन्द्रवज्रा के लक्षण द्वारा तथा कोई चरण उपेन्द्रवज्रा के लक्षण द्वारा बना हो, उसे उपजाति छन्द कहते हैं। अन्य जातियों में इसी प्रकार दो छन्दों के मेल से जो पद्य बनेंगे, उनकी भी प्राचीन आचार्य 'उपजाति' संज्ञा कहते हैं।

प्रत्येक उपजाति के अनेक प्रकार होते हैं। चार वर्णों के प्रस्तार की रचना के अनुसार चौदह प्रकार होते हैं। इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के संयोग से भी उपजाति के चौदह प्रकार बनेंगे। प्राचीन आचार्यों ने उनके पृथक् पृथक् नाम भी रखे हैं। संस्कृत टीका में कोष्ठक के द्वारा सब प्रकार नाम सहित दिखा दिये हैं। यही ढंग अन्य उपजातियों का भी होगा।

यहाँ पर इतना ध्यान रखना चाहिये कि एक जाति के दो वृत्तों के मेल को उपजाति कहा जाता है, भिन्न भिन्न जातियों के वृत्तों के मेल को नहीं। यदि भिन्न जाति के वृत्तों के मेल को उपजाति कहा जायगा तो विषम और अर्धसम का उच्छेद हो जायगा। क्योंकि उनके चरण किसी न किसी समवृत्त के निकल आयेंगे। उपेन्द्रवज्रा (त्रिष्टुप्) और वंशस्थ (जगती) आदि के साङ्कर्य तथा अन्य प्रकार के साङ्कर्य के उदाहरण कहीं कहीं मिलते हैं पर कहा जायगा उन्हें विषमवृत्त ही। किं च–यह भी ध्यान देने की बात है कि समान जातियों में भी सभी वृत्तों का मेल नहीं होता। अपि तु जिनका महाकवियों ने प्रयोग किया हो और सुनने में मधुर तथा सुखकर हो। इसलिये इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा, स्वागता और रथोद्धता, वंशस्थ और इन्द्रवंशा आदि के संकर में ही उपजाति होगी।

---

१ उदाहरणं यथा—

(र) ब्रह्मनिष्ठमकनिष्ठचेष्टितं, (स्वा) विष्टरत्रितयशिष्टवरिष्ठम्।
(र) ब्रह्मसूनुरथ विष्टरश्रवाः, (स्वा) विष्टरे समुपविष्टमथष्ट॥

२ उदाहरणं यथा—

इत्थं रथाश्वेभनिषादिनां प्रगे, गणो नृपाणामथ तोरणाद्बहिः।
प्रस्थानकालक्षमवेषकल्पना—कृतक्षणक्षेपमुदैक्षताच्युतः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'अनन्तरोदीरित' इस मूल के पद्य के प्रथम और चतुर्थ चरण उपेन्द्र-वज्रा के द्वितीय और तृतीय इन्द्रवज्रा के हैं। यह प्रस्तार के अनुसार बने भेदों में आर्द्रा नामक दशम भेद है। अन्य भेदों के उदाहरण टिप्पणी में दे दिये हैं॥ ३२॥

सुमुखी (न, ज, ज, ल, गु) ५,६—

न ज ज ल गु

।।।, ।ऽ।, ।ऽ ।, ।ऽ

नजजलगैर्गदिता सुमुखी॥ ३३॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (८८०) तमं भेदं सुमुखीनामकं लक्षयति—नजजलगैरिति। यस्य प्रतिचरणं नगण–जगणद्वयलघुगुरवश्च स्युः तद्वृत्तं 'सुमुखी' इत्युच्यते। उदाहरणान्तरं यथा—

न ज ज ल गु न ज ज ल गु

।।।, ।ऽ।, ।ऽ।।,ऽ ।।,।ऽ। ।,।ऽ।, ।ऽ

तरणिसुतातटकुञ्जगृहे, वदनविधुस्थितदीधितिभिः।

तिमिरमुदस्य मुखं सुमुखी, हरिमवलोक्य जहास चिरम्॥

अत्र पञ्चसु षट्सु च वर्णेषु यतिः॥ ३३॥

हिं० टी०— जिस पद्य के प्रतिचरण में एक नगण, दो जगण, एक लघु और एक गुरु हो, उसे 'सुमुखी' छन्द कहते हैं। इसके पांच और छः वर्णों पर यति का नियम है॥ ३३॥

[1]दोधकम्—(भ, भ, भ, गु, गु)

भ भ भ गु गु

ऽ।।, ऽ।।, ऽ ।।,ऽ ऽ

दोधकवृत्तमिदं भभभाद्गौ॥ ३४॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (४३९) भेदं दोधकनामकं लक्षयति—

१ 'दोधकमिच्छति भत्रितयाद्गौ' इति छन्दोमञ्जरी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दोधकेति। एकवद्भावः। यस्य प्रतिचरणं [1]भगणत्रयं द्वौ गुरू च स्याताम्, तद् वृत्तं 'दोधकं' नाम कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

भ भ भ गुगु भ भ भ गुगु

ऽ। ।, ऽ। ।, ऽ। ।,ऽऽ ऽ। ।, ऽ। ।,ऽ। ।, ऽऽ

देव! सदोध! कदम्बतलस्थ श्रीधर! तावकनामपदं मे।
कण्ठतलेऽसुविनिर्गमकाले, स्वल्पमपि क्षणमेष्यति योगम्॥

यथा वा वृत्तौ—

दोधकमर्थविरोधकमुग्रं, स्त्रीचपलं युधि कातरचित्तम्।
स्वार्थपरं मतिहीनममात्यं, मुञ्चति यो नृपतिः स सुखी स्यात्॥

अत्र पादान्ते यतिनियमः॥ ३४॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में तीन भगण और दो गुरु हों, उसे 'दोधक' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति का नियम है॥ ३४॥

शालिनी (म, त, त, गु, गु) ४, ७

म त त गु गु

ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ।, ऽऽ

शालिन्युक्ता म्तौ तगौ गोऽब्धिलोकैः॥ ३५॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (२८९) तमं भेदं शालिनीनामकं लक्षयति—शालिनीति। यस्य प्रतिचरणं म्तौ-मगणतगणौ, तगौ—तगणगुरू, गः-गुरुश्च भवति, तद् वृत्तं 'शालिनी' नाम कथ्यते। अब्धिभिः-चतुर्भिः, लोकैः-सप्तभिश्च यतिरिति शेषः अयं प्रथमो यतिनियमो ग्रन्थकृतः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

---

१ अत्र सेतुः—'अत्र भभभादिति समाहारद्वन्द्व इति भट्टाः। वस्तुतस्तु द्वन्द्वविधेरनेकसुबन्तविषयत्वादत्र चान्तरङ्गैकशेषप्रसङ्गेन तदभावप्रसङ्गः। कथमन्यथा करौ' इत्यादौ न द्वन्द्वः। तस्माद् भोत्तरो भो भमः, तदुत्तरो भो भमभ इत्युत्तरपदलोपी समासः' इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

म त त गुगु म त त गुगु

ऽऽ ऽ, ऽ ऽ ।, ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ ।, ऽऽ ।, ऽ ऽ

अंहो हन्ति ज्ञानवृद्धिं विधत्ते, धर्मं दत्ते, काममर्थं च सूते ।

मुक्तिं दत्ते सर्वदोपास्यमाना, पुंसां श्रद्धाशालिनी विष्णुभक्तिः ॥ ३५ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में मगण, दो तगण तथा दो गुरुवर्ण हों, उसे 'शालिनी' छन्द कहते हैं। इसके चार और सात अक्षरों पर यति होती है ॥ ३५ ॥

वातोर्मी (म, भ, त, गु, गु) ४, ७

म भ त गु गु

ऽऽऽ, ऽ । ।, ऽ ऽ ।, ऽ ऽ

वातोर्मीयं गदिता म्भौ तगौ गः ॥ ३६ ॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (३०५) तमं भेदं वातोर्मीनामकं लक्षयति—वातोर्मीति । यस्य पादे भगणभगणतगणा द्वौ गुरू च, तद् वृत्तं 'वातोर्मी' इति नाम । पूर्ववत् चतुर्भिः सप्तभिश्च यतिः । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म भ त गुगु म भ त गुगु

ऽऽ ऽ, ऽ । ।, ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ, ऽ । ।, ऽ ऽ । ऽ ऽ

ध्याता मूर्तिः क्षणमप्यच्युतस्य, श्रेणी नाम्नां गदिता हेलयापि ।

संसारेऽस्मिन् दुरितं हन्ति पुंसां, वातोर्मी पोतमिवाम्भोधिमध्ये ॥

अत्र द्वितीये चरणे 'पि' इति पादान्तत्वाद् गुरुः ॥ ३६ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में मगण, भगण, तगण और दो गुरु वर्ण हों, उसको 'वातोर्मी' कहते हैं। इसके चार और सात अक्षरों पर यति होती है ॥ ३६ ॥

[1]श्रीः (भ, त, न, गु, गु) ५, ६—

भ त न गु गु

ऽऽ।, ऽ ऽ ।, । । ।, ऽ ऽ

ष्वरसैः श्रीर्भतनगगैः स्यात् ॥ ३७ ॥

---

१ नारायणीटीकानुसारी पाठस्तु 'बाणरसैः स्याद् भतनगगैः श्रीः' इति ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (६८३) तमं भेदं 'श्री' नाम लक्षयति—पञ्चरसैरिति। यस्य पादे भगण-तगण-नगणाः, द्वौ गुरू च, तद् वृत्तं 'श्री' इत्युच्यते। पञ्चरसैः पञ्चभिः रसैः, षड्भिश्च यतिरिति शेषः। यथा वा श्रीवैद्यनाथशास्त्रिणः—

भ त न गुगु भ त न गुगु
ऽ।।, ऽऽ।, ।।।, ऽऽ ऽ।।, ऽऽ।, ।।।, ऽऽ

शोभनवर्णा सुविशदजातिः, सुक्रमराजद्गुरुलघुयुक्ताः।
सद्यतिरम्यः बुधहृदि छन्दो-मौक्तिकमाला विलसति हृद्या ॥

इयमेवाग्रे मौक्तिकमालेति नामान्तरेण लक्षिता ॥ ३७ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में भगण, तगण, नगण और दो गुरु हों, उसे 'श्री' छन्द कहते हैं। इसमें पाँच और छः वर्णों पर यति का नियम है। इसी का नाम मौक्तिकमाला है ॥ ३७ ॥

[1]भ्रमरविलसितम् (म, भ, न, ल, गु) ४, ७

म भ न लगु
ऽ ऽ ऽ, ऽ ।।,।।।, ।ऽ

म्भौ न्लौ गः स्याद् भ्रमरविलसितम् ॥ ३८ ॥

सं० टी० अथ त्रिष्टुभः (१००६) भेदं भ्रमरविलसितनामकं लक्षयति—म्भौ इति। यस्य पादे म्भौ—मगणभगणौ, न्लौ—नगणलघू, गः—गुरुश्च स्यात्, तद्वृत्तं 'भ्रमरविलसितम्' नाम। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

म भ न लगु म भ न लगु
ऽऽ ऽ, ऽ।।, ।।।, ।ऽ ऽ ऽ ऽ, ऽ।।, ।।।, ।ऽ

किन्ते वक्त्रं चलदलकचितं, किं वा पद्मं भ्रमरविलसितम्।
इत्येवं मे जनयति मनसि प्रीतिं कान्ते परिसरसरसि ॥

अत्र चतुर्भिः सप्तभिश्च यतिः ॥ ३८ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में मगण, भगण, नगण, लघु और

---

१ अयं पाठो नारायणीसेतुटीकासम्मतः। क्वचित् 'भ्रमरविलसिता' इति पाठः छन्दोनाम्नि केवलं भेदः, अन्यत्तु सर्वं समानम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गुरु क्रम से हों, उसे 'भ्रमरविलसित' छन्द कहते हैं। इसके चार और सात वर्णों पर यति होती है ॥ ३८ ॥

रथोद्धता (र, न, र, ल, गु)

र न र लगु
ऽ। ऽ, ।। ।, ऽ। ऽ, । ऽ

रान्नराविह रथोद्धता लगौ ॥ ३९ ॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (६९९) तमं भेदं रथोद्धतानामकं लक्षयति—रान्नराविति। यस्य पादे रात्—रगणात्, नरौ—नगणरगणौ, लगौ—लघुगुरू च स्याताम् तद् वृत्तं 'रथोद्धता' नाम। अत्र पादान्ते यतिनियमः। यथा वा नाट्यशास्त्रे—

र न र ल गु र न र लगु
ऽ । ऽ, । । ।, ऽ । ऽ, । ऽ ऽ । ऽ, । । ।, ऽ । ऽ, । ऽ

किं त्वया सुभट ! दूरवर्जितं, नात्मनो न सुहृदां प्रियं कृतम्।
यत्पलायनपरायणस्य ते, याति धूलिरधुना रथोद्धता ॥

सुवृत्ततिलके—

रम्यनर्मकलभोगतर्जनी भ्रूलतेव तरलारियोषिताम्।
वैजयन्त्यभिमुखी रणे रणे भाति ते नरपते रथोद्धता ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में रगण, नगण, रगण, लघु और गुरु हों, उसे रथोद्धता कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है ॥३९॥

स्वागता (र, न, भ, गु, गु)

र न भ गुगु
ऽ। ऽ, । ।।' ऽ ।। ऽ ऽ

स्वागतेति रनभाद्गुरुयुग्मम् ॥ ४० ॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (२८६) तमं भेदं स्वागतानामकं लक्षयति—स्वागतेति। यस्य पादे रगण-नगण-भगणाः, गुरुद्वयं च, तद् वृत्तं 'स्वागता' नाम भवति। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

र न भ गुगु र न भ गुगु
ऽ।, ऽ।। ।, ऽ।।, ऽऽ ऽ।ऽ, ।।।, ऽ। ।, ऽऽ
यस्य चेतसि सदा मुर–वैरी, वल्लवीजनविलास–विलोलः।
तस्य नूनममरालयभाजः, स्वागतादरकरः सुरराजः॥

अत्रापि पादान्ते यतिनियमः॥ ४०॥

हिं० टी० जिस पद्य के प्रत्येक चरण में रगण, नगण, भगण और दो गुरु क्रम से हों, उसे 'स्वागता' कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है॥ ४०॥

[1]वृत्ता (न, न, स, गु, गु) ४, ७—

न न स गुगु
।।।, ।।।, ।।ऽ, ऽऽ
ननसगगुरुरचिता वृत्ता॥ ४१॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (२५६) तमं भेदं वृत्तानामकं लक्षयति—ननसेति। यस्य पादे नगणद्वयम्, एकः सगणः, गुरुद्वयं च क्रमेण, तद् 'वृत्ता' नाम। अत्र चतुर्भिः सप्तभिश्च यतिः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न न स गुगु न न स गुगु
।।।।।।।।ऽ, ऽ ऽ ।।।, ।।।, ।।ऽ, ऽऽ
द्विजगुरुपरिभवकारी यो, नरपति-रति-घनलुब्धात्मा।
ध्रुवमिह निपतति पापोऽसौ, फलमिव पवनहतं वृन्तात्॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में दो नगण, एक सगण और दो गुरु क्रम से हों, उसे 'वृत्ता' छन्द कहते हैं। इसके चार और सात वर्णों पर यति का नियम है॥ ४१॥

भद्रिका (न, न, र, ल, गु)—

न न र लगु
।।।, ।।।, ऽ। ऽ, ।ऽ
ननरलगुरुभिश्च भद्रिका॥ ४२॥

---

१ 'वृन्ता' इति नामान्तरं पिङ्गलसूत्र–नारायणीटीकानुसारम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (७२४) तमं भेदं भद्रिकानामकं लक्षयति—ननरलेति। यस्य पादे नगणद्वय–रगण–लघु–गुरवश्च, तद् भद्रिका नाम। अत्र पादान्ते यतिः। उदाहरणान्तरं यथा श्रीवैद्यनाथशास्त्रिणः—

न न र लगु न न र लगु

।।।,।।।,ऽ।ऽ,।ऽ ।।।,।।।,ऽ।ऽ,।ऽ

सकलदुरितनाशकारिणी, मदभिलषितकामपूरणी।
भगवति तव मूर्तिरेकिका, मम मनसि सदाऽस्तु भद्रिका॥ ४२॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में दो नगण, एक रगण, एक लघु और एक गुरु हो, उसे 'भद्रिका' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है॥ ४२॥

[1]श्येनिका (र, ज, र, ल, गु)—

र ज र ल गु

ऽ।ऽ, ।ऽ ।,ऽ ।ऽ,।ऽ

श्येनिका रजौ रलौ गुरुर्यदा॥ ४३॥

सं० टी०— अथ त्रिष्टुभः (६८३) भेदं श्येनिकानामकं लक्षयति—श्येनिकेति। यस्य पादे रजौ–रगणजगणौ रलौ–रगणलघू, गुरुर्यदा, तदा वृत्तं 'श्येनिका' नाम। अत्र पादान्ते यतिः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

र ज र लगु र ज र लगु

ऽ। ऽ,।ऽ।,ऽ।ऽ,।ऽऽ।ऽ,।ऽ।,ऽ।ऽ।ऽ

यस्य कीर्तिरिन्दुकुन्दचन्दन-श्येन्यशेषलोकपावनी सदा।
जाह्नवीव विश्ववन्द्यविभ्रमा, तं भजामि भावगम्यमच्युतम्॥ ४३॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में रगण, जगण, रगण, एक लघु और एक गुरु क्रमशः हों, उसे 'श्येनिका' छन्द कहते हैं। यति पादान्त में होती है॥ ४३॥

---

१ 'श्येनी' इति नामान्तरं पिङ्गलसूत्रसम्मतम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मौक्तिकमाला (भ, त, न, गु, गु) ५,६—

म त न गु गु

ऽ।।, ऽऽ।, ।।।, ऽऽ

मौक्तिकमाला यदि भतनादूगौ ॥ ४४ ॥

सं० टी०—मौक्तिकमालेति पूर्वलक्षितं 'श्री' छन्द एव। अतो नेह विशेषवक्तव्यापेक्षा ॥ ४४ ॥

उपस्थितम् (ज, स, त, गु, गु)

ज स त गु गु

।ऽ।, ।।ऽ, ऽऽ।, ऽऽ

उपस्थितमिदं ज्सौ ताद्गकारौ ॥ ४५ ॥

सं० टी०—अथ त्रिष्टुभः (२८६) तमं भेदमुपस्थितनामकं लक्षयति—उपस्थितमिति। यस्य पादे जगण–सगण–तगणा द्वौ गुरू च, तद् वृत्तम् 'उपस्थितम्' नाम। उदाहरणान्तरं यथा श्रीवैद्यनाथशास्त्रिणः—

ज स त गुगु ज स त गुगु

।ऽ।,।। ऽ,ऽऽ।,ऽऽ ।ऽ।,।। ऽ,ऽऽ।,ऽऽ

जगज्जननि विद्वच्चित्तसंस्थे समग्रजडतानाशैकदक्षे।

सनाथय तव द्वारस्य मध्ये उपस्थितमपाङ्गालोकनेन ॥

अत्र पादान्ते यतिनियमः ॥ ४५ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, सगण, तगण और दो गुरु हों, उसे 'उपस्थित' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है ॥ ४५ ॥

अथ जगती (१२,४०९६)

चन्द्रवर्त्म (र, न, भ, स) ४, ८

र न भ स

ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।।, ।।ऽ

चन्द्रवर्त्म गदितं तु रनभसैः ॥ ४६ ॥

सं० टी०—अथ द्वादशाक्षरपादाया जगत्याः (१२७१) मेदं चन्द्रवर्त्म-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नामकं लक्षयति—चन्द्रवर्त्मेति। रनभसैः—रगण–नगण–भगण–सगणैः, 'चन्द्रवर्त्म' इत्याख्यं छन्दः, गदितम्—कथितम्। अत्र चतुर्भिरष्टभिश्च यतिः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

र न भ स र न भ स

ऽ।ऽ,। ।।,ऽ।।,।।ऽ, ऽ।ऽ,। ।।,ऽ।।,।।ऽ

चन्द्रवर्त्म पिहितं घनतिमिरैः, राजवर्त्म रहितं जनगमनैः।
इष्टवर्त्म तदलङ्कुरु सरसे! कुञ्जवर्त्मनि हरिस्तव कुतुकी ॥ ४६ ॥

हिं॰ टी॰—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में रगण, नरण, भगण और सगण हों, उसे 'चन्द्रवर्त्म' छन्द कहते हैं। इसके चार और आठ वर्णों पर यति होती है ॥ ४६ ॥

[1]वंशस्थम् (ज, त, ज, र)

ज त ज र

।ऽ।, ऽऽ।,।ऽ।,ऽ।ऽ

जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ ॥ ४७ ॥

सं॰ टी॰—अथ जगत्याः (१३८२) तमं भेदं वंशस्थनामकं लक्षयति—जतौ इति। यस्य पादे जतौ–जगणतगणौ, जरौ–जगणरगणौ, तद् वृत्तं वंशस्थमिति नाम। अत्र पादान्ते यतिः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

ज त ज र ज त ज र

।ऽ।, ऽऽ।,।ऽ।,ऽ।ऽ ।ऽ।, ऽऽ।,।ऽ।,ऽ।ऽ

विशुद्ध-वंशस्थमुदार-चेष्टितं, गुणप्रियं मित्रमुपात्तसज्जनम्।
विपत्तिमग्नस्य करावलम्बनं, करोति यः प्राणपरिक्रमेण ॥

यथा वा—नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥ ४७ ॥

हिं॰ टी॰—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण और रगण हों, उसे 'वंशस्थ' कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है ॥ ४७ ॥

---

१ पिङ्गलसूत्रेऽस्य 'वंशस्था' इति नाम। तथा च सूत्रम्–'वंशस्था ज्तौ ज्रौ' इति। क्वचित् 'वंशस्थविलम्' इति नाम।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इन्द्रवंशा (त, त, ज, र)—

त त ज र

ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ

स्यादिन्द्रवंशा ततजौ रसंयुतौ ॥ ४८ ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१३८१) तमं भेदमिन्द्रवंशानामकं लक्षयति—स्यादिति। [1]ततजौ—तकारोत्तरस्तकारस्ततः, ततश्च जश्चेति ततजौ, रसंयुतौ—रगणसहितौ यस्य पादे, तद् वृत्तम् 'इन्द्रवंशा' नाम। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

त त ज र त त ज र

ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ, ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ

कुर्वीत यो देवगुरुद्विजन्मना-मुर्वीपतिः पालनमर्थलिप्सया।
तस्येन्द्रवंशेऽपि गृहीतजन्मनः सञ्जायते श्रीः प्रतिकूलवर्तिनी ॥

मञ्जर्याम्—दैत्येन्द्रवंशाग्निरुदीर्णदीधितिः पीताम्बरोऽसौ जगतां तमोपहः।
यस्मिन् ममज्जुः शलभा इव स्वयं, ते कंसचाणूरमुखा मखद्विषः ॥

अत्रापि पादान्ते यतिः। वंशस्थेन्द्रवंशयोः साङ्कर्ये उपजातिर्भवतीति पूर्वमुक्तमेव। सर्वा अप्युपजातयः प्रस्तारप्रक्रियया चतुर्दशप्रकारा भवन्तीत्यपि प्रागुक्तम्। एकमुदाहरणं पूर्वं प्रदर्शितम्। विस्तरभिया न सर्वेषामुदाहरणानि प्रदर्श्यन्ते ॥ ४८ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः दो तगण, एक जगण और अन्त में एक रगण हो, उसे 'इन्द्रवंशा' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है।

यह पहले कहा जा चुका है कि वंशस्थ और इन्द्रवंशा के मेल से भी उपजाति होती है। तथा प्रति उपजाति के प्रस्तार की रचना के अनुसार

---

१ अयं पाठः सेतुटीकासमादृत इह सन्निवेशितः। नारायणीटीकासम्मतस्तु 'स्यादिन्द्रवंशा ततजैरसंयुतैः' इति पाठः। अत्र सेतुः—'तत इति न द्वन्द्वः' अपि तूत्तरपदलोपी समासः। ततः जशब्देन द्वन्द्वे 'ततजौ' इति द्विवचनान्तमुचितम्। तृतीयाबहुवचनान्तपाठस्तु लेखकप्रमादादिति तत्त्वम्' इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१४ भेद होते हैं। वंशस्थ और इन्द्रवंशा से बनी हुई उपजाति का एक उदाहरण दिया जा चुका है। सब के पृथक् पृथक् उदाहरण विस्तारभय से नहीं दिये ॥ ४८ ॥

तोटकम्—(स, स, स, स)

स स स स

।।ऽ, ।।ऽ, ।।ऽ, ।।ऽ

इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम् ॥ ४९ ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१७५६) तमं भेदं तोटकनामकं लक्षयति—**इह तोटकमिति।** इह—छन्दःशास्त्रे, अम्बुधिसैः—चतुर्भिः सगणैः, युक्तमिति शेषः, छन्दः, तोटकमिति नाम्ना प्रथितम्—प्रख्यातम्। पादान्ते यतिनियमः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

स स स स स स स स

।। ऽ,।।ऽ,।।ऽ,।।ऽ, ।।ऽ, ।।ऽ, ।।ऽ,।।ऽ

त्यज तोटकमर्थनियोगकरं, प्रमदाधिकृतं व्यसनोपहतम्।
उपधाभिरशुद्धमतिं सचिवं, नरनायक! भीरुकमायुधिकम् ॥४९॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में चार सगण हों, उसे 'तोटक' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति का नियम है। अन्य उदाहरण—

जय राम सदा सुखधाम हरे, रघुनायक सायक चाप धरे।
भववारणदारणसिंह प्रभो, गुणसागर नागर नाथ विभो ॥ ४९ ॥

द्रुतविलम्बितम् (न, भ, भ, र)—

न भ भ र

।।।, ऽ ।।,ऽ। ।,ऽ।ऽ

द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ ॥ ५० ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१४६४) तमं भेदं द्रुतविलम्बितं लक्षयति—**द्रुतविलम्बितमिति।** यस्य प्रतिचरणं नगणभगणौ भगणरगणौ च, तद् वृत्तं 'द्रुतविलम्बितं' नाम। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न भ भ र न भ भ र
।।।,ऽ ।।,ऽ ।।,ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।।,ऽ। ।,ऽ।ऽ
द्रुतगतिः पुरुषो घनभाजनं, भवति मन्दगतिश्च सुखोचितः।
द्रुतविलम्बतखेलगतिर्नृपः, सकलराज्यसुखं प्रियमश्नुते ॥
यथा वा—इतरपापफलानि यदृच्छया, वितर तानि सहे चतुरानन !
अरसिकेषु कवित्वनिवेदनं, शिरसि मा लिख मा लिख मा लिख ॥
पादान्ते यतिः । अस्यैव 'सुन्दरी' इति नामान्तरम् ॥ ५० ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः एक नगण, दो भगण और अन्त में रगण हो उसे द्रुतविलम्बित छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है। इसको 'सुन्दरी' भी कहते हैं ॥ ५० ॥

पुटः (न, न, म, य) ८, ४—

न न म य
।।।, ।।।, ऽऽऽ, ।ऽऽ
वसुयुगविरतिर्नौ म्यौ पुटोऽयम् ॥ ५१ ॥

सं० टी० –अथ जगत्योः (५७६) तमं भेदं पुटनामकं लक्षयति—वसुयुगेति। यस्य प्रतिचरणं नौ—नगणद्वयं, म्यौ–मगणयगणौ, अयं 'पुटः' इति छन्दो भवति। वसवः[1]–अष्टौ, युगाः–चत्वारः, तैर्विरतिर्यतिश्चेह भवति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न न म य न न म य
। ।।,। ।।,ऽऽ ऽ,।ऽऽ,। ।।,। ।।,ऽऽऽ,। ऽऽ
न च्चिलति कथञ्चिन्न्यायमार्गात्, वसुनि शिथिलमुष्टिः पार्थिवो यः।
अमृतपुट इवासौ पुण्यकर्मा, भवति जगति सेव्यः सर्वलोकैः ॥ ५१ ॥

हिं० टी० जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण, मगण और यगण हों, उसे 'पुट' नामक छन्द कहते हैं। इसके आठ और चार वर्णों पर यति होती है ॥ ५१ ॥

---

१ अत्र सेतुः 'भट्टास्तु मुनिशरैः' इति पाठं धृत्वा सप्तभिः पञ्चभिश्च यतिरित्याहुः। तच्चिन्त्यम्। 'पुटो नौ म्यौ वसुसमुद्राः' इति सूत्रविरोधात्, इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रमुदितवदना (न, न, र, र,)

न न र र

।। ।,।।।,ऽ ।ऽ,ऽ । ऽ

प्रमुदितवदना भवेन्नौ च रौ ॥ ५२ ।

सं० टी:—अथ जगत्याः (१२१६) तमं भेदं प्रमुदितवदनानामकं लक्षयति—प्रमुदित इति । यस्य प्रतिचरणं नौ—नगणद्वयम्, रौ—रगणद्वयं च, तद् वृत्तं प्रमुदितवदना नाम । सूत्रे 'चञ्चलाक्षिका' नाम । उदाहरणान्तरं अत्र पादान्ते यतिः ॥ ५२ ॥

यथा माघे—

न न र र म न र र

। ।।,।।।,ऽ । ऽ,ऽ।ऽ, ।।।,।।।,ऽ। ऽ,ऽ।ऽ

अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया-मतनु-तरतयैव सन्तानकः ।
तरुणपरभृतः स्वनं रागिणा-मतनुत रतये वसन्तानकः ॥

हि० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण और दो रगण हों, उसे 'प्रमुदितवदना' छन्द कहते हैं । पिङ्गलसूत्र में इसे 'चञ्चलाक्षिका' कहा गया है । इसके पादान्त में यति होती है ॥ ५२ ॥

कुसुमविचित्रा (न, य, न, य) ६, ६,

न य न य

। । ।, ।ऽ ऽ, ।।। ।, ऽऽ

न-य-सहितौ न्यौ कुसुमविचित्रा ॥ ५३ ॥

अथ जगत्याः (९७६) तमं भेदं कुसुमविचित्रानामकं लक्षयति—नयेति । यस्य पादे नयसहितौ—नगण-यगण-सहितौ, न्यौ—नगणयगणौ, तद् वृत्तं कुसुमविचित्रा नाम । उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न य न य न य न य

।। ।,।ऽऽ, ।।।,।ऽऽ, ।।।,।ऽऽ, ।।।,।ऽऽ

विगलितहारा सकुसुममाला, सचरणलाक्षा वलयसुलक्ष्मा ।
विरचितवेषं, सुरतविशेषं, कथयति शय्या कुसुमविचित्रा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[1]अत्र षड्भिः षड्भिर्यतिः ॥ ५३ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, यगण, नगण और यगण हों, उसे 'कुसुमविचित्रा' छन्द कहते हैं। इसके छ छ वर्णों पर यति होती है ॥ ५३ ॥

जलोद्धतगतिः (ज, स, ज, स) ६, ६,

ज स ज स

।ऽ।, ।।ऽ, ।ऽ।, ।।ऽ

रसैर्जसजसा जलोद्धतगतिः ॥ ५४ ।

सं० टी०—अथ जगत्याः (१८८६) तमं भेदं जलोद्धतगतिनामकं लक्षयति—रसैरिति यस्य पादे जसजसा—जसगणोत्तरौ जसगणौ, तद्वृत्तं 'जलोद्धतगतिः' इति नाम। रसैः—रसाश्च रसाश्चेत्येकशेषः। षड्भिः—षड्भिरित्यर्थः, यतिरिति शेषः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

ज स ज स ज स. ज स

।ऽ।, ।।ऽ, । ऽ ।, ।।ऽ, ।ऽ।, ।।ऽ, ।ऽ।।।ऽ

यदीयहलतो विलोक्य विपदं, कलिन्दतनया जलोद्धतगतिः।
विलासविपिनं विवेश सहसा, करोतु कुशलं हली स जगताम् ॥ ५४ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, सगण, जगण और सगण हों, उसे 'जलोद्धतगति' कहते हैं। इसमें छ छ वर्णों पर यति होती है ॥ ५४ ॥

भुजङ्गप्रयातम् (य, य, य, य)

य य य य

।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ

भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः। ५५ ।

सं० टी०—अथ जगत्याः (६५८) भेदं भुजङ्गप्रयातनामकं लक्षयति—

---

१ नारायणभट्टाः पादे यतिं कथयन्ति। वृत्तिकारस्तु षड्भिः षडभिर्यतिमाह। षड्भिर्यतेः स्पष्टमनुभूयमानत्वाद् वृत्तिकारोक्तमेव ज्याय इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भुजंगप्रयातमिति। चतुर्भिर्यैः—यगणैः, पादरचना चेद् भवेत्, तद् वृत्तं 'भुजङ्गप्रयातं' नाम भवति। अत्र पादान्ते यतिः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

य य य य य य य य
। ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

स्वदारात्मजज्ञातिमृत्यो विहाय, स्वमेतं ह्रदं जीवनं लिप्समानः।
मया क्लेशितः कालियेत्थं कुरु त्वं, भुजङ्ग! प्रयात द्रुतं सागराय॥

वृत्तौ—पुरः साधुवद्भाति मिथ्या विनीतः परोक्षे करोत्यर्थनाशं हताशः।
भुजङ्गप्रयातोपमं यस्य चित्तं, त्यजेत्तादृशं दुश्चरित्रं कुमित्रम्॥

अपि च—नमस्तेऽस्तु गंगे त्वदङ्गप्रसङ्गात्, भुजङ्गास्तुरङ्गाः कुरङ्गाः प्लवङ्गाः।
अनंगारिरंगाः सगांगाः शिवांगा, भुजंगाधिपाङ्गीकृताङ्गाः भवन्ति॥ ५५॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में चार यगण हों उसे 'भुजङ्गप्रयात' कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है॥ ५५॥

स्रग्विणी (र, र, र, र)

र र र र
ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ

रैश्चतुर्भिर्युता स्रग्विणी संमता॥ ५६।

सं० टी०—अथ जगत्याः (११७१) तमं भेदं स्रग्विणीनामकं लक्षयति—रैरिति। चतुर्भी रगणैर्युता स्रग्विणी संमतेति सरलोऽर्थः। पादान्ते यतिः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

र र र र र र र र
ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ

इन्द्रनीलोपलेनेव या निर्मिता, शातकुम्भद्रवालंकृता शोभते।
नव्यमेघच्छविः पीतवासा हरेर्मूर्तिरास्तां जयायोरसि स्रग्विणी॥

यथा वा—अच्युतं केशवं रामनारायणं, कृष्णदामोदरं वासुदेवं हरिम्।
श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभं जानकीनायकं रामचन्द्रं भजे॥ ५६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में चार रगण हों, उसे स्रग्विणी कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है ॥ ५६ ॥

प्रियंवदा (न, भ, ज, र)

न भ ज र

। । ।, ऽ । ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ

भुवि भवेन्नभजरैः प्रियंवदा ॥ ५७ ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१४००) तमं भेदं प्रियंवदानामकं लक्षयति—भुवीति । नभजरैः–नगण–भगण–जगण–रगणैः, क्रमशः प्रयुक्तैः, भुवि–लोके, प्रियंवदा नाम छन्दो भवेत् । पादान्ते यतिः । यथा वा—

न भ ज र न भ ज र

। । ।, ऽ । ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ, । । ।, ऽ । ।, । ऽ । ऽ । ऽ

हसिततामरसनेत्रसारसा, रजनिवल्लभमुखाऽलिकुन्तला ।

स्मितवती पतिहितैकमानसा, सुकृतिनो हि दयिता प्रियम्वदा ॥ ५८ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, भगण, जगण और रगण हों, उसे प्रियंवदा छन्द कहते हैं । यति पादान्त में होती है ॥५७॥

मणिमाला (त, य, त, य) ६, ६

त य त य

ऽ ऽ ।, । ऽ ऽ, ऽ ऽ ।, । ऽ ऽ

त्यौ त्यौ मणिमाला छिन्ना गुहवक्त्रैः ॥ ५८ ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (७८१) तमं भेदं मणिमालानामकं लक्षयति—त्यौ इति । त्यौ–तगणयगणौ, त्यौ–तगणयगणौ, यदि चेत्प्रतिचरणं स्याताम्, तदा 'मणिमाला' इति नामकं छन्दो भवति । यतिनियममाह—छिन्नेति । गुहः–कार्तिकेयः, षडाननः, तस्य वक्त्रैः मुखैः, षड्भिरित्यर्थः, छिन्ना यतिमती । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

त य त य त य त य

ऽ ऽ ।, । ऽ ऽ, ऽ ऽ, । । ऽ ऽ, ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ । ।, ऽ ऽ

प्रह्वामरमौलौ रत्नोपलक्लृप्ते, जातप्रतिबिम्बा शोणा मणिमाला ।

गोविन्दपदाब्जे राजी नखराणामास्तां मम चित्ते ध्वान्तं शमयन्ती ॥५८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से तगण, यगण, तगण और यगण हों और छ छ वर्णों पर यति हो, उसे 'मणिमाला' छन्द कहते हैं ॥ ५८ ॥

ललिता (त, भ, ज, र)

त, भ ज र

ऽ ऽ ।,ऽ । ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ

धीरैरभाणि ललिता तभौ जरौ ॥ ५९ ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१३९७) तभं भेदं ललितानामकं लक्षयति—धीरैरिति । प्रतिचरणं तभौ-तगण-भगणौ, जरौ—जगण-रगणौ, यदि स्याताम्, तदा 'धीरैः—छन्दःशास्त्राचार्यैः ललिता' इति नाम अभाणि—कथिता । उदाहरणान्तरं यथा श्रीवैद्यनाथशास्त्रिणः—

त भ ज र त भ ज र

ऽ ऽ ।,ऽ । ।,। ऽ । ऽ । ऽ, ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

साऽस्ते पुरत्रयमतीत्य सुन्दरी, गीता ततस्त्रिपुरसुन्दरी भुवि ।

लोकानतीत्य ललते यतो हि सा, भक्तैरभाणि ललिताऽभिधानतः ।

पादान्ते यतिः ॥ ५९ ॥

हिं० टी० जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से तगण, भगण, जगण और रगण हों, उसे 'ललिता' छन्द कहते हैं । यति पादान्त में होती है ॥५९॥

[1]मौक्तिकदाम (ज, ज, ज, ज)

ज ज ज ज

। ऽ ।, । ऽ ।, । ऽ ।, । ऽ ।

जजाविह मौक्तिकदाम जजौ च ॥ ६० ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (२९२६) भेदं मौक्तिकदामनामकं लक्षयति—जजाविति । जजौ—जगणद्वयम्, जोत्तरो जः, जज इत्युत्तरपदलोपिना

---

१ नारायणीटीकासमादृतं लक्षणं—'चतुर्जगणं वद मौक्तिकदाम' इति । सेतुटीकायां तु नैतच्छन्दः प्रदर्शितम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समासेनैवैकवचनान्तः पाठो युक्तः। च-पुनः, जजौ=जगणद्वयम्। इहापि पूर्ववदेवैकवचनान्तः पाठः समुचितः, चेत्, तदा इह=छन्दःशास्त्रे 'मौक्तिकदाम' इति नाम छन्दः कथ्यते इति शेषः। उदाहरणान्तरं यथा वाणीभूषणे—

ज ज ज ज ज ज ज ज ज
। ऽ ।,। ऽ ।, । ऽ ।, । ऽ ।, । ऽ, । । ऽ ।,। ऽ ।, । ऽ ।

माया तव किंचिदकारि कदाऽपि विलासिनि वाम्यमनुस्मरतासि।
तथापि मनस्तव नाश्वसनाय, व्रजामि कुतो भवतीमपहाय॥

यतिः पादान्ते॥ ६०॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में चार जगण हों, उसे 'मौक्तिक-दाम' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है।

छन्दःप्रभाकर में इसका नाम 'मोतियदाम' कहा है और यह लक्षण किया है—'जजौ सियराम जु मोतियदाम' छ० प्र० पृ० १५२॥ ६०॥

[1]प्रमिताक्षरा (स, ज, स, स,)—

स ज स स
। । ऽ, । ऽ ।, । ।ऽ, । । ऽ

प्रमिताक्षरा सजससैरुदिता॥ ६१॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१७७२) तमं भेदं प्रमिताक्षरानामकं लक्षयति—प्रमिताक्षरेति। सजससैः—सगणजगणाभ्यां ततः सगणद्वयेन चेद् पादरचना, तदा 'प्रमिताक्षरा' नाम, उदिता—कथिता, पूर्वाचार्यैरिति शेषः। यतिः पादान्ते। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

स ज स स स ज स स
। । ऽ,। ऽ ।,। । ऽ, । । ऽ, । । ऽ, । ऽ ।, । । ऽ,।।ऽ

परिशुद्धवाक्यरचनातिशयं, परिषिञ्चति श्रवणयोरमृतम्।
प्रमिताक्षरापि विपुलार्थवती, कविभारती हरति मे हृदयम्॥

---

१ अत्र क्वचित् 'विभावरी' इति छन्दो विभावरी तु सा जरौ जरौ यतः' इत्येवं लक्षितम्। परन्तु न तद् नारायणीसेतुटीकयोः। अतस्तदुपेक्षितमिह।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माघे—प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ, विफलत्वमेति बहुसाधनता।
अवलम्बनाय दिनभर्तुरभू—न्न पतिष्यतः करसहस्रमपि॥ ६१॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रति चरण में क्रम से सगण, जगण और पुनः दो सगण हों, उसे 'प्रमिताक्षरा' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है॥ ६१॥

उज्ज्वला[1] (न, न, भ, र)

न न भ र
।।।, ।।।, ऽ।।, ऽ।ऽ

ननभरसहिताऽभिहितोज्ज्वला॥ ६२॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१४७२ तमं भेदमुज्ज्वलानामकं लक्षयति—ननभरेति। ननभरैः नगणद्वय-भगण-रगणैः, सहिता—युक्ता, 'उज्ज्वला' इति नाम अभिहिता कथिता पूर्वाचार्यैरिति शेषः यतिः पादान्ते। उदाहरणान्तरं यथा श्रीवैद्यनाथशास्त्रिणः—

न न भ र न न भ र
।।।, ।।।, ऽ।।, ऽ।ऽ, ।।।, ।।।, ऽ।।, ऽ।ऽ

अधिहृदयमनाहत-सारसे, तव पदमनुचिन्तयते हि यः।
भगवति ननु तस्य यशोध्वजः, स्फुरति च धिषणा स्फटिकोज्ज्वला ६१

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रति चरण में क्रम से दो नगण, भगण और रगण हो उसे 'उज्ज्वला' छन्द कहते हैं। यति पादान्त में होती है॥ ६२॥

वैश्वदेवी (म, म, य, य) ५, ७

म म य य
ऽऽऽ, ऽऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ

पञ्चाश्वैश्छिन्ना वैश्वदेवी ममौ यौ॥ ६३॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (५७७) तमं भेदं वैश्वदेवीनामकं लक्षयति—पञ्चाश्वैरिति। यस्याः प्रतिचरणं ममौ—मोत्तरो मो मम इति उत्तरपदलोपी समास इति एकवचनान्तपाठो युक्तः, मगणद्वयमित्यर्थः। यौ—यगणद्वयं च,

---

१ 'ननभरसहिता महितोज्ज्वला' इति नारायणीटीकासम्मतः पाठः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तद् वृत्तं 'वैश्वदेवी' इति नाम कथ्यते इति शेषः। पञ्चाश्वैः–पञ्चभिः, अश्वैः–सप्तभिश्च, छिन्ना–यतियुक्ता च भवति। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म म य य म म य य
ऽऽऽ, ऽऽऽ, ।ऽऽ ।ऽऽ, ऽऽऽ, ऽऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ
अर्चामन्येषां, त्वं विहायामराणा–मद्वैतनैकं, विष्णुमभ्यर्च्य भक्त्या।
तत्राशेषात्म–न्यर्चिते भाविनी ते, भ्रातः! सम्पन्ना, राघना वैश्वदेवी॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक पाद में क्रम से दो मगण और दो यगण हों, उसे 'वैश्वदेवी' छन्द कहते हैं। यति पांच और सात वर्णों पर होनी चाहिये॥ ६३॥

जलधरमाला[1] (म, भ, स, म) ४, ८—

म भ स म
ऽ ऽऽ, ऽ।।, ।।ऽ, ऽ ऽ ऽ
अब्ध्यष्टाभिर्जलधरमाला म्भौ स्मौ॥ ६४॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (२४१) तमं भेदं जलधरमालानामकं लक्षयति—अब्ध्यष्टाभिरिति। यस्य प्रतिचरणं म्भौ–मगणभगणौ, स्मौ–सगणमगणौ च तद् वृत्तं 'जलधरमाला' इति नाम उच्यते। अब्ध्यष्टाभिः–अब्धिः चत्वारः, चतुर्भिरष्टभिश्च, छिन्नेति पूर्वतोऽनुवर्त्यम्। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म भ स म म भ स म
ऽ ऽ ऽ, ऽ।।, ।।ऽ, ऽऽऽ, ऽऽऽ, ऽ।।, ।।ऽ, ऽऽऽ
या भक्तानां, कलिदुरितोत्तप्तानां; तापच्छेदं, जलधरमाला नव्या।
भव्याकारा, दिनकरपुत्रीकूले; केलीलोला, हरितनुरव्यात् सा॥ ६४॥

---

१ 'अब्ध्यङ्गैः स्याजलधरमाला म्भौ स्मौ' इति पाठान्तरम्। अस्यैव पिङ्गलसूत्रे 'कान्तोत्पीडा' नाम। इदं च तत्रत्यं लक्षणम्—'कान्तोत्पीडा म्भौ स्मौ' इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०— जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से मगण, भगण, सगण और मगण हों तथा चार और आठ वर्णों पर यति हो, उसे 'जलधरमाला' छन्द कहते हैं। इसी का नाम पिङ्गल ने 'कान्तोत्पीडा' कहा है ॥६५॥

[1]नवमालिका (न, ज, भ, य) ८,४—

न ज भ य

। । ।, । ऽ ।, ऽ । ।, । ऽ ऽ

इह नवमालिका नजभयैः स्यात् ॥ ६५ ॥

सं० टी०– अथ जगत्याः (६४४) तमं भेदं नवमालिकानामकं लक्षयति—इहेति। इह–अस्मिन् छन्दःशास्त्रे, नजभयैः–नगण–जगण–भगण–यगणैः, यस्य प्रतिचरणं रचितं भवेदित्यर्थः, तद् वृत्तं 'नवमालिका' नाम कथ्यते। यतिस्तु पूर्ववत् चतुर्भिरष्टभिश्च। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न ज भ य न ज भ य

। । ।, । ऽ ।, । । ।, ऽ ऽ । । ।, । ऽ ।, ऽ ।, ऽ । ।, । ऽ ऽ

धवलयशोंशुकेन परिवीता, सकलजनानुरागघुसृणाक्ता।
दृढगुणबद्धकीर्तिकुसुमौघै-स्तव नवमालिनीव नृपलक्ष्मीः ॥ ६५ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से नगण, जगण, भगण और यगण हों, उसे 'नवमालिका' छन्द कहते हैं। यति चार और आठ वर्णों पर होती है ॥ ६५ ॥

प्रभा (न, न, र, र) ७, ५

न न र र

। । ।, । । ।, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ

स्वरशरविरतिर्ननौ र प्रभा ॥ ६६ ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१२१६) तमं भेदं प्रभानामकं लक्षयति—स्वरशरेति। इयं प्रभा पूर्वप्रदर्शिता प्रमुदितवदनेति न व्याख्यापेक्षा।

---

१ 'नवमालिनी' इति नामान्तरम्। 'नवमालिनी न्जौ भयौ' इति पिङ्गलसूत्रम्। 'इह नवमालिनी नजपदौ भ्यौ' इति पाठान्तरम्। अर्थस्तु सम एव।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इयमेव पिङ्गले 'चञ्चलाक्षिका' उक्ता। छन्दोमञ्जर्यां च 'मन्दाकिनी' इति नाम्ना निरूपिता ॥ ६६ ॥

हिं० टी०—दो नगण और दो रगण जिसके प्रति चरण में हों, उसे 'प्रभा' कहते हैं। यति सात और पांच वर्णों पर होती है। इसी को पहले 'प्रमुदितवदना' नाम से कहा गया है ॥ ६६ ॥

मालती (न, ज, ज, र) ५, ७

न ज ज र

।।।, ।ऽ।,। ऽ।,ऽ ।ऽ

भवति नजावथ मालती जरौ ॥ ६७ ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (१३६२) तमं भेदं मालतीनामकं लक्षयति—भवतीति। अथेति यद्यर्थे यदि प्रतिचरणं नजौ–नगणजगणौ, जरौ–जगणरगणौ च, तद् वृत्तं 'मालती' इति नाम कथ्यते। पञ्चभिः सप्तभिश्चेह यतिः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

न ज ज र न ज ज र

।।।,।ऽ ।,। ऽ।,ऽ।ऽ ।।।,।ऽ ।,।ऽ।ऽ।ऽ

इह कलया, च्युत ! केलिकानने, मधुरससौ–रभसारलोलुपः।

कुसुमकृतस्मितचारुविभ्रमा–मलिरपि चुम्बति मालतीं मुहुः ॥ ६७ ॥

हिं० टी० जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से नगण, दो जगण और एक रगण हो, उसे 'मालती' छन्द कहते हैं। इसके पांच और सात वर्णों पर यति होती है ॥ ६७ ॥

[1]अभिनवतामरसम् (न, ज, ज, य)

---

१ 'इति वद तामरसं नजजाद्यः' इति पाठान्तरम्। 'तामरसम्' इत्यप्यस्यैव संज्ञा। इह नारायणीसेतुटीकायामन्यान्यपि छन्दांसि निरूपितानि। तानि यथा—'नयुगरयुगयुक्ता गौरी मता' 'पञ्चमुनिम्भौं सात्संयुता ललना' 'ललितमभिहितं नौ म्रौ नामतः' 'द्रुतपदं नभजयैः कलितं स्यात्' इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न ज ज य

। । ।, । ऽ ।, । ऽ ।, । ऽ ऽ

अभिनवतामरसं नजजाद्यः ॥ ९८ ॥

सं० टी०—अथ जगत्याः (८८७) तमं भेदमभिनवतामरसनमकं लक्षयति—अभिनवेति । यस्य प्रतिचरणं नजजाद्-नगणजगणद्वयात्, अनन्तरमिति शेषः, यः-यगणः स्यात्, तद्वृत्तम् 'अभिनवतामरसम्' इति नाम कथ्यते । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

न ज ज य न ज ज य

। । । । ऽ ।,। ऽ,। । ऽ ऽ, । । ।, । ऽ । ।, ऽ ।, । ऽ ऽ

स्फुटसुषमामकरन्दमनोज्ञं व्रजललनानयनालि-निपीतम् ।

तव मुखतामरसं मुरशत्रो ! हृदय-तडाग-विकासि ममास्तु ॥

अत्र पादान्ते यतिनियमः ॥ ९८ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से नगण, दो जगण और एक यगण हो, उसे 'अभिनवतामरस' छन्द कहते हैं । इसके पादान्त में यति होती है । इसको 'तामरस' भी कहते हैं ॥ ९८ ॥

अथ अतिजगती (१३, ८१९२)

क्षमा (न, न, त, त, गु) ७,६—

न न त त गु

। । ।,। । ।, ऽ ऽ ।,ऽ ऽ ।,ऽ

तुरगरसयतिनौं ततौ गः क्षमा ॥ ९९ ॥

सं० टी०—अथातिजगत्याः (२३९८) तमं भेदं क्षमानामकं लक्षयति—तुरगेति । यस्य प्रतिचरणं नौ-नगणद्वयम्, ततौ-तोत्तरस्तः इत्येकवचनान्तः पाठः समुचितः, तगणद्वयमित्यर्थः, गः-गुः, भवेदिति शेषः, तुरगैः-सप्तभिः, रसैः-षड्भिः, च यतिर्यत्र सा, 'क्षमा' इति नाम तद् वृत्तं भवतीत्यर्थः । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न न त त गु न न त त गु

। । ।,। । ।,ऽऽ।, ऽऽ।, ऽ । । ।,। । ।,ऽऽ।,ऽऽ ।,ऽ

शरदमृतरुजश्चन्द्रिकाक्षालिते दिनकरतनयातीरदेशे हरिः।
विहरति रभसाद्वल्लभीभिः समं, त्रिदिवयुवतिभिः कोऽपि देवो यथा॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से दो नगण, दो तगण और एक गुरु हो, तथा सातवें और छठे वर्णों पर यति हो उसे 'क्षमा' छन्द कहते हैं। इसका नाम 'चन्द्रिका' भी है॥ ६९॥

प्रहर्षिणी (म, न, ज, र, गु)

म न ज र गु

ऽ ऽ ऽ, । । ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ, ऽ

म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्॥ ७०॥

सं० टी०—अथातिजगत्याः (१४०१) तमं भेदं प्रहर्षिणीनामकं लक्षयति—म्नौ इति। यस्य प्रतिचरणं, म्नौ—मगणनगणौ ज्रौ—जगणरगणौ, गः—गुरुश्च स्यात्, त्रिभिः, दशभिश्च यतिः, तद् वृत्तं 'प्रहर्षिणी' इति कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा सर्वज्ञात्ममुनेः—

म न ज र गु म न ज र गु

ऽऽऽ, । । ।,। ऽ।,ऽ।ऽऽ, ऽऽऽ, । । ।,।ऽ।ऽ,।ऽ,ऽ

विद्वांसो यदि मम दोषमुद्गिरेयु र्यद्वा ते गुणगणमेव कीर्तयेयुः।
तत्तुल्यं, बत मनुते मनो मदीयं उत्कृष्टं यदि पुनरेवमाह मन्दः॥ ७०॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से मगण, नगण, जगण, रगण और एक गुरु हो, तथा तीन और दश वर्णों पर यति हो, उसे 'प्रहर्षिणी' छन्द कहते हैं॥ ७०॥

[1]अतिरुचिरा (ज, भ, स, ज गु)

ज भ स ज गु

। ऽ ।,ऽ । ।,। । ऽ, । ऽ ।, ऽ

चतुर्ग्रहैरतिरुचिरा जभस्जगाः॥ ७१॥

---

१ 'चतुर्ग्रहैरिति रुचिरा जभौ स्जगाः' इति सेतुटीकासमाहृतः पाठः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथातिजगत्याः (२८०६) तमं भेदमतिरुचिरानामकं लक्षयति—चतुर्ग्रहैरिति। यस्य प्रतिपादे जभस्जगाः—जगण—भगण—सगण—जगणाः, एको गुरुश्च, तद् वृत्तम् 'अतिरुचिरा' नाम कथ्यते इत्यर्थः। चतुर्ग्रहैः—चतुर्भिः, नवभिश्च, यतिरिति शेषः। उदाहरणान्तरं यथा भट्टौ—

अभून्नृपो विबुधसखः परन्तपः, श्रुतान्वयो दशरथ इत्युदाहृतः।
गुणैर्वरं, भुवनहितच्छलेन यं, सनातनः पितरमुपागतः स्वयम् ॥ ७१ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से जगण, भगण, सगण, जगण और गुरु हो, उसे 'अतिरुचिरा' छन्द कहते हैं। इसके चार और नौ वर्णों पर यति होती है ॥ ७१ ॥

मत्तमयूरम् (म, त, य, स, गु) ४, ९—

म त य स गु
ऽऽऽ, ऽऽ।, ।ऽऽ, ।।ऽ, ऽ
वेदै रन्ध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम् ॥ ७२ ॥

सं० टी०—अथातिजगत्याः (१६६३) तमं भेदं मत्तमयूरनामकं लक्षयति—वेदैरिति। वेदैः—चतुर्भिः, रन्ध्रैः—नवभिश्च, यतिर्यत्र, तथा म्तौ—मगणतगणौ, यसगाः—यगणसगणौ गुरुश्च यस्य प्रतिचरणं भवेत्, तद् वृत्तं 'मत्तमयूरम्' नाम कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

म त य स गु म त य स गु
ऽऽऽ, ऽऽ।, ।ऽऽ, ।।ऽ, ऽ ऽऽऽ, ऽऽ।, ।ऽऽ।, ।ऽ, ऽ
व्यूढोरस्कः सिंहसमानाततमध्यः, पीनस्कन्धो मांसलहस्तायतबाहुः।
कम्बुग्रीवः स्निग्धशरीरस्तनुलोमा, भुङ्क्ते राज्यं मत्तमयूराक्षतिनेत्रः ॥७२॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से मगण, तगण, यगण, सगण और एक गुरु हो तथा चार और नौ वर्णों पर यति हो, उसे 'मत्तमयूर' छन्द कहते हैं ॥ ७२ ॥

क्वचिच्च 'चतुर्ग्रहैरिह रुचिरा ज्भौ सरौ गः' इति पाठः। अनयोः पाठयोश्छन्दो नाम 'रुचिरा' इति। इह धृतः पाठो नारायणीटीकानुसारी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मञ्जुभाषिणी (स, ज, स, ज, गु) ५,८

स ज स ज गु

।।ऽ, ।ऽ ।, ।।ऽ, ।ऽ ।, ऽ

सजसा जगौ भवति मञ्जुभाषिणी ॥ ७३ ॥

सं० टी०—अथातिजगत्याः (२८९६) तमं भेदं मञ्जुभाषिणीनामकं लक्षयति—**सजसा** इति । सजसा जगौ—सगणो जगणः, पुनः सगणो जगणः, एको गुरुश्च यस्य प्रतिचरणं स्यात्, तद् वृत्तम्—'मञ्जुभाषिणी' इत्युच्यते । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

स ज स ज गु स ज स ज गु

।।ऽ, ।ऽ ।, ।।ऽ, ।ऽ ।, ऽ ।।ऽ, ।ऽ ।, ।।ऽ, ।ऽ ।, ऽ

अमृतोर्मिशीतलकरेण लालयन्, तनुकान्तिरोचितविलोचनो हरे !
नियतं कलानिधिरसीति वल्लवी, मुदमच्युते व्यधित मञ्जुभाषिणी ॥

पादान्ते यतिरिति केचित् । किन्तु पञ्चभिरष्टभिश्च यतेरनुभूयमानतया संप्रदायानुकूलतया च पञ्चभिरष्टभिरेव यतिः ॥ ७३ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से सगण, जगण, सगण और जगण तथा एक गुरु हो, उसे 'मञ्जुभाषिणी' छन्द कहते हैं।

इसके पांच और आठ वर्णों पर यति होती है । किसी का मत है कि यति पादान्त में होती है, पर यह ठीक नहीं—क्योंकि पांचवें वर्ण पर यति स्पष्ट प्रतीत होती है । इस छन्द की रचना में अत्यन्त माधुर्य रहता है । अतः इसको मञ्जुभाषिणी कहा है ॥ ७३ ॥

चन्द्रिका (न, न, त, त, गु) ७, ६

न न त त गु

।।।, ।।।, ऽऽ ।, ऽ ऽ।, ऽ

नततततगुरुभिश्चन्द्रिकाश्वर्तुभिः ॥ ७४ ॥

सं० टी०—पूर्वोक्ता क्षमामेव चन्द्रिकेति नामान्तरेण लक्षयति—**ननततेति** । यस्य प्रतिचरणं नगणद्वयं तगणद्वयं गुरुश्चैकः स्यात् । यतिश्च सप्तभिः ऋतुभिः अश्वैः—षड्भिश्च, तद् वृत्तं 'चन्द्रिका' नाम ॥ ७४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से दो तगण और एक गुरु हो उसे 'चन्द्रिका' कहते हैं। सातवें और छठे वर्ण यति पर होती है। पूर्वोक्त क्षमा को ही 'चन्द्रिका' नाम से कहा गया है ॥ ७४ ॥

अथ शक्वरी (१४, १६, ३८४)

असम्बाधा (म, त, न, स, गु, गु,) ५, ९—

म त न स गु गु

ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ।,। । ।, । । ऽ,ऽ ऽ

म्तौ न्सौ गावक्षग्रहविरतिरसम्बाधा ॥ ७५ ॥

सं० टी०—अथ शक्वर्याः (२०१७) तमं भेदमसम्बाधानामकं लक्षयति—म्तौ इति। यस्य प्रतिचरणं म्तौ–मगणतगणौ, न्सौ–नगणसगणौ, गौ–गुरुद्वयम्, च, अक्षग्रहैः–अक्षैः–पञ्चभिः, ग्रहैः–नवभिश्च, विरतिर्यतिः, तद् वृत्तम् 'असंम्बाधा' इत्युच्यते। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

म त न स गु गु म त न स गु गु

ऽ ऽ ऽ,ऽ ऽ ।,। । ।,। । ऽ, ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ,ऽ ऽ ।,। । ।,। । ऽ,ऽ ऽ

भङ्क्त्वा दुर्गाणि द्रुमवनमखिलं छित्त्वा, हत्वा तत्सैन्यं करितुरगबलं हृत्वा।
येनासम्बाधा स्थितिरजनि विपक्षाणां, सर्वोर्वीनाथः स जयति नृपतिर्मुञ्जः ॥७५॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से मगण, तगण, नगण, सगण और दो गुरु हों, उसे 'असम्बाधा' कहते हैं। यति पांच और नौ वर्णों पर होती है ॥ ७५ ॥

अपराजिता (न, न, र, स, ल, गु) ७, ७

न न र स लगु

। । ।, । । ।,ऽ । ऽ, । । ऽ, । ऽ

ननरसलघुगैः स्वरैरपराजिता ॥ ७६ ॥

सं० टी०—अथ शक्वर्याः (५०८२) तमं भेदमपराजितानामकं लक्षयति—ननेति। यस्य छन्दसो, रचना, ननरसलघुगैः–नगणद्वय–रगण–सगण, लघु–गुरुभिश्च स्यात्, यतिश्च यत्र स्वरैः–स्वराश्च स्वराश्चेत्येकशेषः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सप्तभिः सप्तभिरित्यर्थः, स्यात्, तद् 'अपराजिता' इति नाम कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न न र स लगु न न र स लगु
।।।,।।।,ऽ।ऽ,।।ऽ, ।ऽ ।।।,।।।,ऽ ।ऽ,।।ऽ,।ऽ
फणिपतिवलयं जटामुकुटोज्ज्वलं मनसिजमथनं त्रिशूलविभूषितम्।
स्मरसि यदि सखे! शिवं शशिशेखरं, भवति तव तनुः परैरपराजिता ॥७६॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से दो नगण, एक रगण, एक सगण, एक लघु और एक गुरु हो तथा सात सात वर्णों पर यति हो, उसे 'अपराजिता' छन्द कहते हैं ॥ ७६ ॥

[1]प्रहरणकलिता (न, न, भ, न, ल, गु) ७, ७
न न भ न लगु
।।।,।।।,ऽ।।,।।।, ।ऽ

ननभनलघुगैः प्रहरणकलिता ॥ ७७ ॥

सं० टी०—अथ शक्वर्याः (८१२८) तमं भेदं प्रहरणकलितानामकं लक्षयति—ननभेति। यस्य रचना ननभनलघुगैः–नगणद्वय–भगण–नगण, लघु–गुरुमिश्र स्यात्, तद् वृत्तं 'प्रहरणकलिता' इत्युच्यते। यतिः पूर्ववत्। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न न भ न लगु न न भ न लगु
।।।,।।।,ऽ।।,।।।,।ऽ ।।।,।।।,ऽ।।,।।।,।ऽ
सुरमुनिमनुजैरुपचितचरणां, रिपुभयचकितत्रिभुवनशरणाम्।
प्रणमत महिषासुरवधकुपितां, प्रहरणकलितां पशुपतिदयिताम् ॥७७॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से दो नगण, एक भगण, एक नगण, एक लघु और एक गुरु हो, उसे 'प्रहरणकलिता' कहते हैं। यति सात सात वर्णों पर होती है ॥७७॥

१. 'प्रहरणकलिका' इति क्वचिन्नाम। 'ननभनलगिति प्रहरणकलिका' इति च लक्षणम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[1]वसन्ततिलका (त, भ, ज, ज, गु, गु)—

त भ ज ज गुगु

ऽ ऽ । ऽ । ।, । ऽ ।, । ऽ ।, ऽ ऽ

उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः ॥ ७८ ॥

सं० टी०— अथ शक्वर्याः (२९३३) तमं भेदं वसन्ततिलकानामकं लक्षयति—उक्तेति। यस्य प्रतिचरणं तभजाः—तगण—भगण—जगणाः—जगौ—जगणौ गुरुश्च, गः—गुरुः, तद् वृत्तं 'वसन्ततिलका' इति, उक्ता—कथिता, पूर्वाचार्यैरिति शेषः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

त भ ज ज गु गु त भ ज ज गुगु

ऽ ऽ ।,ऽ । ।,। ऽ ।,। ऽ ।,ऽ ऽ ऽ ऽ ।,ऽ । ।, । ऽ ।,। ऽ ।, ऽ ऽ

फुल्लं वसन्ततिलकं तिलकं वनाल्याः, लीलापरं पिककुलं कलमत्र रौति।

वात्येष पुष्पसुरभिर्मलयाद्रिवातो, यातो हरिः स मधुरां विधिना हताः स्मः॥

यथा वा—उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः, दैवं प्रधानमिति कापुरुषा वदन्ति।
दैवं विहाय कुरु पौरुषमात्मशक्त्या यत्ने कृते न यदि सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः॥

अत्र पादान्ते[2] यतिः॥ ७८॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में तगण, भगण, दो जगण, दो गुरु हों, उसे 'वसन्ततिलका' कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है॥ ७८॥

वसन्ततिलकाया नामान्तराणि—

सिंहोन्नतेयमुदिता मुनिकाश्यपेन।

उद्धर्षिणीति गदिता मुनिसैतवेन।

---

१ 'ज्ञेयं वसन्ततिलकं तभजा जगौ गः' इति छन्दोमञ्जर्युक्ते लक्षणेऽस्य 'वसन्ततिलकम्' इति नाम।

२ श्रुतबोधे तु 'अष्टाभिरिन्दुवदने विरतिश्च षड्भिः' इति अष्टभिः षड्भिश्च यतिरुक्ता। पादान्ते यतिरिति वृत्तिकारमतम्। उभयथा यतेरनुभूयमानतयाष्टभिर्यतौ कामचार इति बोध्यम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रामेण सेयमुदिता मधुमाधवीति ॥ ७९ ॥

सं० टी०—वसन्ततिलकाया मतभेदेन नामान्तराण्याह—सिंहोन्नतेति । अस्यैव नाम काश्यपमते 'सिंहोन्नता', सैतवमते 'उद्धर्षिणी', राममते 'मधुमाधवी' इति । शिष्टं स्पष्टम् [1] ॥

हिं० टी०—इस वसन्ततिलका को ही काश्यपमुनि 'सिंहोन्नता' सैतवमुनि 'उद्धर्षिणी' और राम 'मधुमाधवी' कहते हैं ॥ ७९ ॥

अथ अतिशक्वरी (१५, ३२७६८) ।

शशिकला (१४ ल, १ गु) ७,८

१४ ल गु

। । । । । । । । । । । । । ।, ऽ

द्विहतहयलघुरथ गिति शशिकला ॥ ८० ॥

सं० टी०—अथातिशक्वर्याः (१६३८४) तमं भेदं शशिकलानामकं लक्षयति—द्विहतेति । द्विहताः—द्विगुणिताः, हयाः—सप्त, चतुर्दशेत्यर्थः, लघवो यत्र सा, अथ—चतुर्दशलघ्वनन्तरं ग्—गुरुः, इति इत्येवं प्रकारेण रचिता 'शशिकला' भवति । सप्तभिरष्टभिश्च यतिः । लाघवार्थं गणप्रक्रिया परित्यक्ता । चतुर्भिर्नगणैरेकेन सगणेन 'शशिकला' भवतीति वक्तव्यमासीत् उदाहरणान्तरं यथा—

१४ ल गु १४ गु

। । । । । । । । । । । । । ।, ऽ । । । । । । । । । । । । । ।, ऽ

मलयजतिलकसमुदितशशिकला, व्रजयुवतिलसदलिकगगनगता ।

सरसिजनयनहृदयसलिलनिधिं व्यतनुत विततरभसपरितरलम् ॥ ८० ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में १४ लघु लौर एक गुरु हो उसे 'शशिकला' छन्द कहते हैं । इसके सात और आठ वर्णों पर यति होती है ॥ ८० ॥

---

१ अत्र नारायणीसेतुटीकयोः 'इन्दुवदना भजसनैः सगुरुग्मैः' इति 'द्विःसप्तच्छिदलोला म्सौ म्मौ गौ चरणे चेत्' इति छन्दोद्वयमधिकं निरूपितम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्रग्—६, ६

स्रगिति भवति, रसनवकयतिरियम् ॥ ८१ ॥

सं० टी०—यतिभेदेन शशिकलाया नामान्तरमाह—स्रगिति। रसनवकयतिः—रसैः-षड्भिः, नवभिश्च यतिर्यत्र, सा, इयम्-शशिकलैव स्रगिति भवति। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

अयि सहचरि, रुचिरतरगुणमयी; म्रदिमवसतिरनपगतपरिमला।
स्रगिव निवस, विलसदनुपमरसा, सुमुखि ! मुदितदनुजदलहृदये ॥ ८१ ॥

हिं० टी०—यदि शशिकला में ६ और ६ वर्णों पर यति हो तो उसे 'स्रग्' छन्द कहते हैं ॥ ८१ ॥

मणिगुणनिकरः—८, ७

वसुहययतिरिह मणिगुणनिकरः ॥ ८२ ॥

सं० टी०—शशिकलाया एव यतिभेदेन संज्ञान्तरमाह—वसुहयेति। इह—अस्यां शशिकलायाम्, वसुभिः-अष्टभिः, हयैः-सप्तभिश्च, चेद् यतिः स्यात्तर्हि 'मणिगुणनिकर' इति नामकं छन्दो भवति। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

नरकरिपुरवतु, निखिलसुरगति-रमितमहिमभरसरजनिवसतिः।
अनवधिमणिगुणनिकरपरिचितः, सरिदधिपतिरिव, धृततनुविभवः ॥८२॥

हिं० टी०—यदि शशिकला के आठ और सात वर्णों पर यति हो तो उसे 'मणिगुणनिकर' छन्द कहते हैं ॥ ८२ ॥

[1]मालिनी (न, न, म, य, य) ८, ७

न न म य य
। । ।, । । ।, ऽऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ

ननमयययुतेयं, मालिनी भोगिलोकैः ॥ ८३ ॥

सं० टी०—अथातिशक्वर्याः (४६७२) तमं भेदं मालिनीनामकं लक्षयति—ननमयेति। ननमयययुता-नगणद्वयेन, मगणेन, यगणद्वयेन च युता,

१ 'म्रा बाणाः स्युर्यस्यां सा कामक्रीडा संज्ञातव्या' इत्यपि क्वचिल्लक्षितम्, सेतौ तु नेदम्। नारायणीटीकायामपि विशेषरूपेण न लक्षितम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भोगिभिः-अष्टभिः, लोकैः-सप्तभिश्च छिन्नेति शेषः, यतिमतीत्यर्थः, 'मालिनी' इति छन्दो भवति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

अतिविपुलललाटं, पीवरोरःकपाटं; सुघटितदशनोष्ठं व्याघ्रतुल्य-प्रकोष्ठम्।
पुरुषमशनिलेखा-लक्षणं वीरलक्ष्मी-रतिसुरभियशोभिर्मालिनी वाभ्युपैति॥

यथा वा—अतुलितबलधामं, स्वर्णशैलाभदेहं, दनुजवनकृशानुं, ज्ञानिनामग्रगण्यम्,
सकलगुणनिधानं, वानराणामधीशं, रघुपतिवरदूतं वाततातं नमामि॥८४

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से दो नगण, एक मगण और दो यगण हों, उसे 'मालिनी' छन्द कहते हैं। यति आठ और सात वर्णों पर होती है॥ ८४॥

[1]प्रभद्रकम् (न, ज, भ, ज, र) ७, ८

न ज भ ज र

।।।,।ऽ।,ऽ।।,।ऽ।,ऽ।ऽ

भवति नजौ भजौ रसहितौ प्रभद्रकम्॥ ८५॥

सं० टी०—अथातिशक्वर्याः (११६८४) तमं भेदं प्रभद्रकनामकं लक्षयति—भवतीति। यत्र प्रतिचरणं नजौ—नगणजगणौ, भजौ—भगणजगणौ, रसहितौ—रगणयुक्तौ, तद् वृत्तं 'प्रभद्रकं' नाम भवति। उदाहरणान्तरं यथा साहित्याचार्यखिस्तेनारायणशास्त्रिणाम्—

न ज भ ज र न ज भ ज

।।।,।ऽ।,ऽ।।,।ऽ।,ऽ।ऽ, ।।।,।ऽ।ऽ।।,।ऽ।,ऽ।ऽ

भज भज शङ्करं गिरिजया समन्वितं, त्यज भवबन्धनं विरसतावसानकम्।
उपनिषदां मतं मनसि धेहि सन्ततं, गुरुकृपया सदा भवतु ते प्रभद्रकम्॥८५॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से नगण, जगण, भगण, जगण और रगण हो, उसे 'प्रभद्रक' छन्द कहते हैं। यति सात और आठ वर्णों पर होती है॥ ८५॥

[2]एला (स, ज, न, न, य) ५, १०

---

१ 'प्रभद्रिका' इति नामान्तरम्।

२ 'सजना नयौ शरदशकविरतिरेला' इति पाठान्तरम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स ज न न य

। । ऽ, । ऽ ।, । । ।, । । ।, । । ऽ

सजना नयौ शरदृश-यति-रियमेला ॥ ८६ ॥

सं० टी०—अथातिशक्कर्याः (८१७२) तमं भेदमेलानामकं लक्षयति—सजनेति । यत्र प्रतिचरणं सजनाः—सगण–जगण–नगणाः, नयौ नगणयगणौ, च, शरैः–पञ्चभिः,दशभिश्च यतिः इयम् , 'एला' इति कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा पञ्चिकायाम्—

स ज न न य स ज न न य

। । ऽ, । ऽ ।, । । ।, । । ।, । ऽ ऽ, । । ऽ, । ऽ ।, । । ।, । । ।, । ऽ ऽ

यदि कोपिनी प्रभवसि मदुपरि कान्ते, दृढबन्धनं घटय भुजलतिकया मे ।
सहसा कुरु प्रखरनयनशरघातं, रदनच्छदावथ दश सुमुखि ! यथेच्छम् ॥८६॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से सगण, जगण, दो नगण यगण हों, उसे 'एला' छन्द कहते हैं। यति पाँच दश वर्णों पर होती है ॥ ८६ ॥

चन्द्रलेखा (म, र, म, य, य,) ७,८

म र म य य

ऽ ऽ ऽ, ऽ । ऽ, ऽ ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ

म्रौ म्यौ यान्तौ भवेतां सप्ताष्टकैश्चन्द्रलेखा ॥ ८७ ॥

सं० टी०—अथातिशक्कर्याः (४६२५) तमं भेदं चन्द्रलेखानामकं लक्षयति—म्रौ इति । यस्य प्रतिचरणं म्रौ–मगणरगणौ, म्यौ मगणयगणौ, यान्तौ–अन्ते यगणयुक्तौ भवेताम् , सप्ताष्टकैः–सप्तभिः अष्टभिश्च, यतिरिति शेषः, तद् वृत्तम् , 'चन्द्रलेखा' नाम भवति। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म र म य य

ऽ ऽ ऽ, ऽ । ऽ, ऽ ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ

विच्छेदे ते मुरारे ! पाण्डुप्रकाशा कृशाङ्गी
म्लानच्छायं दूकुलं सुभ्राजते बिभ्रती सा ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राधाम्भोदस्य गर्भे लीना यथा चन्द्रलेखा,
किं चार्ता त्वां स्मरन्ती धत्ते ध्रुवं जीवयोगम् ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से मगण, रगण, मगण और दो यगण हों, उसे 'चन्द्रलेखा' छन्द कहते हैं। यति सात और आठ वर्णों पर होती है ॥ ८७ ॥

अथ अष्टिः (१६. ६५५३६)।

ऋषभगजविलसितम् (भ, र, न, न, न, ग) ७, ९

भ र न न न गु
ऽ ।।, ऽ । ऽ, ।।।, ।।।, ।। ।, ऽ

अत्रिनगैः स्वरात्खमृषभगजविलसितम् ॥ ८८ ॥

सं० टी०—अथाष्ट्याः (३२७२७) तमं भेदमृषभगजविलसितनामकं लक्षयति—भ्रत्रिनगैरिति। यत्र प्रतिचरणं भ्रत्रिनगैः-भ्रौ च त्रयो नाश्च गुरुश्चेति विग्रहः, भगण–रगण–नगणत्रय–गुरुभिश्चेत्यर्थः। रचितं चेत्, सप्तमात् परं खम्–यतिश्च भवेत्, तदा 'ऋषभगजविलसितम्' नाम कथ्यते। सप्तसु यतिः, पादान्ते यतिर्नोक्ता सामर्थ्याद् बोध्या अथवा खम्—छिद्रम् नवेत्यर्थः करणीयाः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

भ र न न न गु भ र न न न गु
ऽ ।।,ऽ। ऽ, । ।।, ।।।,। ।।,ऽ, ऽ।।,ऽ । ऽ,।।।,।।।,।।।,ऽ
यो हारैरुच्चखान खर–तरनख–शिखरै–र्दुर्जयदैत्यसिंहसुविकटहृदयतटम्।
किं न्विह चित्रमेतदखिलमपहृतवः कंसनिदेशहृप्यदृषभगजविलसितम् ॥८८॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से भगण, रगण, तीन नगण और अन्त में एक गुरु हो, उसे 'ऋषभगजविलसित' छन्द कहते हैं। यति सात और नौ वर्णों पर होती है ॥ ८८ ॥

वाणिनी (न, ज, भ, ज, र, गु)—

न ज भ ज र गु
।।।, ।ऽ।, ऽ ।।, । ऽ।, ऽ। ऽ, ऽ

नजभजरैः यदा भवति वाणिनी गयुक्तैः ॥ ८९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथाष्टयाः (१११८४) तमं भेदं वाणिनीनामकं लक्षयति—नजभजेति। यदा नजभजरैः-नगण-जगण-भगण-जगण-रगणैः, गयुक्तैः-गुरुसहितैः, पादरचना भवेत् तदा 'वाणिनी' इति नाम भवति। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

न ज भ ज र गु न ज भ ज र गु

।।।,।ऽ।,ऽ।।,।ऽ।,ऽ।ऽ,ऽ।।।,।ऽ।,ऽ।।,।ऽ।,ऽ।ऽ,ऽ

स्फुरतु ममाननेऽद्य ननु वाणि नीतिरम्यं तव चरणप्रसादपरिपाकतः कवित्वम्।
भवजलराशिपारकरणक्षमं मुकुन्दं सततमहं स्तवैः स्वरचितैः स्तवानि नित्यम्॥

पादान्ते यतिः॥ ८९॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से नगण, जगण, भगण, जगण रगण और गुरु हो, उसे 'वाणिनी' छन्द कहते हैं। यति पादान्त में होती है॥ ८९॥

[1]पञ्चचामरम् (ज, र, ज, र, ज, गु)—

ज र ज र ज गु

।ऽ।,ऽ।ऽ,।ऽ।,ऽ।ऽ,।ऽ।,ऽ

जरौ जरौ जगाविदं वदन्ति पञ्चचामरम्॥९०॥

सं० टी०—अथाष्टयाः (२१८४६) तमं भेदं पञ्चचामरनामकं लक्षयति—जराविति। यत्र प्रतिचरणे जगणरगणौ द्विः, पुनश्च जगणो गुरुश्च, तदेदं पञ्चचामरं वदन्ति पूर्वाचार्याः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

ज र ज र ज गु ज र ज र ज गु

।ऽ।,ऽ।ऽ,।ऽ।,ऽ।ऽ,।ऽ।,ऽ।ऽ,।ऽ।,।ऽ।,ऽ।ऽ,ऽ।ऽ,ऽ।ऽ,।ऽ

सुरद्रुमूलमण्डपे विचित्ररत्ननिर्मिते, लसद्वितानभूषिते सलीलविभ्रमालसम्।
सुराङ्गनाभवल्लवीकरप्रपञ्चचामर-स्फुरत्समीरवीजितं सदाच्युतं भजामि तम्॥

---

१ इदं छन्दो नारायणभट्टेन न विशेषरूपेण निरूपितम्। उल्लेखमात्र एव कृतः। सेतुटीकायामस्य लक्षणन्तु—'लघुर्गुरुर्निरन्तरं यदा स पञ्चचामरम्' इति। प्रमाणिका द्विगुणितैव पञ्चचामरम्। अत एव प्रमाणिकापदद्वयं वदन्ति पञ्चचामरम्' इति क्वचिल्लक्षणम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पादान्ते यतिः। केचित्तु द्वाभ्यां द्वाभ्यां यतिमाहुः ॥ ६० ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से जगण, रगण, जगण रगण, जगण और एक गुरु हो उसे 'पञ्चचामर' छन्द कहते हैं। प्रमाणिका के दूने से पञ्चचामर बनता है। इसके पादान्त में यति होती है। किसी का मत है कि दो-दो पर यति होती है ॥ ६० ॥

अत्यष्टिः (१७, १३१०७२)

शिखरिणी (य, म, न, स, भ, ल, गु) ६, ११

य म न स भ ल गु

।ऽऽ ऽ,ऽ ऽऽ, ।।।,।।ऽ,ऽ ।।, ।ऽ

रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी ॥ ६१ ॥

सं० टी०—अथात्यष्ट्याः (५६३३६) तमं भेदं शिखरिणीनामकं लक्षयति—रसैरिति। यस्य प्रतिचरणं यमनसभलाः—यगणमगणनगणसगण-भगणलघवः, गः—गुरुश्च भवति, तद् वृत्तं 'शिखरिणी' नाम भवति। रसैः—षड्भिः रुद्रैः—एकादशभिः, छिन्ना—यतिमती च सा भवति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

य म न स भ लगु य म न स भ लगु

।ऽ ऽ, ऽऽऽ, ।।।, ।।ऽ, ऽ।।, ।ऽ, ।ऽऽ, ऽऽऽ, ।।।, ।।ऽ, ऽ।।, ।ऽ

यशःशेषीभूते, जगति नरनाथे गुणनिधौ प्रवृत्ते वैराग्ये, विषयरसनिष्क्रान्तमनसाम् इदानीमस्माकं, घनतरुलतां निर्भरवतीं, तपस्तप्तुं चेतो, भवति गिरिमालां शिखरिणीम् ॥

यथा वा—यदा किञ्चिद्ज्ञोऽहं, द्विप इव मदान्धः समभवम्

तदा सर्वज्ञोऽस्मी, त्यभवदवलिप्तं मम मनः।

यदा किंचित् किंचिद्, बुधजनसकाशादवगतं

तदा मूर्खोऽस्मीति, ज्वर इव मदो मे व्यपगतः ॥ ६१ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, लघु और गुरु हों, उसे 'शिखरिणी' छन्द कहते हैं। इसके छः और ग्यारह वर्णों पर यति होती है ॥ ६१ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पृथ्वी (ज, स, ज, स, य, ल, गु) ८,९—

ज स ज स य लगु

।ऽ।, ।।ऽ, ।ऽ।, ।।ऽ, ।ऽऽ, ।ऽ

जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः ॥ ९ ॥

सं० टी०—अथाष्ट्याः (३८७५०) तमं भेदं पृथ्वीनामकं लक्षयति—जसाविति । यस्य पादे जसौ–जगणसगणौ, पुनरपि जगणसगणौ, भगणः, एको लघुः अन्ते च गुरुः, तद् वृत्तम् 'पृथ्वी' इति नाम । वसुभिः–अष्टभिः, ग्रहैः–नवभिश्च यतिः । यथा वोदाहरणान्तरं वृत्तौ —

ज स ज स य लगु

।ऽ।, ।।ऽ, ।ऽ।, ।।ऽ, ।ऽऽ, ।ऽ

हताः समिति शत्रव- स्त्रिभुवने प्रकीर्णं यशः ।
कृतश्च गुणिनां गृहे, निरवधिमहानुत्सवः ।
त्वया कृतपरिग्रहे, क्षितिप वीरसिंहासने ।
नितान्तनिरवग्रहा फलवती च पृथ्वी कृता ॥ ६२ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से जगण, सगण, पुनः जगण, सगण, यगण, एक लघु और अन्त में एक गुरु हो उसे 'पृथ्वी' छन्द कहते हैं। यति आठ और नौ वर्णों पर होती है ॥ ६२ ॥

वंशपत्रपतितम्[1]- **(भ, र, न, भ, न, ल, गु) १०,७—**

भ र न भ न लगु

ऽ।।, ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।।, ।।।, ।ऽ

दिङ्मुनिवंशपत्रपतितं, भरनभनलगैः ॥ ६३ ॥

सं० टी०--अथात्यष्ट्याः (६४९८३) तमं भेदं वंशपत्रपतितनामकं लक्षयति—दिङ्मुनीति । दिशो दश; मुनयः सप्त । दिशो मुनयश्चेति समाहारः छन्दोविशेषणम् । यतिस्थानत्वेन तत्संख्याकाक्षररूपता विवक्षिता । दशभिः सप्तभिश्च यतिरित्यर्थः । अथवा 'दिङ्मुनिवंशपत्रपतितम्' इत्येकमेव पदम् । दिङ्मुनिभिरिति च व्याख्येयम् । अथवा मध्यमस्य यतिपदस्य लोपः । भरन-

---

१ 'वंशपत्रपतिता' इति नामान्तरमप्युपलभ्यते ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भनलगैः—भगण, रगण, नगण, भगण, नगण, लघुगुरुभिश्च यस्य प्रतिचरणं रचितं भवेत्, तद् वृत्तं 'वंशपत्रपतितम्' इति नाम कथितम्। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

भ र न भ न लगु
ऽ।।, ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।।, ।।।, ।ऽ

अद्य कुरुष्व कर्म सुकृतं, यदि परदिवसे, मित्र !
विधेयमस्ति भवतः किमु चिरयसि तत्।
जीवितमल्पकालकलना, लघुतरतरलं, नश्यति
वंशपत्रपतितं, हिमसलिलमिव ॥ ९३ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से भगण, रगण, नगण, भगण, नगण, लघु और गुरु हों, उसे 'वंशपत्रपतित' छन्द कहते हैं। दश और सात वर्णों पर यति होती है ॥ ९३ ॥

हरिणी (न, स, म, र, स, ल, गु) ६, ४. ७—

रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ स्लौ, गो यदा हरिणी तदा ॥ ९४ ॥

सं० टी०—अथाष्ट्याः (४६११२) तमं भेदं हरिणीनामकं लक्षयति—रसयुगेति। छन्दसः प्रतिचरणं न्सौ—नगणसगणौ म्रौ—मगणरगणौ, स्लौ—सगणो लघुश्च, गः—गुरुश्च यदा, तदा 'हरिणी' इति नाम वृत्तं भवति। रसैः—षड्भिः, युगैः—चतुर्भिः, हयैः सप्तभिः, यतिरिति शेषः। उदाहरणान्तरं यथा सुवृत्ततिलके—

न स म र स लगु
।।।,।।ऽ, ऽऽऽ,ऽ ।ऽ, ।।ऽ,।ऽ

न समरसनाः काले भोगा,—श्चलं धनयौवनम्,
कुरुत सुकृतं, यावन्नेयं, तनुः प्रविशीर्यते।
किमपि कलना, कालस्येयं, प्रधावति सत्वरा,
तरुणहरिणी, सन्त्रस्तेव, प्लवप्रविसारिणी ॥९५॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से नगण, सगण, मगण, रगण, सगण, लघु और गुरु हों उसे 'हरिणी' छन्द कहते हैं। यति छः, चार और सात वर्णों पर होती है ॥ ९४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मन्दाक्रान्ता (म, भ, न, त, त, गु, गु,) ४, ६, ७

म भ न त त गु गु

ऽ ऽ ऽ, ऽ ।।, । ।।,ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ।, ऽऽ

मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैम्भौं नतौ ताद् गुरू चेत् ॥ ९५ ॥

सं० टी०—अथात्यष्टयाः (१८९२९) तमं भेदं मन्दाक्रान्तानामकं लक्षयति—मन्दाक्रान्तेति। चेत्—यदि, म्भौ—मगणभगणौ, नतौ—नगण-तगणौ तात्—तगणात्, ऊर्ध्वमिति शेषः, गुरू—गुरुद्वयम्, प्रतिचरणं स्यात्, तदा 'मन्दाक्रान्ता' इति नाम छन्दो भवति। जलधिभिः—चतुर्भिः, षड्भिः, अगैः—सप्तभिश्च यतिः। उदाहरणान्तरं यथा श्रीवैद्यनाथशास्त्रिण :—

म भ न त त गुगु

ऽ ऽ ऽ,ऽ ।।,।।।,ऽ ऽ।,ऽऽ ।, ऽ ऽ

नानाश्लेष,—प्रकरणचणा, चारुवर्णोज्ज्वलाङ्गो,
नानाभावा,—कलितरसिक,—श्रेणिकान्तान्तरङ्गा ।
मुग्धस्निग्धै,—र्मृदुमृदुपदैः, क्रीडमाना पुरस्तात्,
मन्दाक्रान्ता, भवति कविताकामिनी कौतुकाय ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से मगण, भगण, नगण दो तगण और दो गुरु हों, उसे 'मन्दाक्रान्ता' छन्द कहते हैं। यति चार, छ और सात वर्णों पर होती है ॥ ९५ ॥

[1]नर्कुटकम् (न, ज, भ, ज, ज, ल, गु) ७, १०

न ज भ ज ज लगु

।।।,। ऽ ।, ऽ । ।, । ऽ ।, । ऽ ।,। ऽ

हयदशभिर्नजौ भजजला गुरु नर्कुटकम् ॥ ९६ ॥

सं० टी०—अथात्यष्टयाः (५६२४०) तमं भेदं नर्कुटकनामकं लक्षयति हयदशभिरिति। यस्य प्रतिचरणे नजौ—नगणजगणौ, भजजलाः—भगण,

---

१ 'यदि भवतो नजौ भजजला गुरु नर्कुटकम्' इति पाठान्तरम्। अत्र यतिनियमो नोक्तः! मूलेऽत्र नारायणीसेतुटीकासमादृतः पाठः। 'नर्दटकम्' 'मर्दटकम्' इति नामान्तरे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जगण, जगण, लघवः, गुरु च स्यात्, तद् वृत्तं 'नर्कुटक' नाम। हयैः सप्तभिः, दशभिः, यतिः। उदाहरणान्तरं यथा सुवृत्ततिलके—

न ज भ ज ज लगु

।।।, ।ऽ।, ऽ ।।, ।ऽ।,।ऽ ।,। ऽ,

निजभुजजैर्विशा—लगुणविक्रमकीर्तिभरैः,
प्रविदधता सुधां,—शुधवलं भवता भुवनम्।
कथय कथं कृते—यमनुरागवती जनता,
चरितमपूर्वमे—व तव कस्य न नर्कुटकृत् ॥ ६६ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से नगण, जगण, भगण, दो जगण, लघु, गुरु हों उसे 'नर्कुटक' छन्द कहते हैं। यति सात और दश वर्णों पर होती है ॥६६॥

कोकिलकम्—७, ६, ४

मुनिगुहकार्णवैः. कृतयति वद, कोकिलकम् ॥ ६७ ॥

सं० टी०—अथ नर्कुटकस्यैव यतिभेदेन नामान्तरमाह—मुनीति। मुनयः—सप्त, गुहस्य कार्तिकेयस्य, कानि—मुखानि षट्, अर्णवाः—चत्वारः, तैः, कृतयतिः—कृता यतिर्यत्र तत् 'कोकिलकम्' इति, वद—कथय। शिष्यं प्रत्युपदेशः। यथा वा छन्दोमञ्जर्याम्—

लसदरुणेक्षणं, मधुरभाषण, मोदकरं
मधुसमयागमं, सरसकेलिभिरुल्लसितम्।
अलिललितद्युतिं, रविसुतावन, कोकिलकं
ननु कलयामि तं, सखि! सदा हृदि, नन्दसुतम् ॥ ६७ ॥

हिं० टी०—यदि नर्कुटक में सात, छ और चार वर्णों पर यति हो तो उसे 'कोकिलक' कहते हैं ॥ ६७ ॥

अथ धृतिः (१८, २६२१४४)

कुसुमितलतावेल्लिता (म, त, न, य, य, य) ५, ६ ७

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

म त न य य य
ऽ ऽऽ, ऽ ऽ ।, । । ।, ।ऽऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ

स्याद्भूतर्त्वश्वैः कुसुमितलतावेल्लिता म्तौ नयौ यौ ॥ ९८ ॥

सं० टी०—अथ धृतेः (३७८२७) तमं भेदं कुसुमितलतावेल्लिता-नामकं लक्षयति—स्यादिति। यस्य प्रतिचरणं म्तौ–मगणतगणौ, नयौ–नगणयगणौ, यौ–यगणद्वयम्। भूतानि पञ्च, ऋतवः षट्, अश्वाः सप्त, तैश्च यतिः, स्यात् तद् वृत्तं 'कुसुमितलतावेल्लिता' नाम कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

म त न य य य
ऽ ऽ ऽ, ऽऽ ।, । । ।, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ

धन्यानामेताः कुसुमितलता-वेल्लितोत्फुल्लवृक्षाः
सोत्कण्ठं कूज-त्परभृतकला–लापकोलाहलिन्यः।
मध्वादौ माद्यन्मधुकरकलोद्गीतझङ्काररम्या
ग्रामान्तस्रोतः, परिसरभुवः, प्रीतिमुत्पादयन्ति ॥ ९८ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से मगण, तगण, नगण और तीन यगण हों, उसे 'कुसुमितलतावेल्लिता' छन्द कहते हैं। यति पांच, छः तथा सात वर्णों पर होती है ॥ ९८ ॥

अथ अतिधृतिः (१९, ५२४२८८)

शार्दूलविक्रीडितम् (म, स, ज, स, त, त, गु) १२, ७

म स ज स त त गु
ऽ ऽ ऽ, । । ऽ, । ऽ ।, । । ऽ, ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ।, ऽ

सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम् ॥ ९९ ॥

सं० टी०—अथातिधृत्याः (१४९३३७) तमं भेदं शार्दूलविक्रीडितं नाम लक्षयति–सूर्याश्वैरिति। यस्य प्रतिचरणं सगुरवः–गुरुणैकेन सहिताः, मसजस्तताः मगण, सगण, जगण, सगण, तगणद्वयाश्च स्युः–सूर्यैः–द्वादशभिः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अश्वैः—सप्तभिः, यतिर्भवेत्, तद् वृत्तं 'शार्दूलविक्रीडितम्' इत्युच्यते। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म स ज स त त गु
ऽऽऽ, ।।ऽ, ।ऽ।, ।।ऽ, ।ऽ।,ऽऽ।,ऽ

गोविन्दं प्रणमोत्तमाङ्ग ! रसने ! तं घोषयाहर्निशं
पाणी ! पूजय तं मनः ! स्मर पदे ! तस्यालयं गच्छतम्।
एवञ्चेत्कुरुताखिलं मम हितं शीर्षादयस्तद् ध्रुवं
न प्रेक्षे भवतां कृते भवमहाशार्दूलविक्रीडितम् ॥

यथा वा—या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना।
या ब्रह्माच्युतशङ्करप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती निश्शेषजाड्यापहा ॥ ९९ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से मगण, सगण, जगण, सगण दो तगण और एक गुरु हो, उसे 'शार्दूलविक्रीडित' कहते हैं। यति बारह और सात वर्णों पर होती है ॥ ९९ ॥

मेघविस्फूर्जिता (य, म, न, स, र, र, गु) ६, ६ ७—

य म न स र र गु
।ऽऽ, ऽ ऽ ऽ, ।।।, ।। ऽ, ऽ।ऽ, ऽ। ऽ, ऽ

रसर्त्वश्वैर्य्मौ न्सौ, ररगुरुयुतौ, मेघविस्फूर्जिता स्यात् ॥१००॥

सं० टी०—अघातिधृत्याः (४६६८३३) तमं भेदं मेघविस्फूर्जितानामकं लक्षयति—रसेति। यस्य प्रतिचरणं य्मौ—यगणमगणौ, न्सौ—नगणसगणौ, ररगुरुयुतौ—रोत्तरो रः ररः, स च गुरुश्च ररगुरू ताभ्यां युतौ, स्याताम्, रसैः—षड्भिः, ऋतुभिः—षड्भिः, अश्वैः—सप्तभिः, यतिश्च स्यात्, तद् वृत्तं 'मेघविस्फूर्जिता' नाम कथ्यते। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

---

१ नारायणीटीकायां तु न लक्षितं विशेषत एतच्छन्दः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

य म न स र र गु
।ऽऽ, ऽऽऽ, ।।।, ।।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ

कदम्बामोदाढ्या, विपिनपवनाः केकिनः कान्तकेकाः
विनिद्राः कन्दल्यो, दिशि दिशि मुदा, दर्दुरा दृप्तनादाः ।
निशानृत्यद्विद्युद्विलसितलसन्मेघविस्फूर्जिता चेत्
प्रियः स्वाधीनोऽसौ, दनुजदलनो, राज्यमस्मात्किमन्यत् ॥ १०० ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से यगण, मगण, नगण, सगण, दो रगण और एक गुरु हो तथा छ, छ और सात वर्णों पर यति हो, उसे 'मेघविस्फूर्जिता' छन्द कहते हैं ॥ १०० ॥

अथ कृतिः (२०,१०४८५७६)

सुवदना (म, र, भ, न, य, भ, ल, गु) ७, ७, ६—

म र भ न य भ लगु
ऽऽऽ, ऽ।ऽ, ऽ।।, ।।।, ।ऽऽ, ऽ।।, ।ऽ

ज्ञेया, सप्ताश्वषड्भिर्मरभनययुता, भ्लौ गः सुवदना ॥ १०१ ॥

सं० टी०—अथ कृतेः (४६६८३३) तमं भेदं सुवदनानामकं लक्षयति—ज्ञेया इति । यस्य प्रतिचरणं मरभनयैः—मगण, रगण, भगण, नगण, यगणैः युता, अथ च भ्लौ—भगणः, लघुश्च गः—गुरुः । तथा सप्तभिः, अश्वैः—सप्तभिः, षड्भिश्च यतिर्भवेत् तद् वृत्तम् 'सुवदना' ज्ञेयम् । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म र भ न य भ लगु
ऽऽऽ, ऽ।ऽ, ऽ।।, ।।।, ।ऽऽ, ऽ।।, ।ऽ

प्रत्याहृत्येन्द्रियाणि, त्वदितरविषयान्नासाग्रनयना
त्वां ध्यायन्ती निकुञ्जे, परतरपुरुषं, हर्षोत्थपुलका ।
आनन्दाश्रुप्लुताक्षी, वसति सुवदनाः योगैकरसिका
कामार्तिं त्यक्तुकामा, ननु नरकरिपो राधा मम सखी ॥ १०१ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से मगण, रगण, भगण,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नगण, यगण, भगण, लघु और गुरु हों तथा सात, सात और छ वर्णों पर यति हो, उसे 'सुवदना' छन्द कहते हैं ॥ १०१ ॥

वृत्तम् (र, ज, र, ज, र, ज, गु, ल)—

र ज र ज र ज गुल

ऽ।ऽ, ।ऽ।, ऽ।ऽ, ।ऽ।, ऽ।ऽ, ।ऽ।, ऽ।

त्री रजौ गलौ भवेदिहेदृशेन लक्षणेन वृत्तनाम ॥ १०२ ॥

सं० टी०—अथ कृतेः (६९९०५१) तमं भेदं वृत्तनामकं लक्षयति—त्री इति। यस्य प्रतिचरणं त्रिः त्रिवारं, रजौ रगणजगणौ, गलौ—गुरुलघू च स्याताम्, इह—छन्दःशास्त्रे, ईदृशेन लक्षणेन 'वृत्तं' नाम यस्य तत् तादृशं छन्दो भवेत्। यतिः पादान्ते उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

र ज र ज र ज गुल

ऽ।ऽ, ।ऽ।, ऽ।ऽ, ।ऽ।, ऽ।ऽ, ।ऽ।, ऽ।

जन्तुमात्रदुःखकारि कर्म निर्मितं भवत्यनर्थहेतु
तेन सर्वमात्मतुल्यमीक्षमाण उत्तमं सुखं लभस्व।
विद्धि बुद्धिपूर्वकं ममोपदेशवाक्यमेतदादरेण
वृत्तमेतदुत्तमं महाकुलप्रसूतजन्मनां हिताय ॥ १०२ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में रगण और जगण तीन तीन बार आयें और अन्त में गुरु तथा लघु हो, उसे 'वृत्त' नामक छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है ॥ १०२ ॥

प्रकृतिः (२१. २०९७१५२)

स्रग्धरा (म, र, भ, न, य, य, य) ७, ७, ७

म र भ न य य य

ऽऽऽ, ऽ।ऽ, ऽ।।, ।।।, ।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ

म्रभ्नैर्यानां त्रयेण, त्रिमुनियतियुता, स्रग्धरा कीर्तितेयम् ॥ १०३ ॥

सं० टी०—अथ प्रकृत्याः (१०२९९३) तमं भेदं स्रग्धरानामकं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लक्षयति—म्रभ्नैरिति। यस्य प्रतिचरणं म्रभ्नैः—मगण, रगण, भगण, नगणैः, यानां त्रयेण—यगणत्रयेण च रचितं भवेत्, त्रिमुनियतियुता त्रिवारं मुनिभिः, सप्तभिः, यतियुता, इयम्—उक्तलक्षणा, 'स्रग्धरा' कीर्तिता—कथिता। उदाहरणान्तरं यथा सुवृत्ततिलके—

म र भ न य य य

ऽऽऽ, ऽ।ऽ, ऽ ।।, ।।।, ।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ

सारारम्भानुभाव—प्रियपरिचयया स्वर्गरङ्गाङ्गनानाम्,
लीलाकर्णावतंस—श्रियमतनुगुण—श्लेषया संश्रयन्त्या।
आभाति व्यक्तमुक्ता, विचकिललवली—वृन्दकुन्देन्दुकान्त्या
त्वत्कीर्त्या भूषितेयं, भुवनपरिवृढ!, स्रग्धरेव त्रिलोकी॥

यथा वा—येषां श्रीमद्यशोदा-सुतपदकमले, नास्ति भक्तिर्नराणां
येषामाभीरकन्या-प्रियगुणकथने, नानुरक्ता रसज्ञा।
येषां श्रीकृष्णलीला, ललितगुणरसे, सादरौ नैव कर्णौ
धिक् तान् धिक् तान् धिगेतान्, कथयति सततं, कीर्तनस्थो मृदङ्गः॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से मगण, रगण, भगण, नगण तथा तीन यगण हों और यति सात सात वर्णों पर हो, उसे 'स्रग्धरा' छन्द कहते हैं॥ १०३॥

अथाऽऽकृतिः (२२,४१६४३०४)

भद्रकम् (भ, र, न, र, न, र, न, गु) १०, १२—

भ र न र न र न गु

ऽ ।।, ऽ ।ऽ, ।।।, ऽ।ऽ।।।, ऽ। ऽ,।।।, ऽ

भ्रौ नरना रनावथ गुरुर्दिगर्कविरमं हि भद्रकमिदम्॥ १०४॥

सं० टी०—अथाकृत्याः (१६३०७११) तमं भेदं भद्रकनामकं लक्षयति—भ्रौ—इति। यस्य प्रतिचरणं भ्रौ—भगणरगणौ, नरनाः—नगण-रगणनगणाः, रनौ—रगणनगणौ, अथ—ततः, एको गुरुः दिगर्कविरमम्—दिग्भिः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दशभिः, अर्कैः—द्वादशभिश्च, विरमो यतिर्यत्र, तदिदं वृत्तं 'भद्रकम्' इति नाम भवति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

भ र न र न र न गु

ऽ।।, ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।ऽ, ।।।, ऽ

भद्रकगीतिभिः सकृदपि, स्तुवन्ति भव ये भवन्तमनघं
भक्तिभरावनम्रशिरसः, प्रणम्य तव पादयोः सुकृतिनः।
ते परमेश्वरस्य पदवी—मवाप्य सुखमाप्नुवन्ति विपुलं
मर्त्यभुवं स्पृशन्ति न पुनर्मनोहरसुराङ्गनावृताः॥

इह क्वचिन्मदिरानामकं वृत्तमपि निरूपितम्। कृतं च तल्लक्षणं यथा—

भ भ भ भ भ भ भ गु

ऽ।।,ऽ।।,ऽ।।,ऽ।।,ऽ।।,ऽ।।,ऽ।।, ऽ

सप्तभकारयुतैकगुरुर्गदितेयमुदारतरा मदिरा।

सप्तभगणैरेकगुरुसहितैश्चेत् छन्दसः प्रतिचरणं रचितं भवेत्तद् 'मदिरा' नाम भवति। उदाहृतं च छन्दोमञ्जर्याम्—

माधवमासि विकस्वरकेसरपुष्पलसन्मदिरामुदितै-
र्भृङ्गकुलैरुपगीतवने वनमालिनमालि! कलानिलयम्।
कुञ्जगृहोदरपल्लवकल्पिततल्पमनल्पमनोजरसं
तं भज माधविकामृदुनर्तनयामुनवातकृतोपगमा॥ १०४॥

हिं० टी० जिस पद्य के प्रत्येक चरण में एक भगण और उसके अनन्तर तीन बार रगण और नगण हों तथा अन्त में एक गुरु हो उसे 'भद्रक' छन्द कहते हैं। इसके दश और बारह वर्णों पर यति होती है।

इसी जाति में मदिरा छन्द भी होता है जिसके प्रत्येक चरण में सात भगण और एक गुरु होता है। बाईस वर्णों से लेकर प्रायः एक ही गण का प्रयोग जिन छन्दों में होता है उन्हें हिन्दी में सवैया कहा गया है। इनका प्रयोग हिन्दी में बहुत अधिक होता है। हिन्दी कविता के नियम के अनुसार इनमें अन्त्यानुप्रास (तुकान्तमेल) अवश्य होना चाहिये। मदिरा का लक्षण हिन्दी में यह है—'भा सत गूढ न मर्म तिन्हैं जु पिये जग मोहमयी मदिरा' छ० प्र० पृ० २००॥ १०४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ विकृतिः (२३६,८३८८६०८)

अश्वललितम् (न, ज, भ, ज, भ, ज, भ, ल गु) ११, १२

न ज भ ज भ ज भ लगु

।।।, ।ऽ।,ऽ ।।,।ऽ।,ऽ।।,।ऽ।,ऽ।।,।ऽ

यदिह नजौ भजौ भजभलगास्तदाश्वललितं हरार्कयतिमत् ॥१०५॥

सं० टी०—अथ विकृतेः (३८६१४२४) तमं भेदमश्वललितनामकं लक्षयति—यदिहेति । यत्—यदि, इह प्रतिचरणं नजौ—नगणजगणौ, भजौ—भगणजगणौ, भजभलगाः—भगणजगणभगणलघुगुरवश्च स्युः, तदा तद् 'अश्वललितम्' नाम वृत्तं भवति । हरार्कयतिमत्—हराः-एकादश, अर्काः—द्वादश, एभिर्यतिमत् , च भवेत् । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

न ज भ ज भ ज भ लगु

।।।, ।ऽ।, ऽ।।, ।ऽ।, ऽ।।, ।ऽ।, ऽ।।, ।ऽ

खरतरशौर्यपावकशिखापतङ्गनिभमग्नदसदनुजो
जलधिसुताविलासवसतिः सतां गतिरशेषमान्यमहिमा ।
भुवनहितावतारचतुरश्चराचरधरोऽवतीर्ण इह हि
क्षितिवलयेऽस्ति कंस ! शमनस्तवेति तमवोचदद्रितनया ॥ १०५ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में पहले एक नगण, उसके बाद जगण और भगण क्रम से तीन बार हों और अन्त में एक लघु तथा एक गुरु हो, यति ग्यारह और बारह पर हो उसे 'अश्वललित' छन्द कहते हैं । छन्दोमञ्जरी में इसका नाम 'अद्रितनया' कहा गया है ॥ १०५ ॥

मत्ताक्रीडा (म, म, त, न, न, न, न, ल, गु) ८, १५

म म त न न न न लगु

ऽऽऽ, ऽऽऽ, ऽऽ।, ।।।, ।।।, ।।।, ।।।, ।ऽ

मत्ताक्रीडा मौ त्नौ नौ न्लौ, गिति भवति वसुशरदशयतियुता ॥१०६॥

सं० टी०—अथ विकृत्याः (४१६४०४६) तमं भेदं मत्ताक्रीडानामकं लक्षयति—मत्ताक्रीडेति । यस्य प्रतिचरणं मौ—मगणद्वयम् त्नौ—तगणनगणौ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नौ–नगणद्वयम्, न्लौ–नगणलघू, ग्–गुरुश्च, इति–इत्येवं प्रकारेण 'मत्ता-क्रीडा' छन्दो भवति। वसुशरदशयतियुता—वसवः अष्टौ, शराः पञ्च, दश, तैर्यतियुक्ता। शरदशेत्यनेन [1]पञ्चदशेति बोध्यम्, न तु पृथक् पञ्चदशेति। तथा च पिङ्गलसूत्रम्–'मत्ताक्रीडा मौ त्नौ नौ न्लौ ग् वसुपञ्चदशकौ' इति (पि० सू० ७—२८)। अत्र द्विवचननिर्देशात्प्रतीयते 'पञ्चदश' इत्यर्थः। अन्यथा बहुवचनं प्रयुञ्जीत। व्याख्यातं चैवमेव नारायणभट्टैरपि। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

म म त न न न न लगु

ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ ।, ।।।, ।। ।,। । ।,। ।।,। ऽ

मुग्धोन्मीलन्मत्ताक्रीडं, मधुसमयसुलभमधुरमधुरसा–
द्राने याने किंचित्स्पन्द–त्पदमरुणनयनयुगलसरसिजम्।
रासोल्लासक्रीडाकम्र–व्रजयुवतिवलयविहितभुजरसं
सान्द्रानन्दं वृन्दारण्ये स्मरत हरिमनघचरणपरिचयम् ॥ १०६ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से दो मगण, एक तगण, चार नगण, एक लघु और गुरु हो, उसे 'मत्ताक्रीडा' नामक छन्द कहते हैं। यति आठ और पन्द्रह वर्णों पर होती है। ॥ १०६ ॥

अथ सङ्कृतिः (२४, १६७७७२१६)

[2]तन्वी (भ, त, न, स, भ, भ, न, य) ५, ७, १२

---

१ तदुक्तं सेतौ—'अष्टभिः' पञ्चभिर्दशभिश्च यतिरिति व्याचक्षाणः सुलक्षणस्तु शरेति भिन्नं यतिस्थानमिति बभ्राम। यदाह सूत्रकारः 'मत्ताक्रीडा' मौ त्नौ नौ न्लौ ग् 'वसुपञ्चदशकौ' अत्र हि 'वसुपञ्चदशकौ' इति द्विवचनान्न पञ्चसु यतिः। एतत्सूत्रविरोधादेव 'मत्ताक्रीडम्' इति नपुंसकपाठोऽपि तदुक्तः' इति।

२ अत्र सेतुः 'भूतानि पञ्च, तत्सङ्कलिता मुनयो द्वादश भवन्ति। तैर्यतिः। छनैः सूर्यैः पुनर्द्वादशभिर्दशभिर्यतिरित्यर्थः। यत्तु–पञ्चभिः सप्तभिर्द्वादशभिश्चेति सुलक्षणादयो व्याचख्युस्तत्सूत्रविरुद्धम्। तथा च सूत्रम्–तन्वी भ्तौ न्सौ भौ न्यौ द्विरादित्या इति' इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भ त न स
ऽ।।, ऽऽ।, ।।।, ।।ऽ,
भूतमुनीनै,—र्यतिरिह भतनाः,
भ भ न य
ऽ ।।,ऽ । ।,। ।।,। ऽ ऽ
स्भौ भनयाश्च यदि भवति तन्वी ॥ १०७ ॥

सं० टी०—अथ सङ्कृत्याः (४१५५३६३) तमं भेदं तन्वीनामकं लक्षयति—भूतेति। यदि भतनाः—भगणतगणनगणाः, स्भौ—सगण-भगणौ, भनयाश्च—भगणनगणयगणाश्च प्रतिचरणं छन्दसः, स्युः, इह—अस्मिन् छन्दसि भूतमुनीनैः—भूतैः पञ्चभिः, मुनिभिः—सप्तभिः, इनैः—सूर्यैः द्वादशभिरित्यर्थः यतिर्विरामो भवतीति शेषः। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

भ त न स भ भ न य
ऽ।।, ऽऽ ।,।।।,।।ऽ, ऽ ।।,ऽ।।,।।।,।ऽऽ
माधव ! मुग्धे, मधुकरविरुतैः कोकिलकूजितमलयसमीरैः
कम्पमुपेता, मलयजसलिलैः, प्लावनतोऽप्यविगततनुदाहा।
पद्मपलाशैर्विरचितशयना, देहजसंज्वरभरपरिदूनै—
र्निःश्वसती सा, मुहुरतिपरुषं ध्यानलये तव निवसति तन्वी ॥ १०७ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से भगण, तगण, नगण, सगण, भगण, नगण और यगण हो तथा पाँच, सात और बारह वर्णों पर यति हो उसे 'तन्वी' छन्द कहते हैं ॥ १०७ ॥

अथाऽतिकृतिः (२५, ३३५५४३२)

कौञ्चपदा (भ, म, स, भ, न, न, न, न, गु) ५, ५ ८, ८—
भ म स भ न न न न गु
ऽ।।, ऽ ऽ ऽ, ।।ऽ, ऽ ।।, ।।।,।।।, ।।।, ।।।,ऽ
कौञ्चपदा भ्मौ स्भौ ननना न्गाविषुशरवसुमुनिविरतिरिह भवेत् १०८

सं० टी०—अथातिकृत्याः (१६७७३६१) तमं भेदं कौञ्चपदानामकं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लक्षयति—क्रौञ्चपदेति । यदि प्रतिचरणं छन्दसः, भ्मौ–भगणमगणौ, स्भौ–सगणभगणौ, नननाः–नगणत्रयम् नोत्तरो नः, ननः ननोत्तरो नः ननन: इत्युत्तरपदलोपेनैकवचनान्तः पाठोऽपेक्षितोऽत्रेति पूर्वत्रापि बहुत्र प्रतिपादितम्, न्गौ–नगणो गुरुश्च इह–अस्मिन् छन्दसि इषुशरवसुमुनिविरतिः–इषवः पञ्च, शराः पञ्च, वसवः अष्टौ, मुनयः सप्त, तैर्विरतिर्भवेत् । एतच्छन्दः 'क्रौञ्चपदा-नामकं' भवति । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

भ म स भ न न न न गु

S I I, S S S, I I S, S I I, I I I, I I I, I I I, I I I, S

क्रौञ्चपदाली, चित्रिततीरा, मदकलखगकुल–कलकलरुचिरा
फुल्लसरोज–श्रेणिविलासा, मधुमुदितमधुपरवरभसकरी ।
फेनविलास–प्रोज्ज्वलहासा, ललितलहरिभर–पुलकितसुतनुः
पश्य हरेऽसौ, कस्य न चेतो, हरति तरलगति-रहिमकिरणजा ॥१०८॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः, भगण, मगण, सगण भगण, चार नगण और एक गुरु हो तथा पाँच-पाँच आठ और सात वर्णों पर यति हो, उसे 'क्रौञ्चपदा' छन्द कहते हैं ॥ १०८ ॥

अथ उत्कृतिः (२६, ६७१०८८६४)-

भुजंगविजृम्भितम् (म, म, त, न, न, न, र, स, ल, गु) ८, ११, ७

म म त न न न र स लगु

S S S, S S S, S S I, I I I, I I I, I I I, S I S, I I S, I S

वस्वीशाश्वच्छेदोपेतं ममतनयुगनरसलगैर्भुजंगविजृंभितम् ॥ १०९ ॥

सं० टी०—अथोत्कृत्याः (२३८५४८४९) तमं भेदं भुजङ्गविजृम्भित-नामकं लक्षयति—वस्वीशेति । यस्य प्रतिचरणं वसुभिः–अष्टभिः ईशैः–एकादशभिः, अश्वैः–सप्तभिः, छेदः–यतिः, तयोपेतम्, किञ्च–ममतनयुगनरसलगैः–मगणद्वय, तगण, नगणत्रय, रगण, सगण, लघु, गुरुभिश्च रचितं भवेत् । तद् वृत्तं 'भुजङ्गविजृम्भितं' नाम भवति । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

म म त न न न र स लगु

ऽ ऽ ऽ,ऽ ऽ ऽ,ऽ ऽ ।,।। । । । । । । । ।,ऽ । ऽ, । ।ऽ । ऽ

हेलोदञ्चन्यञ्चत्पादप्रकटविकटनटनभरो रणत्करतालक

चारुप्रेङ्खच्चूडाबर्हः श्रुतितरलनवकिसलयस्तरङ्गितहारधृक्।

नस्यन्नागस्त्रीभिर्भक्त्या मुकुलितकरकमलयुगं कृतस्तुतिरच्युतः

पायान्नः छिन्दन्कालिन्दीह्रदे कृतनिजवसति वृहद्भुजगविजृम्भितम् ॥१०९॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से दो मगण, तगण तीन नगण, रगण, सगण, लघु और गुरु हो उसे 'भुजङ्गविजृम्भित' छन्द कहते हैं। इसके आठ ग्यारह और सात वर्णों पर यति होती है॥ १०९॥

अपवाहम् (म, न, न, न, न, न, न, स गु, गु) ९, ६, ६, ५

म न न न न न न स गुगु

ऽ ऽ ऽ, । । ।, । । ।, । । । । । ।, । । ।, । । ।, । । ऽ, ऽ ऽ

मो नाः षड् सगगिति यदि, नवरसरस, शरयतियुत, अपवाहाख्यम् ११०

सं० टी०—अथोत्कृत्याः (१९३८८९०१) तमं भेदमपवाहाख्यं लक्षयति—ना इति। यदि छन्दसः प्रतिचरणं मो—मगणः, नाः षट्—षड् नगणाः, सगग्—सगणो गुरुद्वयं च, इति—इत्येवं प्रकारेण रचितं स्यात्, नवरसरसशरयतियुतम्—नवसु, रसेषु—षट्सु, रसेषु—षट्सु, शरेषु-पञ्चसु, यतिः, तया युतं च स्यात्, तत् छन्दः अपवाहाख्यम्—'अपवाह' इत्याख्या संज्ञा यस्य तत्तथाभूतं भवति, अपवाहं तस्य नामेत्यर्थः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

म न न न न न न स गुगु

ऽ ऽ ऽ, । । ।,। । ।, । । ।,। । ।, । । ।,। । ।, । ।ऽ, ऽऽ

श्रीकण्ठं त्रिपुर-दहन—ममृतकिरण—शकललित—शिरसं रुद्रं

भूतेशं हतमुनिमख—मखिलभुवन—नमितचरण—युगमीशानम्।

सर्वज्ञं वृषभगमन—महिपतिकृत—वलयरुचिर—करमाराध्यं

तं वन्दे भवभयभिद—मभिमतफल—वितरणगुरु—मुमया युक्तम्॥ ११०॥

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रत्येक चरण में क्रम से एक मगण, छ नगण,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक सगण और दो गुरु हों, तथा नौ, छ, छ और पांच वर्णों पर यति हो, उसको 'अपवाह' छन्द कहते हैं ॥ ११० ॥

इति उक्तादिप्रकरणम्।

अथ दण्डकप्रकरणम्।

[1]चण्डवृष्टिप्रपातः (न, न, र ७)

न न र र र र र र र

। । ।, । । ।, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ,ऽ । ऽ, ऽ । ऽ,ऽ । ऽ, ऽ । ऽ,ऽ । ऽ

यदि ह न युगलं ततः सप्तरेफास्तदा चण्डवृष्टिप्रपातो भवेद्दण्डकः ॥

सं० टी०—अथ षड्विंशत्यधिकाक्षरपादात्मकान् दण्डकान् निरूपयितुं तत्रादौ चण्डवृष्टिप्रपातनामकं दण्डकं लक्षयति—यदि हेति। यदीति 'यदा' इत्यर्थे। 'ह' इति प्रसिद्धार्थे। नयुगलम्—नगणद्वयम्। ततः सप्तरेफाः—सप्तरगणाः स्युरिति शेषः। तदा 'चण्डवृष्टिप्रपातो' नाम दण्डको भवेत्। दण्डकानामपि समवृत्तत्वादेकेनैव पादेन लक्षणम् उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न न र र र र र र र

। । ।, । । ।, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ,ऽ । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ । ऽ,ऽ । ऽ, ऽ । ऽ

इह हि भवति दण्डकारण्यदेशे स्थितिः पुण्यभाजां मुनीनां मनोहारिणी
त्रिदशविजयिवीर्यदृप्यद्दशग्रीवलक्ष्मीविरामेण रामेण संसेविते।
जनकयजनभूमिसम्भूतसीमन्तिनीसीमसीतापदस्पर्शपूताश्रमे
भुवननमितपादपद्माभिधानाम्बिकातीर्थयात्रागतानेकसिद्धाकुले ॥
यतिः पादान्ते ॥

---

१ यह संज्ञा सार्थक है। प्रचण्ड वृष्टि के गिरने के समान ही इसके उच्चारण में ध्वनि होती है। मालूम होता है जैसे घोर वृष्टि हो रही हो। दण्डकों के अन्य नाम भी प्रायः इसी प्रकार सार्थक हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—जिस पद्य के प्रतिचरण में प्रथम दो नगण और तदनन्तर सात रगण हों, उसको 'चण्डवृष्टिप्रपात' दण्डक कहते हैं। यति पादान्त में होती है।

दण्डक का सामान्य लक्षण पहले अध्याय में कहा जा चुका है। २६ अक्षर की 'उत्कृति' के अनन्तर दण्डक का पाठ है। इसलिये इसको २७ अक्षर का ही समझना चाहिये। क्योंकि इसके पहले सभी छन्दों की जातियाँ एक एक अक्षर की वृद्धि से बनाई गई हैं। इसके आगे एक एक रगण की वृद्धि से दण्डक का प्रस्तार बनेगा।

दण्डकभेदा अर्णादयः—

प्रतिचरणविवृद्धरेफाः स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दामशङ्खादयः।

सं० टी०—अर्णादीन् दण्डकभेदान् लक्षयति—प्रतिचरणेति। प्रतिचरणविवृद्धरेफाः—प्रतिदण्डकं चरणेषु विवृद्धा रेफा रगणा येषु ते, अर्णादयो नाम भवन्ति। अर्थात् नगणद्वयेन रगणैरष्टभिश्च घटितपादोऽर्णाख्यो दण्डकः, रगणनवकेनाऽर्णवः, दशभिर्व्यालः, एकादशभिर्जीमूतः, द्वादशभिर्लीलाकरः, त्रयोदशभिरुद्दामः, चतुर्दशभिः शङ्खः। सर्वत्रादौ नगणद्वयं विधेयम्। आदिशब्दादेकैकरगणवृद्ध्याऽन्येऽपि दण्डका भवन्तीति बोध्यम्। ते च एकोनसहस्राक्षरपादपर्यन्ता भवन्ति। उक्तं च—

एकोनसहस्राक्षरपर्यन्ता दण्डकाङ्घ्रयः प्रोक्ताः।
वर्णत्रिकगणवृद्ध्या न द्वितयाद्या महामतिभिः॥

अर्णस्योदाहरणं छन्दोमञ्जर्याम्—

जय जय जगदीश विष्णो हरे राम दामोदर श्रीनिवासाच्युतानन्त नारायण
त्रिदशगणगुरो मुरारे मुकुन्दासुरारे हृषीकेश पीताम्बर श्रीपते माधव।
गरुडगमन कृष्ण वैकुण्ठ गोविन्द विश्वम्भरोपेन्द्र चक्रायुधाधोक्षज श्रीनिधे
बलिदमननृसिंहशौरे भवाम्भोधिघोरार्णसि त्वं निमज्जन्तमभ्युद्धरोपेत्य माम्॥

[1]एवमन्येषामप्युदाहरणान्यूह्यानि।

हिं० टी०—उक्त 'चण्डवृष्टिप्रपात' दण्डक के चरण में एक एक रगण

१ अत्र सेतुः—'अत्रायं मामकः संग्रहः—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बढ़ा देने से अर्ण आदि दण्डक बनते हैं। दो नगण प्रारम्भ में इन दण्डक में प्रत्येक में अवश्य रहेंगे। कोष्ठक में इनका पृथक् पृथक् निरूपण किया जाता है—

चण्डवृष्टिप्रपाताख्यो दण्डको नगणद्वयात्।
रगणैः सप्तसंख्यैः स्यात्, अर्णस्त्वष्टाभिरुच्यते।
अर्णवो नवभिर्ज्ञेयो व्यालस्तु दशभिर्भवेत्
जीमूत एकादशभिः, सूर्यैर्लीलाकरो भवेत्॥

नाम	अर्ण	अर्णव	व्याल	जीमूत	लीलाकार	उद्दाम	शंख
लक्षण	२ न,८ र	२ न, ९ र	२न, १०र	२न,११र	२न,१२र	२न,१३र	२न, १४र

प्रचितकः (२ न, ७ य)—

न न य य य य य य य
। । ।,। । ।, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ,। ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ

प्रचितकसमभिधो धीरधीभिः स्मृतो दण्डको नद्वयादुत्तरैः सप्तभिर्यैः॥

इति दण्डकप्रकरणम्।

इति केदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे तृतीयोऽध्यायः॥ ३॥

सं० टी०—अथ प्रचितकनामानं दण्डकं लक्षयति—प्रचितकेति। यत्र प्रतिचरणं नद्वयात्—नगणद्वयात्, उत्तरैः—नगणद्वयप्रयोगान्तरं प्रयुक्तैः, सप्तभिर्यैः—यगणैः रचितं भवेत्, धीरधीभिः—धीरा धीर्येषां तैः, छन्दःशास्त्रविद्भिरित्यर्थः, प्रचितकसमभिधः—प्रचितकः समभिधा संज्ञा यस्य स तादृशः, दण्डकः स्मृतः कथितः।

यैरित्यन्येषामपि गणानामुपलक्षणम्। कविप्रयोगात्तदवघटितानामपि दण्डकानामिष्टत्वात्। अत्र चण्डवृष्ट्यादाविव गणवृद्ध्या दण्डकभेदा ज्ञेयाः। उदाहरणान्तरं यथा—

न न य य थ य य य य
। । ।, । । ।, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ, । ऽ ऽ

मुरहर यदुकुलाम्भोधिचन्द्र प्रभो देवकीगर्भरत्न त्रिलोकैकनाथ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रचितकपटसुरारिव्रजोद्दामदन्तावलस्तोमविद्रावणे केसरीन्द्र।
चरणनखरसुधांशुच्छटोन्मेषनिःशेषितध्यायिचेतोनिविष्टान्धकार-
प्रणतजनपरितापोग्रदावानलोच्छेदमेघ प्रसीद प्रसीद ॥
'त्रयोदशभिरुद्दामः शङ्खनामा ततः स्मृतः।
स चतुर्दशभिर्ज्ञेयः ततः पञ्चदशादिभिः।
आगमाद्याश्च विज्ञेया दण्डका रगणैर्युताः ॥' इति

हिं० टी०—यदि प्रतिचरण में दो नगणों के बाद सात यगण हों तो उसे 'प्रचितक' दण्डक कहते हैं।

'चण्डवृष्टिप्रपात' में जिस प्रकार एक एक रगण बढ़ा देने से 'अर्ण' आदि कई दण्डक बन जाते हैं उसी प्रकार 'प्रचितक' में भी एक एक यगण बढ़ा देने से अन्य दण्डक बनते हैं। यगण के अतिरिक्त अन्य गणों से भी दण्डक बन सकते हैं।

इति व्याकरणसाहित्याचार्यश्रीधरानन्दशास्त्रिविरचितायां प्राज्ञतोषिणी-
समाख्यायां वृत्तरत्नाकरव्याख्यायां तृतीयोऽध्यायः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ चतुर्थोऽध्यायः

वर्णार्धसमवृत्तप्रकरणम्

उपचित्रम्—

स स स लगु भ भ भ गुगु

।।ऽ, ।।ऽ, ।।ऽ, ।ऽ ऽ ।।, ऽ ।।, ऽ।।, ऽ ऽ

विषमे यदि सौ सलगा दले। भौ युजि भाद् गुरुकावुपचित्रम् ॥१॥

सं० टी०—अथ वर्णवृत्तेषु समानि निरूप्यार्धसमानि निरूपयन् तत्रादावुपचित्रं लक्षयति—विषमे इति। विषमे दले–भागे, अर्थात् प्रथमे तृतीये च चरणे, सौ–सगणद्वयम्, सलगाः—सगणलघुगुरवश्च, स्युः। तथा युजि समे दले द्वितीयचतुर्थचरणयोः, भौ–भगणद्वयम्, पुनः भाद्–भगणात् तृतीयात्, गुरुकौ–गुरुद्वयम्, च। तदा 'उपचित्रं' नाम छन्दो भवति। अयमाशयः—प्रथमे तृतीये च चरणे सगणत्रयम्, लघुगुरू च। द्वितीये चतुर्थे च चरणे भगणत्रयम्, गुरुद्वयं च। इदं लक्षणं प्रथमद्वितीयचरणात्मकमुदाहरणम्। रेखाभिः समन्वयः कार्यः। अर्धसमत्वादस्य द्वितीयमर्धमप्येवमेव विधेयम्। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

स स स लगु भ भ भ गुगु

।।ऽ,। ।ऽ, ।।ऽ, ।ऽ, ऽ।।, ऽ।।,ऽ।।, ऽऽ

मुरवैरि–वपुस्तनुतां मुदं हेमनिभांशुकचन्दनलिप्तम्।

गगनं चपलामिलितं यथा शारदनीरधरैरुपचित्रम् ॥ १ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषमचरणों में अर्थात् प्रथम तृतीय चरणों में तीन सगण और उसके अनन्तर एक लघु और एक गुरु हो तथा समचरणों–द्वितीय और चतुर्थ–में तीन भगणों के अनन्तर दो गुरु हों उसे 'उपचित्र' छन्द कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह अर्धसम है। पूर्वार्ध का उदाहरण यह लक्षण ही है। उत्तरार्ध भी इसी प्रकार बनेगा ॥ १ ॥

द्रुतमध्या—

भ भ भ गु गु न ज ज य
ऽ। ।, ऽ। ।, ऽ। ।, ऽ ऽ। । ।, । ऽ ।, । ऽ ।, । ऽ ऽ

भत्रयमोजगतं गुरुणी चेत्। युजि च नजौ ज्यमुतौ द्रुतमध्या ॥२॥

सं० टी०—अथ द्रुतमध्यां लक्षयति—भत्रयमिति। ओजगतम्—विषमपादगतम्, भत्रयम्, गुरुणी—गुरुद्वयं चेत्, युजि च—समपादयोश्च, नजौ—नगणजगणौ, ज्यमुतौ—जगणयगणसहितौ स्यातान्—तदा 'द्रुतमध्या' नाम तद् वृत्तं भवति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

भ भ भ गुगु न ज ज य
ऽ। ।, ऽ। ।, ऽ। ।, ऽ ऽ । । ।, । ऽ ।, । ऽ ।, । ऽ ऽ

यद्यपि शीघ्रगतिर्मृदुगामी, बहुधनवानपि दुःखमुपैति।
नातिशयाचरिता न च मृद्वी, नृपतिगतिः कथिता द्रुतमध्या ॥

द्वितीयचरणे 'ति' इति पादान्तत्वाद् गुरुः ॥ २ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में तीन भगण और दो गुरु हो, तथा सम चरणों में नगण, दो जगण और यगण हो उसे 'द्रुतमध्या' छन्द कहते हैं ॥ २ ॥

वेगवती—

स स स गु भ भ भ गु गु
। । ऽ, । । ऽ, । । ऽ, ऽ ऽ । ।, ऽ । ।, ऽ । ।, ऽ ऽ

सयुगात्सगुरू विषमे चेत्। भाविह वेगवती युजि भाद् गौ ॥३॥

सं० टी०—अथ वेगवतीं लक्षयति—सयुगादिति। चेत् विषमे—प्रथमतृतीयपादयोः; सयुगात्—सगणद्वयात्, ऊर्ध्वमिति शेषः, सगुरू—सगणो गुरुश्च। अथ युजि—समे दले द्वितीये चरणे, भौ—भगणद्वयम्, भाद्—भगणात्, ऊर्ध्वम्, गौ—गुरुद्वयं च, अर्थात् विषमचरणयोः सगणत्रयं गुरुश्चैकः समयोश्च

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भगणत्रयं द्वौ गुरू च स्याताम् , इह-छन्दःशास्त्रे तद् वृत्तं 'वेगवती' इत्युच्यते । उदाहरणान्तरं यथा छन्दोवृत्तौ—

स　स　स　गु　भ　भ　भ　गुगु
।।ऽ, ।।ऽ, ।।ऽ, ऽ ऽ।।, ऽ ।।, ऽ।।, ऽऽ
तव मुञ्ज नराधिप सेना, वेगवती सहते समरेषु ।
प्रलयार्मिमिवाभिमुखीं तां कः सकलक्षितिभृन्निवहेषु ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में तीन सगण और एक गुरु तथा समचरणों में तीन भगण और दो गुरु हों, उसे 'वेगवती' छन्द कहते हैं ॥ ३ ॥

भद्रविराट्—

त　ज　र　गु　म　स　ज　गुगु
ऽऽ।, ।ऽ।, ऽ।ऽ, ऽ　ऽऽऽ, ।।ऽ, ।ऽ।, ऽऽ
ओजे तपरौ जरौ गुरुश्चेत् । म्सौ ज्गौ गभद्रविराड् भवेदनोजे ॥ ४ ॥

सं० टी०—अथ भद्रविराड् नामकं छन्दो लक्षयति—ओजे इति । ओजे विषमे दले, अर्थात् प्रथमे तृतीये चरणे चेत् तपरौ–तात् तगणात् परौ, जरौ–जगणरगणौ, गुरुश्च स्यात् । अनोजे–समे दले, द्वितीयचतुर्थचरणयोरित्यर्थः, म्सौ–मगणसगणौ, ज्गौ–जगणगुरू ग्–गुरुश्च, भवेत् , तदा 'भद्रविराड्' इति नाम । उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

त　ज　र　गु　म　स　ज　गुगु
ऽऽ।, ।ऽ।, ऽ।ऽ, ऽ　ऽऽऽ, ।।ऽ, ।ऽ।, ऽऽ
यत्पादतले चकास्ति चक्रम् , हस्ते वा कुलिशं सरोरुहं वा ।
राजा जगदेकचक्रवर्ती, स्याच्छ्रं भद्रविराट् समश्नुतेऽसौ ॥ ४ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में तगण, जगण, रगण और एक गुरु हा तथा सम चरणों में मगण, सगण, जगण, और दो गुरु हों, उसे 'भद्रविराट्' छन्द कहते हैं ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

केतुमती—

स ज स गु भ र न गु गु

।।ऽ, ।ऽ।, ।।ऽ, ऽ ऽ।।, ऽ।ऽ, ।।।, ऽ ऽ

असमे सजौ सगुरुयुक्तौ, केतुमती समे भरनगाद् गः ॥ ५ ॥

सं० टी०—अथ केतुमतीं लक्षयति—असमे इति। यदा असमे विषमे दले सगणजगणौ, सगुरुयुक्तौ—सगणगुरुभ्यां सहितौ स्याताम्। समे—द्वितीय-चतुर्थयोश्चरणयोश्च, भरनगाद्—भगणरगणनगणगुरुभ्यः, ऊर्ध्वमिति शेषः समाहारे एकवचनम्, गः—गुरुश्च स्यात्, तदा 'केतुमती' नामकं छन्दो भवति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

स ज स गु भ, र न गु गु

।।ऽ, ।ऽ।, ।।ऽ, ऽ ऽ।।, ऽ।ऽ, ।।।, ऽऽ

हृतभूरिभूमिपतिचिह्नां, युद्धसहस्रलब्धजयलक्ष्मीम्।
सहते न कोऽपि वसुधायां, केतुमतीं नरेन्द्र! तव सेनाम् ॥ ५ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में क्रम से सगण, जगण, सगण और एक गुरु हो, तथा सम चरणों में भगण, रगण, नगण और दो गुरु हों, उसे 'केतुमती' छन्द कहते हैं ॥ ५ ॥

आख्यानकी—

त त ज गु गु ज त ज गु गु

ऽऽ।, ऽ ऽ।, ।ऽ।, ऽ ऽ ।ऽ।, ऽऽ।, ।ऽ।, ऽ ऽ

आख्यानकी तौ जगुरू ग ओजे। जतावनोजे जगुरू गुरुश्चेत् ॥६॥

सं० टी०—अथाख्यानकीं लक्षयति—आख्यानकीति। यस्य ओजे विषमे दले, तौ—तगणद्वयम्, जगुरू—जगणो गुरुश्च, गः—गुरुश्च स्यात्। अनोजे—समे दले च जतौ—जगणतगणौ, जगुरू—जगणो गुरुश्च, पुनः गुरुश्चेत् तदा तद् वृत्तम् 'आख्यानकी' इत्युच्यते। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

त त ज गुगु ज त ज गुगु

ऽऽ।, ऽऽ।, ।ऽ।, ऽऽ ।ऽ। ऽऽ।, ।ऽ।, ऽऽ

भृङ्गावलीमङ्गलगीतनादो जनस्य चित्ते मुदमादधाति।
आख्यानकी च स्मरजन्मपाश—महोत्सवस्याश्रवणे क्वणन्ती ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इयमाख्यानकी इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रयोरुपजातेरन्तर्गत एकादशो भेदो भद्रानामक एव, इहार्धसमेषु विशेषसंज्ञोपादानार्थं पाठ इति बोध्यम् ॥ ६ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में क्रम से दो तगण, जगण, और दो गुरु हों तथा सम चरणों में जगण, तगण, जगण और दो गुरु हों, उसे 'आख्यानकी' छन्द कहते हैं।

यह छन्द इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा की उपजाति के अन्तर्गत ग्यारहवां प्रकार भद्रा रूप ही है। यहाँ अर्धसम प्रकरण में केवल विशेष संज्ञा विधान के लिये कहा गया है ॥ ६ ॥

[1]विपरीताख्यानकी—

ज त ज गुगु त त ज गुगु
। ऽ ।, ऽ ऽ ।, । ऽ ।, ऽ ऽ ऽ ऽ ।, ऽ ऽ ।, । ऽ ।, ऽ ऽ

जतौ जगौ गो विषमे समे स्यात्। तौ ज्गौ ग एषा विपरीतपूर्वा ॥

सं० टी०—अथ विपरीताख्यानकीं लक्षयति—जतौ इति। यदि विषमे प्रथमतृतीयचरणयोः जतौ जगौ गः—जगणतगणजगणा गुरुद्वयं च, समे द्वितीयचतुर्थचरणयोः, तौ ज्गौ गः—तगणद्वयं, जगणो, गुरुद्वयं च स्यात्। एषा—आख्यानकी, विपरीतपूर्वा—विपरीताख्यानकीत्यर्थः। प्रथमतृतीयचरणौ उपेन्द्रवज्रालक्षणघटितौ, द्वितीयचतुर्थौ इन्द्रवज्रालक्षणघटितावित्यर्थः। इयं विपरीतत्वाद् विपरीताख्यानकी। इयमप्युपजात्यन्तर्गता विशेषसंज्ञाविधानार्थमेवेहोपात्ता। उपजातिभेदेषु षष्ठोऽयं हंसीनामकः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

ज त ज गुगु त त ज गुगु
।ऽ।, ऽऽ।, ।ऽ।, ऽऽ ऽऽ ।, ऽ ऽ।, ।ऽ।, ऽ ऽ

अलं तवालीकवचोभिरेभिः स्वार्थं प्रिये! साधय कार्यमन्यत्।
कथं कथावर्णनकौतुकं स्यात्, आख्यानकी चेद्विपरीतवृत्तिः ॥ ७ ॥

---

१ श्रुतबोधे तु—आख्यानकी साप्रकटीकृतार्थे! यदीन्द्रवज्राचरणः पुरस्तात्
उपेन्द्रवज्राचरणस्त्रयोऽन्ये मनीषिणोक्ता विपरीतपूर्वा ॥
इति लक्षणमुक्तम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में क्रम से जगण, तगण, जगण और दो गुरु हों तथा सम चरणों में दो तगण, एक जगण और दो गुरु हों उसे 'विपरीताख्यानकी' कहते हैं।

इसके विषमचरण उपेन्द्रवज्रा के और सम चरण इन्द्रवज्रा के होते हैं। आख्यानकी के विपरीत होने से इसे विपरीताख्यानकी कहते हैं। यह भी उपेन्द्रवज्रा और इन्द्रवज्रा की उपजाति का छठा भेद हंसी नामक है—विशेष संज्ञा के लिये यहाँ कहा गया है ॥ ७ ॥

हरिणप्लुता—

स स स लगु न भ भ र

।।ऽ, ।।ऽ ।।ऽ, ।ऽ ।।।, ऽ।।, ऽ।।, ऽ।।

सयुगात्सलघू विषमे गुरुः। युजि नभौ भरकौ हरिणप्लुता ॥ ८ ॥

सं० टी०—हरिणप्लुतां लक्षयति—सयुगादिति। यदा विषमे-प्रथमतृतीययोश्चरणयोः, सयुगात्-सगणद्वयात्, अनन्तरमिति शेषः सलघू-सगणौ लघुश्च, गुरुश्च, युजिसमे, द्वितीयचतुर्थचरणयोश्च, नभौ भरकौ—नगणो, भगणद्वयं रगणश्च तदा 'हरिणप्लुता' छन्दो भवति। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

स स स लगु न भ भ र

।।ऽ,।।ऽ,।।ऽ,।ऽ ।।।,ऽ।।, ऽ।।,ऽ।ऽ

स्फुटफेनचया हरिणप्लुता। बलिमनोज्ञतटा तरणेः सुता।
कलहंसकुलारवशालिनी। विहरतो हरति स्म हरेर्मनः॥

[1]हरिणप्लुता हि समयोर्द्रुतविलम्बितरूपैव, विषमयोश्चाद्याक्षरहीनद्रुतविलम्बितरूपा, अथवा 'उपचित्रमिदं सससा लगौ' इत्युपचित्ररूपा ॥ ८ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में तीन सगण, एक लघु और एक गुरु हो तथा सम चरणों में एक नगण, दो दो भगण और एक रगण हो उसे 'हरिणप्लुता' कहते हैं।

---

१ 'अयुजि प्रथमेन विवर्जिता, द्रुतविलम्बितता हरिणप्लुता।' इति छन्दोमञ्जर्युक्तं लक्षणम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हरिणप्लुता भी दो जातियों का संकर रूप है। विषमचरण ग्यारहवीं जाति के 'उपचित्र' छन्द के और समचरण बारहवीं के 'द्रुतविलम्बित' के होते हैं ॥ ८ ॥

अपरवक्त्रम्—

न न र लगु न ज ज र
। । ।, । । ।, ऽ । ऽ, । ऽ । । ।,। ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

अयुजि ननरला गुरुः समे । न्जमपरवक्त्रमिदं ततो जरौ ॥ ९ ॥

सं० टी० अथापरवक्त्रं लक्षयति—अयुजीति । यदा अयुजि–विषमे, प्रथमतृतीयचरणयोः । ननरला गुरुः-नगणद्वयम्, रगणः लघुः, गुरुश्च क्रमशः, समे–द्वितीयचतुर्थयोश्च, न्जम्–नगणजगणौ, समाहारे नपुंसकत्वमेकत्वं च, ततः, जरौ जगणरगणौ च, इदं वृत्तम् 'अपरवक्त्रम्' इत्युच्यते। उदाहरणान्तरं यथा छन्दोमञ्जर्याम्—

न न र लगु न ज ज र
। । ।, । । । ऽ,। ऽ, । ऽ । । ।, । ऽ ।, । ऽ ।, ऽ । ।

सकृदपि कृपणेन चक्षुषा, न-र-व-र पश्यति यस्य वाननम् ।
न पुनरपरवक्त्रमीक्षते, स हि सुखितोऽर्थिचनस्तथाविधः ॥

अस्य वैतालीयान्तर्गतत्वेऽपि विशेषसंज्ञार्थमिहोपादानम् । अत्रापि एकादश द्वादशाक्षरजात्योः संकरः प्रतीयते ॥ ९ ॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषमचरणों में क्रम से दो नगण, एक रगण, लघु और गुरु हो तथा सम चरणों में एक नगण, दो जगण और रगण हों, उसे 'अपरवक्त्र' छन्द कहते हैं ।

इसमें ग्यारहवीं और बारहवीं जाति का साङ्कर्य है ॥ ९ ॥

पुष्पिताग्रा—

न न र य न ज ज र गु
। । ।, । । ।,ऽ । ऽ, । । ऽ, । । ।,। ऽ ।,। ऽ ।, ऽ । ऽ, ऽ

अयुजि नयुगरेफतो यकारो, युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा ॥१०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथ पुष्पिताग्रां लक्षयति—अयुजीति। यदा अयुजि विषमे दले, नयुगरेफतो यकारो—नगणद्वयरगणादूर्ध्वं यगणः, युजि तु—समे दले तु नजौ जरगाः—नगणो जगणद्वयम्, रगणो गुरुश्चैकः स्यात्, तदा 'पुष्पिताग्रा' नामकं वृत्तं भवति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

न न र य न ज ज र गु

।।।,।।।,ऽ।ऽ,।ऽऽ, ।।।,।ऽ।,।ऽ।,ऽ।ऽ,ऽ

समस्थितदशनां मृगायताक्षी, स्मितसुभगा प्रियवादिनी विदग्धा।
अपहरति नृणां मनांसि रामा, भ्रमरकुलानि लतेव पुष्पिताग्रा॥
इयमप्यौपच्छन्दसिकान्तर्गता। अत्र विशेषसंज्ञार्थमुपन्यासः॥ १०॥

हिं० टी० जिस पद्य के विषम चरणों में क्रम से दो नगण, एक-रगण और एक यगण हो तथा सम चरणों में नगण, दो जगण, रगण और एक गुरु हो उसे 'पुष्पिताग्रा' छन्द कहते हैं।

यह छन्द 'औपच्छन्दसिक' के अन्तर्गत है। यहाँ पर विशेषसंज्ञा बताने के लिये इसका निरूपण किया गया है॥ १०॥

अपरवक्त्रपुष्पिताग्रयोर्नामान्तरे—

वदन्त्यपरवक्त्राख्यं वैतालीयं विपश्चितः।
पुष्पिताग्राभिधं केचिदौपच्छन्दसिकं तथा॥ ११॥

सं० टी०—अथापरवक्त्रपुष्पिताग्रयोर्नामान्तरे आह—वदन्ति इति। अपरवक्त्राख्यम्—'अपरवक्त्रम्' इत्याख्या संज्ञा यस्य तत् छन्दः, विपश्चितः-विद्वांसः, वैतालीयमेव वदन्ति। तथा केचित् विद्वांसः पुष्पिताग्राभिधम्-पुष्पिताग्रा अभिधा संज्ञा यस्य तत् छन्दः, औपच्छन्दसिकम्, एव वदन्ति। 'विपश्चितः' इति कथनात् स्वसम्मतिः सूचिता॥ ११॥

हिं० टी०—विद्वान् 'अपरवक्त्र' छन्द को वैतालीय तथा पुष्पिताग्रा को 'औपच्छन्दसिक' ही कहते हैं। इस बात को टीका में पहले भी कह दिया गया है॥ ११॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यवमती—

र ज र ज ज र ज र गु

ऽ।ऽ, ।ऽ ।, ऽ ।ऽ, ।ऽ ।, ।ऽ ।, ऽ।ऽ, ।ऽ ।, ऽ ।ऽ, ऽ

स्यादयुग्मके रजौ रजौ समे तु, रजौ जरौ गुरुर्यदा यवान्मतीयम् ।१२।

सं० टी०—अथ यवमतीं लक्षयति—स्यादिति। यदा अयुग्मके—विषमे दले, प्रथमतृतीयचरणयोः, रजौ रजौ—द्विवारं रगणजगणौ, समे तु—समचरणयोर्द्वितीयचतुर्थयोः, जरौ जरौ—द्विवारं जगणरगणौ, गुरुः, च, तदा, इयम् उक्तलक्षणा, यवात्—यवशब्दात्, अनन्तरमिति शेषः, मती, यवमतीत्यर्थः, 'यवमती' तस्याः संज्ञा स्यात्। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

र ज र ज ज र ज र गु

ऽ।ऽ,। ऽ।,ऽ।ऽ, ।ऽ।, ।ऽ।, ।ऽ ।, ऽ। ।,ऽ । ऽ, ऽ

पद्मकन्तु कोमले करे विभाति, प्रशस्तमत्स्यलाञ्छने पदे च यस्याः।

सा यवान्विता भवेद्धनाधिका, च, समस्तबन्धुपूजिता प्रिया च पत्युः ॥१२॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में क्रम से रगण, जगण, रगण और जगण हो तथा सम चरणों में जगण, रगण, जगण, रगण और एक गुरु हो उसे 'यवमती' छन्द कहते हैं ॥ १२ ॥

[1]सुन्दरी—

स स ज गु स भ ज लगु

।।ऽ, ।। ऽ, । ऽ ।, ऽ ।।ऽ, ऽ ।।, ऽ।ऽ, ।ऽ

अयुजोर्यदि सौ जगौ युजोः, सभरालगा यदि सुन्दरी तदा ॥ १३ ॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

---

१ महार्कविभिरत्यादृतमपीदं छन्दो नैकस्मिन्नपि वृत्तरत्नाकरपुस्तके लक्षितमिति महाश्चर्यम्। नारायणीटीकायामपि नास्य चर्चा। सेतुकारोऽपि मौनमेवावलम्बतेऽत्र, अपरां वसन्तमालिकां च लक्षयति—'विषमे ससजा गुरुः समे चेत्, सभरा गश्च वसन्तमालिका सा' इति। अत्रास्माभिस्तु बहूपयोगितया सन्निवेशितमेतत्। इदं हि करुणं भावमभिव्यनक्तितराम्। कालिदासीयेऽजविलापे रतिविलापे चैनदेव छन्दः प्रयुक्तमस्ति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथ सुन्दरीं लक्षयति—अयुजोरिति। यदि अयुजोः—विषमयोः चरणयोः, सौ—सगणद्वयम्, जगौ—जगणो गुरुश्च, युजोः—समयोः, चरणयोः सभराल्गाः—सगण-भगण-रगण-लघुगुरवश्च यदि स्युः तदा 'सुन्दरी' छन्दो भवति। उदाहरणान्तरं यथा—

स स ज गु स भ र ल गु
।।ऽ,।।ऽ,।ऽ।,ऽ,।।ऽ,ऽ।।,ऽ।ऽ,।ऽ

यदवोचदुदीक्ष्य सुन्दरी, परितः स्नेहमयेन चक्षुषा।
अपि कंसहरस्य दुर्वचं, वचनं तद् विदधीत विस्मयम्॥ १३॥

हिं० टी०—जिस पद्य के विषम चरणों में दो सगण, एक जगण और एक गुरु हो तथा सम चरणों में सगण, भगण, रगण, लघु और गुरु हो उसे 'सुन्दरी' छन्द कहते हैं। इसी को [1]'वियोगिनी' भी कहते हैं॥ १३॥

इति व्याकरणसाहित्याचार्यश्रीधरानन्दशास्त्रिविरचितायां
प्राज्ञतोषिणीसमाख्यायां वृत्तरत्नाकरव्याख्यायां
चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

———

१ लक्षणं च 'विषमे ससजाः समे गुरुः, सभरा लोऽथ गुरुर्वियोगिनी।' इति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ पञ्चमोऽध्यायः ।

वर्णविषमवृत्तानि ।

पदचतुरूर्ध्वप्रकरणम् ।

पदचतुरूर्ध्वम्—

मुखपादोऽष्टभिर्वर्णैः (८)
परे स्यु[1]र्मकरालयैः क्रमाद् वृद्धैः (१२)
सततं यस्य विचित्रैः पादैः सम्पन्नसौन्दर्यं (१६)
तदुदितममलमतिभिः पदचतुरूर्ध्वाभिधं वृत्तम् (२०) ॥ १ ॥

सं० टी०—अर्धसमानि वर्णवृत्तान्यभिधाय प्रास्तावसरतया संप्रति विषमवृत्तानि निरूपयन् तत्रादौ पदचतुरूर्ध्वं लक्षयति—मुखपाद इति। यस्य वृत्तस्य मुखपादः—प्रथमचरणः, अष्टभिर्वर्णैः, रचितः स्यादिति शेषः। परे—द्वितीयाद्याः चरणाः, मकरालयैः—समुद्रैः, चतुर्भिः, क्रमाद् वृद्धैः, सततम्—निरन्तरं स्युः, तद् वृत्तम्, अमलमतिभिः—अमला निर्मला मतिर्बुद्धिर्येषां तैः छन्दोविद्भिः पिङ्गलाद्याचार्यैः पदचरूर्ध्वाभिधम्—पदचतुरूर्ध्वमभिधा संज्ञा यस्य तत् तथा भूतम्, उदितम्—कथितम्। तद्विशिनष्टि—विचित्रैः—विलक्षणैः परस्परविभिन्नैः, पादैः—चरणैः, सम्पन्नसौन्दर्यम्—सम्पन्नं जातं सौन्दर्यं यस्य तत् तथाभूतम्। अत्र 'वर्णैः' इति सामान्येनोक्तेर्गुरुलघुनिवेश-नियमोऽत्र नास्ति, किन्तु कर्णमधुरतासम्पादनार्थं वर्णवैचित्र्यं विधेयमिति सूचितम्।

प्रथमे चरणेऽष्टौ वर्णाः, द्वितीये द्वादश, तृतीये षोडश, चतुर्थे विंशतिरिति फलितार्थः। इदं लक्षणमेवोदाहरणम्। समन्वयः सरलः। यथा वा नारायणभट्टस्य—

---

१ 'परेऽस्मात्' इति पाठान्तरम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोभं लम्भय विलयं (८)
यत्नाद् गुरुजनगौरवमाचर (१२)
लाभालाभावुभौ भावय समानो भव धीरः (१६)
यदि तत्रास्मिन्नमुष्मिंश्च लोके यशो विशालमाशास्यं स्यात् (२०) ॥१॥

हिं० टी०—जिस छन्द के प्रथम चरण में आठ वर्ण हों और शेष चरणों में क्रम से चार चार वर्ण अधिक हों अर्थात् द्वितीय चरण में १२ वर्ण, तृतीय में १६ और चतुर्थ में २० वर्ण हों उसे छन्दः शास्त्र के विद्वान् 'पदचतुरूर्ध्व' कहते हैं।

भिन्न भिन्न प्रकार के चरणों के होने से इसमें सौन्दर्य आ जाता है। 'वर्ण' सामान्य कहने से यह सूचित होता है कि इसमें गुरु लघु के निवेश का कोई नियम नहीं। यथेच्छ प्रकार से गुरु लघु रखे जा सकते हैं। ध्यान केवल सौन्दर्य का रहना चाहिये ताकि सुनने में अच्छा लगे।

यह लक्षण ही इसका उदाहरण भी है। इसके प्रथम चरण में आठ, द्वितीय में बारह तृतीय में सोलह और चतुर्थ में बीस वर्ण हैं॥ १ ॥

आपीडः—

ऽऽ
प्रथममुदितवृत्ते (८)ऽ ऽ
विरचितविषमचरणभाजि (१२)
ऽ ऽ
गुरुकयुगलनिधन इह सहित आङा (१६)
ऽ ऽ
लघुविरचितपदवितततियतिरिति भवति पीडः (२०) ॥ १ ॥

सं० टी०—अथ पदचतुरूर्ध्वस्यैव प्रकारान्तरमापीडं लक्षयति—प्रथममिति। विरचितविषमचरणभाजि—विरचितान् विषमान् विषमसंख्याकाक्षरान् चरणान् भजतीति तथा भूते, प्रथमम्, उदिते—उक्ते, वृत्ते, पदचतुरूर्ध्वाभिधे, गुरुकयुगलनिधने—गुरुकयुगलं गुरुद्वयं निधने अन्ते यस्य तत् तादृशे सति, इह छन्दःशास्त्रे आङा सहितः पीडः—'आपीडः' इत्यर्थः, भवति। कीदृक्—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लघुभिर्विरचितया पद्धतितया पदरचनया यतिर्यत्र सः। अन्ते गुरुद्वयस्य नियमनात् शिष्टभागस्य लघुविरचितत्वं स्वत आयाति। कर्णमधुरा यतिर्विधेयेति सूचनार्थं यतिग्रहणम्। 'आपीड' इति नाम्नः छन्दसि प्रवेशयितुमशक्यत्वात् 'आङा सहितः पीडः' इत्युक्तम्। द्वितीयचरणे 'जि' इत्यस्य पादान्तस्थत्वाद् गुरुत्वम्।

उदाहरणं लक्षणमेव। अन्ते प्रतिचरणं गुरुद्वयमस्ति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ

।।।।।।ऽऽ
कुसुमितसहकारे
।।।।।।।। ।।ऽऽ
हतहिममहिमशुचिशशाङ्के।
।।।।।।।।।।।।।।ऽ ऽ
विकसितकमलसरसि मधुसमयेऽस्मिन्
।।। ।। ।।।।। ।। ।। ।।। ।ऽऽ
प्रवससि पथिकहतक ! यदि भवति तव विपत्तिः ॥ २ ॥

हि० टी०—जिस पदचतुरूर्ध्व के प्रत्येक चरण के अन्त में दो गुरु हों और शेष वर्ण सब लघु हों उसे 'आपीड' कहते हैं ॥ २ ॥

कलिका—

प्रथममितरचरणसमुत्थं (१२)
श्रयति सपदि लक्ष्म (८)
इतरदितरगदितमपि च यदि तुर्यं (१६)
चरणयुगलकमविकृतमपरमिति कलिका सा (२०) ॥३॥

सं० टी०—अथापीडस्य रूपान्तरभूतां कलिकां लक्षयति—प्रथममिति। अन्वयः—यदि प्रथमं तुर्यम् इतरचरणसमुत्थं लक्ष्म सपदि श्रयति, अपि च—इतरत् इतरगदितं (लक्ष्म श्रयति), किंच–अपरं चरणयुगलकमविकृतं 'भवेत्' इति सा कलिका। व्याख्या—यदि आपीडस्यैव प्रथमं तुर्यं चरणम्, तुर्यशब्देन श्लोकचतुर्थांशः पाद उच्यते, इतरचरणसमुत्थम्–इतरस्य अन्यस्य,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वापेक्षयैवान्यत्वं ग्राह्यम्, प्रथमापेक्षयान्यस्य प्रत्यासत्त्या द्वितीयस्य चरणस्य समुत्थं वर्तमानम्, लक्ष्म—लक्षणं, सपदि श्रयति—अवलम्बते। इतरत्—अन्यत्, प्रथमापेक्षयेहाप्यन्यत्वे गृहीते द्वितीयमित्यर्थः, तुर्यम्—चरणम्, इतरगदितम्—स्वाव्यवहितप्रथमचरणगतं लक्षणं श्रयति। किं च—अपरं चरणयुगलकम्—अन्यचरणद्वयम्, तृतीयचतुर्थौ चरणौ, अविकृतम्—विकाररहितम्, यथावस्थितं भवेत्। इति—इत्येवं प्रकारेण आपीड एव सा प्रसिद्धा 'कलिका' भवति। पिङ्गलसूत्रे त्वस्या मञ्जरीति नाम, तत्रापि नापीडेऽपेक्षितं गुरुद्वयशिष्टलघुनियमं स्वीकरोति, अपि तु पदचतुरूर्ध्वस्य चरणव्यत्यासे छन्द एतदाह, अन्यान्यपि चैवंभूतानि चरणव्यत्यासरचितानि।

अयमाशयः—प्रथमे चरणे द्वादश, द्वितीयेऽष्टौ, तृतीये षोडश, चतुर्थे च विंशतिर्वर्णा भवन्ति कलिकायाम्। उदाहरणं च पूर्वोक्तमापीडस्यैव प्रथमचरणस्थाने द्वितीयस्य, द्वितीयस्य स्थाने प्रथमचरणनिवेशेन संपत्स्यते ॥ ३ ॥

हिं० टी०—जिस 'आपीड' का प्रथमचरण द्वितीयचरण के लक्षण से और द्वितीयचरण प्रथमचरण के लक्षण से लक्षित हो और शेष चरण—तृतीय और चतुर्थ—जैसे के तैसे रहें, उसे 'कलिका' कहते हैं। तात्पर्य यह है कि कलिका के प्रथम चरण में १२, द्वितीय में ८ तृतीय में १६ और चतुर्थ में २० वर्ण होते हैं।

पिङ्गल में भी इस प्रकार चरणव्यत्यास—विनिमय, परिवर्तन—से मञ्जरी आदि छन्द के कहे हैं पर 'आपीड' के चरणव्यत्यास से बनते हैं यह नहीं कहा। वृत्तिकार ने इसी लिये उदाहरण 'पदचतुरूर्ध्व' सामान्य से बनाये हैं ॥ ३ ॥

लवली—

द्विगुरुयुतसकलचरणान्ता (१२)
सुखचरणगतमनुभवति च तृतीयः (१६)
अपरमिह हि लक्ष्म (८)
प्रकृतमखिलमपि यदिदमनुभवति लवली सा (२०)।४।

सं० टी०—अथ लवलीं लक्षयति—द्विगुरुयुतेति। अन्वयः—यदि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इह हि तृतीयः मुखचरणगतं लक्ष्म अनुभवति। अपरं प्रकृतमखिलमपि अनुभवति, द्विगुरुयुतसकलचरणान्ता सा लवली भवति। व्याख्या—यदि—इह हि आपीडे, तृतीयश्चरणो मुखचरणगतम्—प्रथमचरणोक्तं लक्ष्यलक्षणमनुभवति। अपरं पादत्रयम्, प्रकृतं समस्तमप्यापीडलक्षणमनुभवति, तदा सा 'लवली' इत्याख्यं छन्दो भवति। अर्थात् प्रथमे चरणे द्वादश, द्वितीये षोडश, तृतीयेऽष्टौ, चतुर्थे विंशतिश्च वर्णा भवन्ति। द्विगुरुयुतसकलचरणान्ता—सर्वेषां चरणानामन्ते गुरुद्वयं स्यात्। इदं तु केवलमनुवादमात्रं वृत्तपूरणार्थम्, सामान्यातिदेशात्स्वतस्तद्ग्रहात् ॥ ४ ॥

हिं० टी०—यदि आपीड छन्द में तृतीय चरण प्रथम चरण के लक्षण से युक्त हो और शेष चरण शेष लक्षणों से क्रम से युक्त हो तो उसे 'लवली' कहते हैं। तात्पर्य यह है कि लवली छन्द के प्रथम चरण में १२, द्वितीय में १६, तृतीय में ८ और चतुर्थ में २० वर्ण होते हैं। प्रत्येक चरण के अन्त में दो गुरु अवश्य होने चाहिये।

अमृतधारा—

प्रथममधिवसति यदि तुर्यं (१२)
चरमचरणपदमवसितगुरुयुग्मम् (१६)
निखिलमपरमुपरिगतमिति ललितपदयुक्ता (२०)
तदिदममृतधारा (८) ॥ ५ ॥

सं० टी०—अथामृतधारां लक्षयति—प्रथममिति। यदि प्रथमं तुर्यम् प्रथमं चरणम्, चरमचरणपदम्—चतुर्थचरणस्थानम्, अधिवसति—प्राप्नोति, चतुर्थो भवतीत्यर्थः। चतुर्थश्चरणोऽष्टाक्षर इति भावः। अपरं निखिलम्—सर्वं प्रथमादिचरणत्रयम्, उपरिगतम्—क्रमशः स्यात्, तदिदम् 'अमृतधारा' इत्याख्यं छन्दो भवति। अवसितौ—अन्ते, गुरुयुग्मं गुरुद्वयं चेति पूर्ववदनुवादमात्रम्। ललितपदयुक्ता—ललितैः पदैर्युक्ता चेयं भवति ॥ ५ ॥

हिं० टी०—यदि आपीड का अष्टाक्षरात्मक प्रथम चरण चतुर्थ चरण के स्थान पर हो और शेष पाद यथावस्थित—जैसे के तैसे हों और प्रतिचरण के अन्त में दो गुरु हों, उसे 'अमृतधारा' छन्द कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सार यह है कि प्रथम चरण में १२, द्वितीय में १६, तृतीय में १० और चतुर्थ में ८ वर्ण होते हैं ॥ ५ ॥

इति पदचतुरूर्ध्वप्रकरणम् ।

उद्गता—

स ज स ल
। । ऽ, । ऽ ।, । । ऽ, ।
सजसादिमे सलघुकौ च
न स ज गु,
। । ।, । । ऽ, । ऽ ।, ऽ
नसजगुरुकैरथोद्गता ।
भ न ज लगु
ऽ । ।, । । ।, । ऽ ।, । ऽ
त्र्यङ्घ्रिगतभनजला गयुताः
स ज स ज गु
। । ऽ, । ऽ ।, । । ऽ, । ऽ ।, ऽ
सजसा जगौ [1]चरणमेकतः पठेत् ॥ ६ ॥

---

१ 'चरणमेकतः पठेत्' इसका अर्थ टीका में जो कुछ किया गया है। वह नारायणभट्ट के कथनानुसार तथा छन्दोवृत्ति के अनुसार है। वास्तव में इसके द्वारा भाव स्पष्ट होता नहीं। 'प्रथम चरण को द्वितीय के साथ' इतना अर्थ किन शब्दों का यहाँ निकल सकता है—यह कुछ स्पष्ट नहीं होता। पिङ्गलसूत्र में 'उद्गतामेकतः' इतना ही कहा गया है कि इस पर वृत्तिकार ने उक्त अर्थ को निकालने की कोशिश की है। वृत्ति को यहाँ उद्धृत करते हैं—उद्गतामिति कर्मविभक्तिश्रवणात्पठेदित्यध्याहार्यम्। 'एकतः' इति प्रथमं पादं द्वितीयेन सहाविलम्बेन पठेदित्यर्थः। 'उपस्थितप्रचुपितं पृथगाद्यम्' (५।१२८) इत्यतः सिंहावलोकितन्यायेनाद्यग्रहणमनुवर्तनीयम्। तेनाद्यमेव पादमेकतः पठेत्' इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथोद्गतां लक्षयति—सजसादिति । आदिमे–प्रथमे चरणे, सजसम्–सश्च जश्चेति तयोः समाहारः, सलघुकौ च–सःसगणः, लघुकः–लघुश्चेति द्वन्द्वः, स्वार्थे कः । अथ–अनन्तरम्, अर्थात् द्वितीये चरणे नसजगुरुकैः–नगणसगणजगणगुरुयुक्तं च, त्र्यङ्घ्रिगतभनजलाः–त्रयाणां पूरणे अङ्घ्रौ चरणे गताः स्थिताः ये भनजलाः–भगणनगणजगणलघवः, ते गयुक्ताः–गुरुसहिताः कार्याः । चतुर्थे चरणे च सजसा जगौ–सगणजगणसगणजगणा गुरवश्चेति त्रयोदश वर्णाः कार्या इति शेषः । एतल्लक्षणयुक्तमुद्गतानामकं छन्दो भवति । यतिनियममाह—चरणमिति । चरणम्–प्रथमं चरणम्, द्वितीयेन, एकतः एकीकृत्य, ल्यब्लोपे पञ्चमी, पठेत्–उच्चारयेत् अर्थात् द्वितीय-चरणान्ते यतिं विदध्यात् । उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

स ज स ल न स ज ग
। । S, । S ।, । । S, । । । ।, । । S, । S ।, S
मृगलोचना शशिमुखी च, रुचिरदशना नितम्बिनी ।
भ न ज लगु स ज स ज गु
S । ।, । । ।, । S ।, । S । । S, । S ।, । । S, । S ।, S
हंसललितगमना ललना परिणीयते यदि भवत्कुलोद्गता ।

भारवेः किरातार्जुनीयस्य द्वादशः सर्ग उद्गताछन्दोबद्धः तस्यायमादिमः श्लोकः । समन्वयः स्वयमूह्यः ।

अथ वासवस्य वचनेन, रुचिरवदनस्त्रिलोचनम् ।
क्लान्तिरहितमभिराधयितुं विधिवत्तपांसि विदधे धनञ्जयः ॥ ६ ॥

हिं० टी०—जिस छन्द के प्रथम चरण में सगण, जगण, सगण और एक लघु के द्वारा १० वर्ण, द्वितीय चरण में नगण, सगण, जगण, और एक गुरु वर्ण द्वारा १० वर्ण, तृतीय चरण में भगण, नगण, जगण, एक लघु और एक गुरु मिलकर ११ वर्ण हों । एवं चतुर्थ चरण में सगण, जगण, सगण, जगण और एक गुरु मिलकर १३ वर्ण हों । उसे 'उद्गता' कहते हैं । इस छन्द में प्रथम चरण को द्वितीय चरण के साथ मिलाकर पढ़ना चाहिये अर्थात् द्वितीय चरण के अन्त में यति होती है ॥ ६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सौरभकम्—

स ज स ल
।।ऽ,।ऽ ।,।। ऽ ।
चरणत्रयं व्रजति लक्ष्म
न स ज गु
। ।।, ।।ऽ,।ऽ।ऽ
यदि सकलमुद्गतागतम्।
र न भ गु
ऽ।ऽ,। । ।, ऽ।।, ऽ
नौं भगौ भवति सौरभकं
स ज स ज गु
।।ऽ, । ऽ ।,।।ऽ,।ऽ।, ऽ
चरणे यदीह भवतस्तृतीयके ॥ ७ ॥

सं० टी०—अथ सौरभकं लक्षयति—चरणत्रयमिति। यदि तृतीयके चरणे नौं-रगणनगणौ, भगौ-भगणगुरू च भवेताम्, चरणत्रयं च-अपरमवशिष्टं प्रथमद्वितीयचतुर्थरूपं चरणत्रयं सकलमुद्गतागतं लक्ष्म-लक्षणं व्रजति-अनुभवति, तदा 'सौरभकम्' भवति-तदा तस्य छन्दसः 'सौरभकम्' इति संज्ञा भवतीत्यर्थः। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

स ज स गु न स ज गु
।।ऽ,।ऽ ।,।।ऽ,। ।। ।,। ।ऽ,।ऽ।,ऽ
विनिवारितोऽपि नयनेन, तदपि किमिहागतो भवान्।
र न भ गु स ज स ज गु
ऽ।ऽ।।।,ऽ।।,ऽ ।।ऽ,।ऽ।,।। ऽ,।ऽ।,ऽ
एतदेव तव सौरभकं; यदुदीरितार्थमपि नावबुध्यसे ॥ ७ ॥

हिं० टी०—यदि तृतीय चरण में रगण, नगण, भगण, और गुरु हो और शेष चरण उद्गता के लक्षण के अनुसार बने हों, तो उसे 'सौरभक' छन्द कहते हैं ॥ ७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ललितम्—

स ज स ल
। । ऽ, । ऽ ।, । । ऽ, ।
नयुगं सकारयुगलं च,
न स ज गु
। । ।, । । ऽ, ऽ । ऽ, ऽ
भवति चरणे तृतीयके।
न न स स
। । ।, । । ।, । । ऽ, । । ऽ
तदुदितमुरुमतिभिर्ललितं,
स ज स ज गु
। । ऽ, । ऽ ।, । । ऽ, । ऽ ।, ऽ
यदि शेषमस्य खलु पूर्वतुल्यकम् ॥ ८ ॥

सं० टी०—अथ ललितं लक्षयति—नयुगमिति। यस्य छन्दसः तृतीयके तृतीये, स्वार्थिकः कप्रत्ययः, चरणे, नयुगम्—नगणद्वयम्, सकारयुगलम्—सगणद्वयं च भवति, तद्, उरुमतिभिः—बहुदर्शिभिः, मतेरुरुता विशालता न स्वतः, अपि तु विषयबाहुल्येन, ललितम्, उदितम्—कथितम्। यदि अस्य सपद्युक्तविशेषलक्षणस्य ललितच्छन्दस एव, शेषम्—प्रथम-द्वितीय-चतुर्थ-चरण-रूपम्, खलु-निश्चयेन, पूर्वतुल्यकम्—उद्गतासदृशं भवेदिति। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

स ज स ल न स ज गु
। । ऽ, । ऽ ।, । । ऽ, । । । ।, । । ऽ, । ऽ ।, ऽ
सततं प्रियंवदमनून,-ममलहृदयं गुणोत्तरम्।
न न स स स ज स ज गु
। । ।, । । ।, । । ऽ, । । ऽ । । ऽ, । ऽ ।, । । ऽ, । ऽ ।, ऽ
सुललितमतिकमनीयतमम्, पुरुषं त्यजन्ति न तु जातु योषितः ॥८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—जिस छन्द के तृतीय चरण में क्रम से दो नगण और सगण हो और अन्य तीनों चरण पूर्वोक्त उद्गता हो तो उसे 'ललित' कहते हैं ॥८॥

इत्युद्गताप्रकरणम् ।

उपस्थितप्रचुपितम्—

म स ज भ गुगु

ऽ ऽ ऽ, । । ऽ, । ऽ ।, ऽ । ।, ऽ ऽ

म्सौ ज्भौ गौ प्रथमाङ्घ्रिरेकतः पृथगन्यत्,

स न ज र गु

। । ऽ, । । ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ, ऽ

त्रितयं सनजरगास्तथा ननौ सः ।

न न स

। । ।, । । ।, । । ऽ

त्रिनपरिकलितजयौ

न न न ज य

। । ।, । । ।, । । ।, । ऽ ।, । ऽ ऽ

प्रचुपितमिदमुदितमुपस्थितपूर्वम् ॥ ९ ॥

सं० टी०—अथोपस्थितप्रचुपितं लक्षयति—म्सौ ति । यत्र प्रथमाङ्घ्रिः—प्रथमश्चरणः, म्सौ ज्भौ गौ मगण-सगण-जगण-भगण-गुरुद्वययुक्तः, द्वितीयश्चरणः सनजरगाः सगण-नगण-जगण-रगण-गुरुसहितः, तृतीये चरणे-ननौ-नोत्तरो नः नन इत्येकवचनान्तः पाठो युक्ततरः, नगणद्वयम्, सः—सगणश्च भवेत् । तथा चतुर्थः पादः, त्रिनपरिकलितजयौ—त्रिनाः नगणत्रयम्, तेन परिकलितौ युक्तौ जयौ—जगणयगणौ, एभिर्युक्तः, स्यात् । इदम्—पूर्वोक्तलक्षणलक्षितं छन्दः, उपस्थितपूर्वम्—'उपस्थित—'शब्दः पूर्वो यस्य तत् तादृशम्, प्रचुपितम्, अर्थात्—उपस्थितप्रचुपितमिति नामकं भवति ।

'एकतः पृथगन्यत्, त्रितयम्' इत्यस्यायमर्थः—स चैकः पादः पृथक्, पठनीय इति शेषः । न तूद्गतादिवद् द्वितीयपादेनैकीकृत्य प्रथमचरणान्ते यतिरिति भावः । प्रथमार्थे सार्वविभक्तिकस्तसिः । अन्यत् त्रितयम्—अन्यच्चरणत्रयं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निरूप्यते इति शेषः। क्वचित्तु—अन्यत् चरणत्रयमेकीकृत्य पठनीयमिति तात्पर्यमाहुः, प्रथमस्य पृथक् कथनादिहैकत्र पठनं मन्यन्ते ॥

हिं० टी०—जिस छन्द के प्रथम चरण में क्रम से मगण, सगण, जगण भगण और दो गुरु, द्वितीय चरण में सगण, नगण, जगण, रगण और गुरु, तृतीय चरण में दो नगण और एक सगण तथा चतुर्थ चरण में तीन नगण जगण और यगण हो, उसे उपस्थितप्रचुपित कहते हैं।

'एकतः पृथगन्यत्, त्रितयम्' का तात्पर्य यह है कि प्रथम चरण को पृथक् पढ़ा जाय, उद्गतादि के समान द्वितीय के साथ मिलाकर नहीं अर्थात् प्रथम चरण के अन्त में यति करनी चाहिये। 'अन्यत् त्रितयम्'—अन्य तीन चरणों का अब लक्षण किया जाता है। किसी ने इसका अर्थ यों लगाया है कि जब प्रथम चरण को अलग पढ़ने के लिये कहा गया है तो इन शेष तीनों को साथ पढ़ा जाना चाहिये अर्थात् प्रथम चरण के अन्त के बाद पद्य के अन्त में ही यति हो ॥ ९ ॥

वर्धमानम्—

म स ज भ गुगु

ऽ ऽऽ, ।।ऽ,।ऽ।, ऽ ।।,ऽऽ

नौ पादेऽथ तृतीयके सनौ नसयुक्तौ

स न ज र गु

।।ऽ, ।।।,।ऽ।, ऽ।ऽ,ऽ

प्रथमाङ्घ्रिकृतयतिस्तु वर्धमानम्।

न न स न न स

।।।,।।।,।।ऽ, ।।।,।।।, ।।ऽ

त्रितयमपरमपि पूर्वसदृशमिह भवति

न न न ज य

।।।,।।।,।। ।,।ऽ।, ।ऽऽ

प्रततमतिभिरिति गदितं लघु वृत्तम् ॥ १० ॥

सं० टी०—अथ वर्धमानं लक्षयति—नौ इति। यस्य छन्दसः तृतीयके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पादे तृतीये चरणे नौ सनौ नसयुक्तौ—यथाक्रमं नगणद्वयसगणनगणद्वयस-गणाश्च भवेयुः, अपरमपि त्रितयम्, प्रथमद्वितीयचतुर्थरूपम्, पूर्वसदृशम्—उपस्थितप्रचुपितसदृशम्, इह भवति। इति—अमुना प्रकारेण, प्रततमतिभिः—प्रसिद्धबुद्धिभिः, लघु सुन्दरं 'वर्ध[1]मानम्' इति नाम वृत्तं गदितम्—उक्तम्। यतिनियममाह—प्रथमेति। प्रथमाङ्घ्रौ—प्रथमचरणे कृतया यत्या स्तूयते प्रशस्यते प्रशस्ततया पठ्यते इति तत् तादृगिति वर्धमानविशेषणम्। 'तु' इति भिन्ने पदे तु यतिरित्यन्तं पुंल्लिङ्गं स्त्रीलिङ्गं वा नपुंसकेन 'वर्धमानम्' इत्यनेनानन्वितं स्यात्। 'यतीह' इति पाठश्चेत्तर्हि सर्वं सिद्धं स्यात्। इह तृतीये चरणेऽन्ते 'ति' इत्यस्य पादान्तस्थत्वाद् गुरुर्बोध्यः। उदाहरणान्तु यथा वृत्तौ—

म स ज म गुगु
ऽ ऽ ऽ, । । ऽ, । ऽ ।, ऽ । ।, ऽ ऽ
बिम्बोष्ठी कठिनोन्नतस्तनावनताङ्गी

स न ज र गु
। । ऽ, । । ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ, ऽ
हरिणी शिशुनयना नितम्बगुर्वी।

न न स न न स
। । ।, । । ।, । । ऽ, । । ।, । । ।, । । ऽ
मदकलकरिगमना परिणतशशिवदना।

न न न ज य
। । ।, । । ।, । । ।, । ऽ ।, । ऽ ऽ
जनयति मम मनसि मुदं मदिराक्षी॥ १०॥

हिं॰ टी॰—जिस छन्द के तृतीय चरण में क्रम से दो नगण, एक सगण, दो नगण और एक सगण मिलाकर १८ वर्ण हों तथा अन्य तीन चरण पूर्वोक्त 'उपस्थितप्रचुपित' छन्द के लक्षण से युक्त हों विद्वान् उस

१ तुगभावस्तु 'आगमशास्त्रमनित्यम्' इति परिभाषाबलात्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुन्दर वृत्त को 'वर्धमान' कहते हैं। यति प्रथम चरण के अन्त में होती है और शेष तीनों चरणों को मिलाकर पढ़ा जाना चाहिये अर्थात् दूसरी यति छन्द के अन्त में ही होगी ॥ १० ॥

शुद्धविराडार्षभम्—

म स ज भ गु गु
ऽ ऽ ऽ, । । ऽ, । ऽ ।, ऽ । ।, ऽ ऽ
अस्मिन्नेव तृतीयके यदा तजराः स्युः।
स न ज र गु
। । ऽ, । । ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ, ऽ
प्रथमे च विरतिरार्षभं ब्रुवन्ति।
त ज र
ऽ ऽ ।, । ऽ ।, ऽ । ऽ
तच्छुद्धविराट् पुरःस्थितं
न न न ज य
। । ।, । । ।, । । ।, । ऽ ।, । ऽ ऽ
त्रितयमपरमपि यदि पूर्वसमं स्यात् ॥ ११ ॥

सं० टी०—अथ शुद्धविराडार्षभं लक्षयति—अस्मिन्नेवेति। अन्वयः—अस्मिन्नेव तृतीयके यदा तजराः स्युः, प्रथमे च विरतिः, अपरमपि त्रितयं यदि पूर्वसमं स्यात्। तत् शुद्धविराट् पुरःस्थितमार्षभं ब्रुवन्ति। व्याख्या—अस्मिन्नेव—वर्धमाने एव, उपस्थितप्रचुपिते वा, तृतीयके—तृतीये चरणे, यदा तजराः—तगणजगणरगणाः स्युः। प्रथमे च विरतिः—प्रथमचरणान्ते यतिर्भवेत्। अपरमपि—अन्यच्च, त्रितयम्—चरणत्रयम्, प्रथमद्वितीयचतुर्थरूपम्, यदि पूर्वसमम्—उपस्थितप्रचुपितसमं स्यात्, तदा तत्—पूर्वोक्तलक्षणलक्षितं छन्दः, 'शुद्धविराट्' इति पदं पुरः—पूर्वं स्थितं यस्य तत् तादृशम्, 'आर्षभम्' इति [1]ब्रुवन्ति—कथयन्ति, 'छन्दः—शास्त्राचार्याः' इत्यध्याहार्यम्। उदाहरणान्तरं यथा वृत्तौ—

---

१ 'वदन्ति' इति पाठान्तरम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स ज भ गुगु स न ज र गु
SSS, IIS, IS I,SII,SS IIS, III,IS I,S IS,S
कन्येयं कनकोज्ज्वला मनोहरदीप्तिः, शशिनिर्मलवदना विशालनेत्रा।
त ज र न न न ज य
SSI, ISI,S IS, III,III,III,ISI,ISS
पीनोरु नितम्बशालिनी सुखयतिहृदयमतिशयं तरुणानाम्।
पिङ्गलसूत्रेऽस्य 'शुद्धविराडृषभम्' इति संज्ञा ॥ ११ ॥

हिं० टी०- जिस छन्द के तृतीय चरण में क्रम से नगण, जगण और रगण हो तथा अन्य तीनों चरण 'उपस्थितप्रचुपित' छन्द के लक्षण से युक्त हों तथा यति प्रथम चरण के अन्त में हो उसे 'शुद्धविराडार्षभ' कहते हैं।

इन विषम छन्दों के सरलता से ज्ञान के लिये इनके लक्षण कोष्ठक के द्वारा दिखाये जाते हैं—

छन्दनाम	प्रथमचरण	द्वितीयचरण	तृतीयचरण	चतुर्थचरण
१ उद्गता	स, ज, स, ल १०	न, स, ज, गु, १०	भ,न,ज,ल,गु ११	स,ज,स,ज, गु।
२ सौरभक	उद्गतावत्	उद्गतावत्	र, न, भ, गु १०	"
३ ललित	"	"	न, न, स, स, १२	"
४ उपस्थितप्रचुपित	म,स,ज,भ,गुगु १४	स,न,ज,र,गु १३	न, न, स, ६ वर्ण	न,न,न,ज, य।
५ वर्धमान	"	"	न,न,स,न,न,स १८	"
६ शुद्धविराडार्षभ	"	"	त, ज, र ६ वर्ण	"

इत्युपस्थितप्रचुपितप्रकरणम्।

गाथालक्षणम्—

विषमाक्षरपादं वा, पादैरसमं दशधर्मवत्
यच्छन्दो नोक्तमत्र, गाथेति तत्सूरिभिः कथितम् ॥ १२ ॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

सं० टी०—अथ छन्दोलक्षणमुपसंजिहीर्षुरत्रानुक्तानां छन्दसां सामान्य-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संज्ञामाह—विषमेति। विषमाक्षरपादम्–विषमाण्यक्षराणि येषु तादृशाः चरणा यस्य तत्। अक्षराणां वैषम्यं च द्विधा संभवति गुरुलघुक्रमनियम-साम्याभावात् संख्यासाम्याभावाच्चेति द्विविधमपि वैषम्यमिह विवक्षितम्, वा–अथवा, पादैः असमम्–स्वीयैः चरणैः कृत्वा विषमम्, चतुः–संख्या-कपादैरन्यवृत्तैरसमानम्, त्रिपञ्चषडादिपादमित्यर्थः। अत एव—

शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः (वृ० र० १–१८) इति प्रागुक्तम्। दशधर्मवत्–वतिः सादृश्ये, यथा 'दशधर्म' इति तद्वत् त्रिपञ्चषडा-दिपादं छन्दः। 'दशधर्म' पदेन लक्षणया महाभारतस्था षड्पदा गाथोच्यते। सा यथा—

दश धर्मं न जानन्ति, धृतराष्ट्र! निबोध तान्।
मत्तः प्रमत्त उन्मत्तः, श्रान्तः क्रुद्धो बुभुक्षितः॥
त्वरमाणश्च भीरुश्च, लुब्धः कामी च ते दश॥ इति॥

विषमाक्षरपादत्वं पदचतुरूर्ध्वादीनामप्यस्तीत्यत आह—यच्छन्द इति। अत्र यच्छन्दो विशेषतो नोक्तम्, तत् सूरिभिः–छन्दोविद्भिः पण्डितैः गाथेति कथितम्। 'यच्छन्दो नोक्तमत्र' इत्यावृत्त्या स्वातन्त्र्येणापि योज्यम्। तेनात्रा-नुक्तानां सर्वेषां विषमवृत्तानां समवृत्तानां च 'गाथा' संज्ञा भवतीति बोध्यम्। पिङ्गलेऽपि सामान्येनैवमुक्तम्–'अत्रानुक्तं गाथा' (पि० सू० ८–१) विषमा-क्षरपादस्योदाहरणमिदं मूलस्थमेव पद्यम्, तथाहि—पद्येऽस्मिन् प्रथमे चरणेऽष्टौ वर्णाः, द्वितीये च दश, तृतीये सप्त, चतुर्थे नव वर्णाः सन्ति।

'यच्छन्दो नोक्तम्' इत्यस्य स्वातन्त्र्येण व्याख्याने समानामपि गाथात्वं संभवति। दर्शिताश्च समपादा गाथा वृत्त्याद्याकरग्रन्थेषु। इह तु ग्रन्थगौरव-भिया तदुपेक्षा॥ १२॥

हिं० टी०—यदि छन्द के प्रत्येक चरण में वर्णों की संख्या समान न हो अथवा चरण संख्या विषम हो अर्थात् तीन, पांच या छः चरण हों तथा यहाँ उनका निरूपण न किया गया हो और प्रयोग उनका होता हो। ऐसे छन्दों को विद्वान् लोग सामान्य रूप से 'गाथा' कहते हैं।

'विषमाक्षरपाद' का यह पद्य ही उदाहरण है। इसके प्रथम चरण में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आठ, द्वितीय में दश, तृतीय में सात और चतुर्थ में नौ वर्ण हैं। विषम पाद का उदाहरण मूल में ही 'दशधर्मवत्' कह दिया गया है। उक्त पद्य के छ चरण हैं। अत एव यह 'गाथा' है।

जो छन्द यहाँ नहीं बताया गया और प्रयुक्त होता है। सामान्य रूप से उसकी संज्ञा 'गाथा' होगी। इस लिये समवृत्त भी गाथा हो सकते हैं ॥१२॥

इति व्याकरणसाहित्याचार्यश्रीधरानन्दशास्त्रिविरचितायां प्राज्ञतोषिणी समाख्यायां वृत्तरत्नाकरव्याख्यायां पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ षष्ठोऽध्यायः ।

प्रत्ययाः—

प्रस्तारो नष्टमुद्दिष्टमेकद्व्यादिलगक्रिया ।
संख्यानमध्वयोगश्च षडेते प्रत्ययाः स्मृताः ॥ १ ॥

सं० टी०—अथाध्यायपञ्चके सर्वविधानि छन्दांसि लक्षयित्वा संप्रति तेषामुत्पत्तिप्रदर्शनार्थमलक्षितानां तत्र तत्र महाकविभिः प्रयुक्तसमादृतानां च वृत्तानां सद्भावोपपत्तये स्वरूपबोधाय च प्रस्तारादीन् षट् प्रत्ययानाह—प्रस्तार इति । १ प्रस्तारः, २ नष्टम् , ३ उद्दिष्टम् , ४ एकद्व्यादिलगक्रिया, ५ संख्यानम् , ६ अध्वयोगश्चेति षट् प्रत्ययाः, स्मृताः प्रतिपादिताः, पूर्वाचार्यैरिति शेषः । प्रतीयते संख्यादिकमेभिरिति प्रत्ययाः, संभावितेषु छन्दस्सु हि एते विश्वासं ख्यापयन्ति । एवं च 'प्रत्ययः' इत्यन्वर्थेयं संज्ञा । अत एव चायं योगरूढः शब्दः व्युत्पत्तिरेव च तत्सामान्यलक्षणमिति समवधेयम् ॥ १ ॥

हिं० टी०—१ प्रस्तार, २ नष्ट, ३ उद्दिष्ट, ४ एकद्व्यादिलगक्रिया, ५ संख्यान, ६ अध्वयोग, ये ६ प्रत्यय कहे गये हैं ।

संख्यादि की प्रतीति इन से होती है अतः इन्हें प्रत्यय कहा गया है । अथवा प्रत्यय का अर्थ विश्वास होता है । विश्वासजनक होने से इन्हें प्रत्यय कहते हैं । संभावित वृत्तों पर इनसे विश्वास होता है । अतः प्रत्यय का लक्षण यह हुआ कि—जिसके द्वारा वृत्त की प्रतीति होती है, उसे प्रत्यय कहते हैं । अथवा जिनके द्वारा संभावित वृत्तों की सत्ता पर विश्वास हो जाता है, उन्हें प्रत्यय कहते हैं ।

इन छहों के पृथक् पृथक् लक्षण निम्नलिखित हैं—

१ प्रस्तार—जिस विधि से वृत्त के भिन्न भिन्न रूपों का पृथक् पृथक् ज्ञान होता है, उसे 'प्रस्तार' कहते हैं ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२ नष्ट—नष्ट (अज्ञात) भेद के स्वरूप का ज्ञान जिसके द्वारा हो, उसे 'नष्ट' कहते हैं।

३ उद्दिष्ट—दिये हुए रूप की क्रम संख्या का ज्ञान जिससे होता है उसे 'उद्दिष्ट' कहते हैं।

४ एकद्व्यादिलगक्रिया—जिसके द्वारा यह मालूम होता है कि सम्पूर्ण छन्दों में एक गुरु वाले इतने, दो गुरु वाले इतने इत्यादि, एवं एक लघु वाले इतने दो लघु वाले इतने रूप हैं, इत्यादि प्रकार का ज्ञान होता है उसे 'एकद्व्यादिलगक्रिया' कहते हैं।

५ संख्यान—जिस विधि के द्वारा छन्दों की पूर्ण संख्या का ज्ञान होता है उसे 'संख्यान' कहते हैं।

६ अध्वयोग—जिस विधि के द्वारा—इसको प्रस्तार रचना के लिये कितने स्थान की आवश्यकता है, यह ज्ञान होता है उसे 'अध्वयोग' कहते हैं ॥ १ ॥

प्रस्ताररचनाविधिः—

पादे सर्वगुरावाद्याल्लघुं न्यस्य गुरोरधः।
यथोपरि तथा शेषं भूयः कुर्यादमुं विधिम् ॥ २ ॥
ऊने दद्यात् गुरूनेव यावत्सर्वलघुर्भवेत्।
प्रस्तारोऽयं समाख्यातश्छन्दोविचितिवेदिभिः ॥ ३ ॥

सं० टी०—अथ सर्वेषां नष्टादीनां प्रस्तारमूलकत्वात्प्रथमं प्रस्तार-रचनाप्रकारं श्लोकद्वयेनाह—पादे इति। तत्र प्रथमं सर्वगुरौ—सर्वे गुरवो यत्रैवम्भूते पादे लिखिते सति, प्रस्तार्यवृत्तजातिपादस्थवर्णसंख्याकसर्वगुरवः प्रथमं स्थापनीया इत्यर्थः। तत्र आद्यात्—प्रथमात्, गुरोरधः, न्यस्य—स्थापयित्वा न्यस्येदिति विधिलिङ्प्रयोगः साधीयान्। प्रथमत्वं च गुर्वपेक्षया न तु वर्णापेक्षया। अन्यथा द्वितीयभेदे आद्यगुरोरभावात् तृतीयभेदानुपपत्तिः स्यात्। तं लघुं न्यस्य यथोपरि—यथोपरिपङ्क्तौ गुरुलघ्वादयः, तथैवाधस्तन-पङ्क्तौ शेषम्—आद्यगुरोरवशिष्टम्, वर्णसंख्यापूर्तिपर्यन्तं द्वितीयादिकं गुरुं लघुं वा लिखेत्। अर्थात्—यत्रोपरि गुरुस्तत्राधस्तनपङ्क्तावपि गुरुर्लेख्यः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत्र च लघुस्तत्राधस्तनपङ्क्तौ पूर्ववल्लघुरेव लेख्यः, अमुं विधिम्—एवमेव लेखनविधिं भूयः—पुनः पुनः, चतुर्थादिपङ्क्तिषु कुर्यादित्यर्थः। ननु द्वितीया-दिपङ्क्तौ पादवर्णेष्वाद्यस्य गुरुत्वाभावे तस्याधस्तात् तृतीयादिपङ्क्तिषु किं लेख्यमित्याशङ्क्याह—ऊने इति। ऊने न्यूने शून्ये इत्यर्थः। वामतो वर्तमाने लघूनामधस्तनेषु स्थानेषु गुरूनेव, वर्णान् दद्यात्—लिखेत्। बहुवचनप्रयोगः उत्तरोत्तरपङ्क्तावपि न्यूनेषु स्थानेषु गुरुविधानार्थः। एवं च 'भूयः' शब्दस्य वीप्सार्थकत्वमिहेति फलति। तेन पुनः पुनर्गुर्वपेक्षयाद्यगुरोरधो लघुं लिखित्वा शेषमुपरिवदेव लिखित्वोने स्थाने गुरवो लेख्याः। कुतः पर्यन्तमेष विधिः प्रवर्त्य इत्याह—यावदिति। यावत्—यावत्पर्यन्तम् सर्वलघुः—सर्वे लघवो यत्र तथाभूतः पादः, भवेत्—संजायेत, तावत्कुर्यादिति। अयम्—पूर्वोक्तः प्रकारः, छन्दोविचितिः—छन्दःशास्त्रम्, तद्वेदिभिः, प्रस्तारः—प्रस्तार इति नाम्ना, समाख्यातः—कथितः। एतेन स्वकपोलकल्पितत्वं निरस्तम्। प्रस्तार्यते इति प्रस्तार इत्यन्वर्थेयं संज्ञा।

इदमत्र विशेषतो ज्ञेयं यत्सर्वासां जातीनां प्रथमो भेदः सर्वगुरुरेव सर्व-सम्मतः। प्रस्ताररचनायां स एव प्रथमं लेख्यः। तमेवाश्रित्यान्ये भेदाः संसाधनीयाः। अन्तिमो भेदश्च सर्वलघुरित्यपि सुनिश्चितम्। सर्वेषां भेदानां क्रमसंख्या प्रस्ताररचनानुरोधेन निश्चिता। संख्याया निश्चितत्तामेवोपजीव्य नष्टादयः प्रवर्तन्ते। क्रमसंख्याया अनिश्चितत्वे तु तेषां प्रवृत्तिरसंभवा स्यात्। अपि चैतदप्यवधेयं यदनेनैव प्रकारेण मात्रिकछन्दसामपि प्रस्ताररचना भवति। इयाँस्तु विशेषो यत्समकलस्य प्रथमो भेदः सर्वलघुर्वर्णवृत्तवत्, विषमकलस्य तु एकमाद्यं लघुमादाय सर्वगुरुरिति। इह विस्तरभयात् विद्यार्थिनां कृते क्लिष्टत्वान्नातीवोपयोगित्वाच्च मात्रिकछन्दोविषयकः, अर्धसमादिविषयकश्च स्त्रोंऽपि प्रस्तारादिप्रपञ्च उपेक्षितः॥ २—३॥

हिं० टी०—सर्व प्रथम जितने वर्णों का प्रस्तार निकालना हो—उतने गुरु प्रथम पंक्ति में लिखे। इसी भेद को पहला समझना चाहिये। सर्व गुरु वाली प्रथम पंक्ति के आधार पर आगे की पंक्तियों की रचना करनी चाहिये। वह प्रकार यह है कि पहली पंक्ति के पहले गुरु के नीचे आगे की पंक्ति में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लघु लिखे। उसके आगे जैसा ऊपर की पंक्ति में हो वैसा ही उतार दे। इस विधि को पुनः पुनः करता रहे। अर्थात् आगे की पंक्तियों को इसी प्रकार पूरा करे। परन्तु जो स्थान बांई ओर के न्यून रहें, उनके स्थान पर गुरु रखे। जब तक सर्वलघु पाद की प्राप्ति न हो जाय, तब तक इस विधि को करते रहना चाहिये। छन्दःशास्त्र के वेत्ता इस विधि को प्रस्तार कहते हैं।

जैसे तीसरी जाति मध्या का प्रस्तार यदि करना हो तो सब प्रथम पंक्ति में सर्वगुरुपाद अर्थात् तीन गुरु लिखें। उसके नीचे दूसरी पंक्ति में पहले गुरु के नीचे लघु लिख कर दाहनी ओर यथोपरि तथा उतार दिये तो। ऽ ऽ यह दूसरा भेद बना। इस दूसरी पंक्ति में पहला गुरु दूसरे स्थान पर है उसके नीचे लघु लिखा। दाहनी ओर ऊपर के जैसे एक गुरु उतार दिया तो। ऽ यह रूप बना। परन्तु इसमें दो ही वर्ण हुए, एक वर्ण की न्यूनता रह गई। इस न्यून स्थान की पूर्ति गुरु लिखकर की जायगी 'ऊने दद्याद् गुरूनेव' के अनुसार। तब ऽ। ऽ यह तीसरी पंक्ति बनी, यही तीसरा भेद हुआ। अब चौथी पंक्ति के लिये पहले सर्वप्रथम गुरु के नीचे लघु लिखना है। तीसरी पंक्ति में गुरु पहला ही वर्ण है। अतः उसके नीचे लघु लिख कर शेष कों यथोपरि लिख देने से।।ऽ यह चौथी पंक्ति हुई और यही तीसरी जाति का चौथा भेद है। चौथी पंक्ति में अन्तिम गुरु है, उसके नीचे लघु लिखकर दाहनी ओर के न्यून स्थानों की गुरु लिखकर पूर्ति करने से ऽ ऽ। यह पाँचवीं पंक्ति हुई और यही पाँचवाँ भेद हुआ। पाँचवीं पंक्ति के प्रथम गुरु के नीचे लघु लिखकर यथोपरि तथा नीचे उतार देने से। ऽ। यह छठी पंक्ति हुई और यही छठा भेद हुआ। छठी पंक्ति में दूसरा गुरु होने से उसके नीचे लघु लिखकर दाहनी ओर यथोपरि तथा उतार कर बाईं ओर के एक न्यून स्थान की पूर्ति के लिये गुरु लिख देने सें ऽ।। यह सातवीं पंक्ति बनी और यही सातवाँ रूप हुआ। इस सातवीं पंक्ति में प्रथम वर्ण गुरु है। वह आदि गुरु है। उसके नीचे लघु लिख कर यथोपरि तथा दोनों लघु लिख देने से।।। यह आठवीं पंक्ति हुई और यही आठवां रूप हुआ। यह आठवां रूप सर्व लघु है। अतः नियमानुसार तीन वर्णों की मध्या जाति की प्रस्तार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रचना पूरी हुई। इस प्रकार तीसरी जाति की प्रस्तार रचना का साङ्गोपाङ्ग निरूपण हो गया। आगे इसी प्रकार रचना करनी चाहिये। चार वर्णों तक की प्रस्ताररचना स्पष्टता के लिये कोष्ठक द्वारा बतलाई जाती है—

उक्ता	अत्युक्ता	मध्या	प्रतिष्ठा	
१ ऽ	१ ऽऽ	१ ऽऽऽ	१ ऽऽऽऽ	९ ऽऽऽ।
२ ।	२ ।ऽ	२ ।ऽऽ	२ ।ऽऽऽ	१० ।ऽऽ।
	३ ऽ।	३ ऽ।ऽ	३ ऽ।ऽऽ	११ ऽ।ऽ।
	४ ।।	४ ।।ऽ	४ ।।ऽऽ	१२ ।।ऽ।
		५ ऽऽ।	५ ऽऽ।ऽ	१३ ऽऽ।।
		६ ।ऽ।	६ ।ऽ।ऽ	१४ ।ऽ।।
		७ ऽ।।	७ ऽ।।ऽ	१५ ऽ।।।
		८ ।।।	८ ।।।ऽ	१६ ।।।।

प्रस्तार रचना से यह एक उपयोगी बात ज्ञात होती है कि प्रत्येक भेद के समान चारों चरण होने से कोई एक छन्द बन सकता है। यह भी मालूम हो जाता है कि एक वर्ण की जाति के दो भेद होते हैं। दो के चार तीन के आठ और चार के सोलह। इससे यह भी प्रतीत हुआ कि एक वर्ण के आगे दूने दूने भेद होते हैं। सबकी भेद-संख्या तीसरे अध्याय में जाति के प्रारम्भ में लिख दी है।

प्रस्तार रचना पर कोष्ठकों में जरा ध्यान पूर्वक ऊपर से नीचे देखने से विदित होगा कि पहली पंक्ति में एक गुरु और एक लघु क्रम से हैं। दूसरी पंक्ति में दा गुरु और दो लघु, तीसरी पंक्ति में चार गुरु और चौथी पंक्ति में आठ गुरु और लघु हैं। यही क्रम आगे भी रहेगा अर्थात् आगे आगे दुगुनी दुगनी संख्या होती जायगी। जैसे पांचवी पंक्ति में १६ गुरु और १६ लघु, छठी में ३२ गुरु और ३२ लघु इत्यादि। इस बात को जान लेने से प्रस्तार रचना अत्यन्त सरल हो जाती है। यह प्रस्तार का रहस्य है। इस रहस्य का ज्ञान हो जाने से प्रस्तार रचना अति शीघ्रता से की जा सकती है और अशुद्धि होने की सम्भावना नहीं रह जाती।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रस्तार के लिये 'भानु' कवि की–'आदि गुरुतर लघु निःशङ्क दायें नकल बायें बंक' यह उक्ति बहुत सरल और उपयोगी है

नष्टविधि :—

नष्टस्य यो भवेदङ्कस्तस्यार्द्धेऽर्द्धे समे च लः।
विषमे चैकमाधाय तस्यार्द्धेऽर्द्धे गुरुर्भवेत्॥ ४॥

सं० टी० – अथ प्रस्तारशोधनोपयोगिनष्टप्रक्रियामाह – नष्टस्य इति। 'अङ्कः' इत्यतः परं 'तत्र' इत्यध्याहार्यम्। ततश्च–नष्टस्य वृत्तस्य योऽङ्कः प्रश्नाङ्क इति यावत्। तत्र तस्मिन्, समे सति लघुर्लेख्यः। तस्य चार्द्धेऽर्द्धे कृतेऽर्द्धाङ्के समे सति लघुः, विषमे तु अर्धीकरणासंभवादेकमाधाय संयोज्य योऽङ्को जायेत तमर्धयेत्, अर्धे विषमे गुरुः, समे तु लघुर्भवेत्। तस्मिन्नप्यर्द्धिते विषमे गुरुः, समे लघुरिति। 'अर्द्धेऽर्द्धे' इत्यत्र वीप्सया विवक्षितनष्टवृत्ताक्षरसंख्यापूरणं यावत्। प्रकुर्यादित्यर्थः पर्यवस्यति। नष्टस्य–अविज्ञाततया दर्शनमुपगतस्य प्रस्ताररूपस्य संपादकतयैव विधिरपि नष्टशब्देनोच्यते। नष्टद्वारा हि प्रचारप्रक्रियां विनापि अभीष्टरूपसिद्धिरिति महत्सौकर्यम्।

तदेष विधिरुदाहरणे संगमय्य प्रदर्श्यते। यथा त्र्यक्षरे प्रस्तारे सप्तमं वृत्तं कीदृगिति प्रश्ने कृते सप्तमाङ्कस्य विषमत्वाद् गुरुं न्यस्य, पुनरेकं संयोज्य अष्टसु जातेषु तदर्धीकरणे चतुरङ्के लब्धे तस्य च समत्वात् लघुर्न्यस्तः। पुनश्चतुर्णामर्धीकरणेन द्व्यङ्के लब्धे तस्य समत्वाल्लघुरेवः। तथा चायं 'ऽ।।' इत्येवंरूपो भगणः सप्तमो भेदः। समोदाहरणे यथा चतुरक्षरप्रस्तारेऽष्टमो भेदः कीदृश इति। नष्टाङ्कः–अष्टौ, तस्य समत्वात्पूर्वं लघुः, तदर्धीकरणे चतुरङ्के पुनर्लघुः, पुनस्तदर्धीकरणेन द्व्यङ्के लब्धे तस्य समत्वात् लघुः, तस्याप्यर्धीकरणेन लब्धस्यैकाङ्कस्य विषमत्वाद् गुरुः। तथा चायं '।।।ऽ' अष्टमो भेदो निष्पन्नः।

हिं० टी०—नष्ट का अङ्क यदि सम[1] हो अर्थात् २, ४, ६, ८, १० आदि हो तो उसके स्थान पर लघु लिखना चाहिये और यदि विषम[2] हों

---

१ जो संख्या दो से पूरी (बिना शेष रहे) बँट जाय उसे सम कहते हैं।
२ जो संख्या दो से पूरी न बँट सके अर्थात् कुछ शेष रह जाय उसे विषम कहते है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् ३, ५, ७, ९, ११ आदि हो तो गुरु। इसके अनन्तर नष्ट के अङ्क का आधा करे। आधा करने से यदि सम अङ्क आवे तो लघु और विषम आवे तो गुरु। इस प्रक्रिया को तब तक किया जाना चाहिये जब तक नष्ट वृत्त के इन वर्णों की संख्या पूरी न हो जायं।

यह निश्चित है कि प्रस्तार के विषम भेद के प्रथम स्थान में गुरु और सम भेद के लघु रहता है। अत एव प्रश्नाङ्क—नष्ट अङ्क यदि विषम हो तो प्रथम स्थान गुरु, सम हो तो लघु रखना आवश्यक है। तदनन्तर प्रश्नाङ्क का आधा करना चाहिये, यदि प्रश्नाङ्क विषम हो तो एक जोड़ कर आधा किया जाना चाहिये। इससे जो अङ्क सम या विषम आवे उसके अनुसार गुरु या लघु रखना चाहिये। इस प्रकार तब तक करते जाना चाहिये जब तक नष्ट वृत्त की वर्णसंख्या पूरी न हो जाय। यदि वृत्त के वर्णों की संख्या अधिक हो और आधा करते करते एक शेष रह जाय और आगे संख्या न निकल सके तो वृत्त के जितने वर्ण रहे हों उनके स्थान पर उतने ही गुरु रख देने चाहिये। क्योंकि पूर्वोक्त प्रकार से एक विषम संख्या में एक और जोड़ देने से दो होगी और उसे दो से भाग देने पर एक ही आयगा, अतः आगे सब गुरु ही होंगे।

नष्ट की प्रक्रिया से विना प्रस्तार रचना के किसी भी वर्ण के इष्ट रूप का सरलता से ज्ञान हो जाता है। यदि हम किसी जाति के किसी भेद को जानना चाहें तो प्रस्तार रचना के द्वारा एक तो समय अधिक लगेगा तथा स्थान भी अधिक लगेगा। मान लीजिये ११ वां जाति का २२५ वां भेद लिखते बहुत समय लग जायगा और कागज का व्यय भी अत्यधिक होगा। परन्तु नष्ट के द्वारा इष्टभेद को तत्काल बतलाया जा सकता है।

स्पष्टता के लिये प्रक्रियासहित कुछ उदाहरण नीचे लिखे जाते हैं—

प्रश्न १—३ वर्णों का ७वां भेद कैसा होगा ?

प्रक्रिया—नष्टाङ्क ७ के विषम होने से प्रथम गुरु रखा। फिर ७ का आधा न हो सकने के कारण १ और जोड़कर आधा किया, चार उपलब्ध हुए और यह सम है इस लिये लघु चार का आधा दो भी सम है इस लिये तीसरे स्थान पर भी लघु रखा तो यह ऽ।। रूप हुआ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रश्नाङ्क ७, ७ + १/२ = ४, ४/२ = २

प्रश्न—चार वर्णों का आठवां भेद कैसा होगा ?

प्रक्रिया—८, ८/२ = ४, ४/२ = २, २/२ = १

स्पष्टीकरण—प्रश्नाङ्क ८ के सम होने से सर्व प्रथम लघु रखा। फिर ८ का आधा किया, ४ लब्ध भी सम है, इसलिये द्वितीय स्थान पर भी लघु लिखा, चार का आधा दो भी सम है, इसलिये तृतीय स्थान पर भी लघु ही लिखा, दो का आधा १ के विषम होने से चतुर्थ स्थान पर गुरु लिखा। इसके आगे प्रक्रिया बढ़ाने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि नष्ट भेद की वर्णसंख्या पूरी हो गई।

प्रश्न—५ वर्णों का द्वितीय भेद कैसा होगा ?

प्रक्रिया—२, २/२ = १, १ + १/२ = १, + १/२ = १

स्पष्टीकरण—प्रश्नाङ्क २ सम है। अतः प्रथम स्थान में लघु रखा। २ का आधा एक विषम है अतः द्वितीय स्थान में गुरु रखा। अभी वर्णसंख्या में ३ की कमी है क्योंकि ५ वर्णों का भेद बनाना है। अतः ५ में १ और जोड़ कर आधः करने से आगे बराबर १ आता है, जैसा कि ऊपर प्रक्रिया में दिखाया गया है—वह विषम है। इसलिये आगे के तीन स्थानों की पूर्ति ३ गुरु रख कर की गई। इसलिये ५ वर्णों का दूसरा भेद। ऽऽऽऽ यह हुआ।

नष्ट की प्रक्रिया के लिये 'भानु' कवि की निम्नलिखित उक्ति अत्यन्त सरल है—

विषम गुरु, सम लघु, मन साध, प्रश्न अंक पुनि आधौ आध।
नष्ट रचिय विषमनि एक जूर, जब लगि वृत्त वरण हों पूर ॥ ४ ॥

[1]उद्दिष्टप्रक्रिया—

उद्दिष्टं द्विगुणानाद्यानुपर्यङ्कान्समालिखेत् ।
लघुस्था ये तु तत्राङ्कास्तैः सैकैर्मिश्रितैर्भवेत् ॥ ५ ॥

---

१ उद्दिष्टस्य निर्दिष्टस्य रूपस्य संख्याप्रकाशकत्वादयं विधिरपि उद्दिष्टशब्देनोच्यते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथ प्रस्तारस्शोधनोपायमुद्दिष्टमाह—उद्दिष्टमिति । आद्यात्—प्रथमाक्षरादारभ्य चरमाक्षरपर्यन्तम्, उपरि उपरि, आद्यादेवाङ्कादारभ्य द्विगुणान् अङ्कान् लिखेत् । अर्थादाद्याक्षरोपरि एकाङ्कं लिखेत्, ततो द्वितीयाक्षरोपरि एकं द्विगुणं द्व्यङ्कं दद्यात्, तृतीयोपरि द्विद्विगुणं चतुरङ्कं, चतुर्थोपरि चतुर्द्विगुणमष्टाङ्कं विन्यसेत् । एवमन्तिमाक्षरावधि विधिं विदध्यात् । तत्र—अङ्केषु यथावल्लिखितेषु लघुस्थाः—लघ्वक्षरशिरःस्थिता येऽङ्काः तैः सैकैः—एकाधिकैः, मिलितैः—यथास्थानं योजितैरुद्दिष्टं भवेत् ।

निर्दिष्टरूपस्य संख्याज्ञानादतिरिक्तं नष्टेन प्रसाधितस्येष्टरूपस्य प्रामाणिकताप्युद्दिष्टद्वारा विज्ञायते इति बोध्यम् । अतो नष्टद्वारा साधितस्य रूपस्योद्दिष्टद्वारा संशोधनं कार्यं यथा ज्ञायेत यत्साधितं रूपं सम्यगिति ॥ ५ ॥

हिं० टी०—प्रथम वर्ण से लेकर चाहे वह लघु हो वा गुरु—अन्तिम अक्षर पर्यन्त ऊपर ऊपर एक से लेकर द्विगुण दुगने अङ्कों को लिखे । अर्थात् प्रथम वर्ण के ऊपर एक, द्वितीय के ऊपर एक के दुगने दो, तृतीय के ऊपर दो के दुगने चार, चतुर्थ के ऊपर चार के दुगने आठ, पञ्चम के ऊपर आठ के दुगने सोलह लिखे । इसी प्रकार दुगने-दुगने अङ्क लिखते जाना चाहिये । तदनन्तर लघु वर्णों के ऊपर जितने अंक हों उनको जोड़ देना चाहिये और योगफल में एक और अधिक जोड़ देने से जो संख्या हो वहीं उद्दिष्ट–निर्दिष्ट भेद की संख्या होगी । इस विधि को उद्दिष्ट कहते हैं ।

उदाहरण—

१. तीन वर्णों के प्रस्तार में ऽ । । यह आदि गुरु कितनवां भेद है ?
१ २ ४

प्रक्रिया ऽ । ।, २ + ४=६ + १=७, उत्तर सातवां भेद है ।

स्पष्टीकरण—प्रथम वर्ण के ऊपर १ अङ्क लिखा । द्वितीय के ऊपर १ का दुगना दो लिखा, तृतीय के ऊपर दो का दुगना चार लिखा । अब लघु वर्णों के ऊपर दो अंक हैं २ और ४, दोनों को जोड़ दिया ६ हुए । ६ में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१ और मिला दिया ७ हुए। यही ७ उत्तर हुआ। अर्थात् ऽ।। यह सातवां भेद है।

२ चार वर्णों के प्रस्तार का।।।ऽ यह अन्त्य गुरु कितनवां भेद है?

१२४८

प्रक्रिया—।।।ऽ, १+२+४=७+१=८, उत्तर ८वां भेद है।

विवरण—प्रथम वर्ण के ऊपर एक, द्वितीय के ऊपर एक का दुगना दो, तृतीय के ऊपर दो का दुगना चार, चतुर्थ के ऊपर चार का दुगना आठ लिखा, लघुओं के ऊपर १, २, ४ ये तीन अंक हैं। इन तीनों का योग ७ हुआ। ७ में १ जोड़ देने से ८ हुए। यही ८ उत्तर हुआ अर्थात्।।।ऽ यह चार वर्णों के प्रस्तार में ८ वां भेद है।

३ पांच वर्णों के प्रस्तार में।ऽऽऽऽ यह कितनवां भेद है?

१२४८१६

प्रक्रिया—।ऽऽऽऽ, १+१=२, उत्तर २ रा भेद है।

विवरण—प्रथम वर्ण के ऊपर १ अङ्क रखकर आगे दुगने दुगने रख देने के अनन्तर प्रतीत हुआ कि लघु १ है, उसके ऊपर १ का अङ्क है, उसमें एक और मिला देने से २ हुआ। यह २ ही उत्तर हुआ। अर्थात् उक्तरूप पञ्चाक्षर जाति के प्रस्तार में दूसरा भेद है।

इसी रीति से अन्य उद्दिष्ट भेदों की संख्या का ज्ञान कर लेना चाहिये।

उद्दिष्ट के सम्बन्ध में यह भी समझ लेना चाहिये कि जहाँ इसके लिए उद्दिष्ट रूप का ज्ञान होता है वहाँ नष्ट के द्वारा सिद्ध किये हुये रूप की शुद्धता का निर्णय भी होता है। अतः नष्ट के द्वारा इष्ट रूप बनाकर उद्दिष्ट के द्वारा उसकी जांच कर लेनी चाहिये कि क्या रूप ठीक बना है?

एकद्व्यादिलगक्रिया—

वर्णान् वृत्तभवान् सैकान्, औत्तराधर्यतः स्थितान्।
एकादिक्रमतश्चैतानुपर्युपरि निक्षिपेत्॥ ६॥
उपान्त्यतो निवर्तेत त्यजन्नेकैकमूर्ध्वतः।
उपर्याद्याद् गुरोरेवमेकद्व्यादिलगक्रिया॥ ७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सं० टी०—अथैकद्व्यादिलगक्रियामाह—वर्णानिति। वृत्तभवान्—उक्तादिवृत्त–निष्ठान्, वर्णान्–वर्णसंख्याकानङ्कान्, एकाङ्कानित्यध्याहारः, सैकान्–एकेनाधिकेन सहितान्, औत्तराधर्यतः स्थितान्—उत्तराधरभावेन स्थितान् कुर्यादित्यध्याहारेण लभ्यम्। एतान्–पूर्वस्थापितान् अङ्कान्; एकादिक्रमतः–एकद्वित्र्यादि क्रमेण, उपरि उपरि–अर्थादुपरिस्थितेऽङ्के, निक्षिपेत्–संयोजयेत्। अधस्तनमेकाङ्कं तदुपरिस्थे एकाङ्के मेलयित्वा द्व्यङ्कं कुर्यात्, द्व्यङ्कमपि तृतीयैकाङ्के संयोज्य त्र्यङ्कं कुर्यादित्येवमुत्तरोत्तरं कृत्वा योगफलं वामतो दक्षिणतो वा निधातव्यमिति भावः। ततश्च, उपान्त्यतः–अन्त्यस्य समीपमुपान्त्यम्, ततः, उपान्त्यपर्यन्तं मेलनं कृत्वा उपान्त्यमन्त्येऽमेलयित्वा, ऊर्ध्वत एकैकं त्यजन् निवर्तेत–विरमेत्। अन्त्यश्च प्रथममेलने सर्वोपरितनः, द्वितीयमेलने तदधस्तनो द्वितीयः, तृतीयमेलने तदधस्तनस्तृतीय इत्येवमुत्तरोत्तरो ज्ञेयः। उपान्त्यश्च तदधस्तनः। प्रतिमेलनम् एकं त्यक्त्वाधस्तनान्मेलयेदित्याशयः। एकैकमिति वीप्सया सर्वाधस्तनाङ्कपर्यन्तं पुनः पुनर्मेलनावृत्तिः कार्येति सूच्यते। एवं कृते सति आद्यात्–प्रथमात्, गुरोःसर्वगुरोर्भेदात्, उपरि–अनन्तरम्, एकद्व्यादिलगक्रिया–एकद्वित्र्यादीनां लघुगुरूणां क्रिया ज्ञेयेति शेषः।

प्रथममेकः सर्वगुरुः, तदधस्तनाङ्कसंख्य एकलघुः, तदधस्तनाङ्कसंख्याः, द्विलघवः, चतुर्थाङ्कसंख्या त्रिलघवः, एवं तदधस्तनाङ्कसंख्याः चतुर्लघ्वादिभेदा ज्ञेया इत्यर्थः। एवमेव प्रथमाङ्कः सर्वगुरुः, द्वितीयाङ्कः एकगुरुभेदसंख्याबोधकः, तृतीयाङ्कः द्विगुरुभेदसंख्याबोधक इत्येवमुत्तरोत्तरमेकैकं वर्धयित्वा क्रिया निर्वोढव्या। सविस्तरसमन्वयस्त्वस्याः क्रियाया हिन्दीभाषया प्रदर्श्यते इति तत एवावसेयम्॥ ६—७॥

हिं० टी०—जितने वर्णों की लगक्रिया करनी हो उतने ही १ अंक व अधिक ऊपर से नीचे, और नीचे के एक से बाईं ओर अथवा दाहिनी ओर, अथवा ऊपर के १ अंक से दाहिनी ओर अथवा बाईं ओर भी १ अधिक १ अंक लिखे। फिर क्रम से सब से नीचे के प्रथम पङ्क्ति के एक को उसके ऊपर के एक में मिला कर उसके आगे द्वितीय पंक्ति में दाहिनी या बाईं ओर रखना चाहिये। फिर उस दो को बाईं या दाहिनी ओर के एक में जोड़

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर उसकी भी उसके आगे दूसरी पंक्ति में लिखना चाहिये। इस प्रकार तिरछे तिरछे अंक जोड़ कर दाहिनी या बाईं ओर दूसरी पंक्ति को पूरा करना चाहिये परन्तु अंत में एक अंक को छोड़ देना चाहिये अर्थात् अन्त के समीप के अंक को अन्तिम अंक में न मिलया जाना चाहिये। इसी प्रकार तीसरी पंक्ति को दूसरी पंक्ति के जोड़ से पूरा करना चाहिये। सबसे नीचे का १ अंक ऊपर से नीचे तथा दाहिनी से बाईं अथवा बाईं से दाहिनी ओर के अंकों की संख्या को पूर्ण करता है। पर ध्यान रहे कि अन्त में एक एक छूटता जाय अर्थात् प्रत्येक पिछली पंक्ति में एक एक अंक कम होता जायगा। इस प्रकार प्रक्रिया कर प्रत्येक पंक्ति का अन्तिम अङ्क एकत्र लिख देना चाहिये। यही अंक लगक्रिया के अंक होंगे।

उनमें प्रथम अंक १ होगा। वह सर्वगुरु भेद का सूचक होगा। दूसरा अंक एक लघु वाले, तीसरा अङ्क दो लघु वाले, चौथा अङ्क तीन लघु वाले और पाँचवां अङ्क चार लघु वाले भेदों का सूचक होगा। इसी प्रकार आगे भी समझ लेना चाहिये। अन्तिम अङ्क भी १ होगा जोकि सर्व लघु भेद का सूचक होगा। यह पहले कहा जा चुका है कि पहला भेद सर्वगुरु, अन्तिम भेद सर्वलघु होता है।

इस क्रिया को स्पष्ट करने के लिए नीचे कुछ कोष्ठक दिये जाते हैं—

६ वर्णों की एक द्व्यादिलगक्रिया।

पहला प्रकार

१	१	१	१	१	१	१
१	२	३	४	५	६	
१	३	६	१०	१५		
१	४	१०	२०			
१	५	१५				
१	६					
१						

दूसरा प्रकार

सर्व गुरु ऽऽऽऽऽऽ							१
पाँच गुरु ऽऽऽऽऽ।						६	१
चार गुरु ऽऽऽऽ।।					१५	५	१
तीन गुरु ऽऽऽ।।।				२०	१०	४	१
दो गुरु ऽऽ।।।।			१५	१०	६	३	१
एक गुरु ऽ।।।।।		६	५	४	३	२	१
सर्व लघु ।।।।।।	१	१	१	१	१	१	१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तृतीय प्रकार

१						
१	६					
१	५	१५				
१	४	१०	२०			
१	३	६	१०	१५		
१	२	३	४	५	६	
१	१	१	१	१	१	१

चतुर्थ प्रकार

१	१	१	१	१	१	१
	६	५	४	३	२	१
		१५	१०	६	३	१
			२०	१०	५	१
				१५	५	१
					६	१
						१

इन चारों प्रकारों से लगक्रियांक १, ६, १५, २०, १५, ६, १ निकलते हैं। इस कोष्ठक से विदित हुआ कि ६ वर्णों के छन्दों में—

१ छन्द ६ गुरु का होगा (सर्वगुरु)
६ छन्द ५ गुरु और १ लघु वाले होंगे।
१५ छन्द ४ गुरु और २ लघु वाले होंगे।
२० छन्द ३ गुरु और ३ लघु वाले होंगे।
१५ छन्द २ गुरु और ४ लघु वाले होंगे।
६ छन्द १ गुरु और ५ लघु वाले होंगे।
१ छन्द ६ लघु वाला अर्थात् सर्वलघु होगा।

कोष्ठकों में अंकों को जोड़ने का प्रकार—पहली पंक्ति में १ सात बार रख दिया। दूसरी में १ + १ = २, २ + १ = ३, ३ + १ = ४, ४ + १ = ५, ५ + १ = ६। तीसरी पंक्ति में—१ + २ = ३, ३ + ३ = ६, ६ + ४ = १०, १० + ५ = १५। चौथी पंक्ति में—१ + ३ = ४, ४ + ६ = १०, १० + १० = २०। पांचवीं में—१ + ४ = ५, ५ + १० = १५। छठी में—१ + ५ = ६। सातवीं में केवल एक। चारों प्रकार के कोष्ठकों में अंक जोड़ने का यही ढंग रहेगा। जोड़ना किनारे से ही होगा।

यहाँ पर यह ध्यान देने की बात है कि पहले वर्ण की लगक्रिया को एक अंक और लिख कर बढ़ा देने से आगे आगे के वर्णों की एकद्व्यादिलगक्रिया के अंक निकल आते हैं तथा अन्त के अंक छोड़ देने से पुनः जो अंक अन्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में रह जाते हैं वे पिछले वर्णों की लगक्रिया के अंक निकल आते हैं। जैसे उपर्युक्त कोष्ठकों में अन्त के १, ६, १५, २०, १५, ६, १ अङ्कों को छोड़ दिया जाय तो १, ५, १०, १०, ५, १ अङ्क निकलेंगे। ये अङ्क पाँच वर्णों के छन्दों के होंगे।

इस क्रिया के द्वारा लघु गुरु संख्या वाले भेदों की संख्या का ज्ञान होता है, अत एव इसे 'एकद्व्यादिलगक्रिया' कहते हैं। इस क्रिया को मेरु भी कहते हैं क्योंकि इसके करने में अङ्कों का पहाड़ सा बन [1]जाता है॥ ६–७॥

---

१ भास्कराचार्य ने लीलावती में लगक्रिया का एक अन्य प्रकार यह बताया है कि जितने वर्णों के छन्दों की लगक्रिया करनी हो उतने अङ्क एक से लेकर क्रम से एक पङ्क्ति में लिख दे। उनके ऊपर उलटे अङ्क रख दे और उनके पहले एक अङ्क रख दे। फिर तिर्यग् गति से ऊपर के अङ्क से नीचे के अङ्क को गुणा करे और तीसरी लाइन में स्थितक्रम संख्या के अङ्कों से भाग देता चला जाय। इस प्रकार को कोष्ठक के द्वारा स्पष्ट किया जाता है—

१	६	१५	२०	१५	६	१
	६	५	४	३	२	१
	१	२	३	४	५	६

प्रक्रिया—$\frac{\text{१} \times \text{६}}{\text{१}} = \text{१}$, $\frac{\text{६} \times \text{५}}{\text{२}} = \text{१५}$, $\frac{\text{१५} \times \text{४}}{\text{३}} = \text{२०}$, $\frac{\text{२०} \times \text{३}}{\text{४}} = \text{१५}$,

$\frac{\text{१५} \times \text{२}}{\text{५}} = \text{६}$, $\frac{\text{६} \times \text{१}}{\text{६}} = \text{१}$।

इस प्रकार लगक्रिया के १, ६, १५, २०, १५, ६, १ अङ्क निकल आये। भेदों का प्रकार हिन्दी टीका में समझा दिया गया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संख्याविधिः—

> लगक्रियाङ्कसन्दोहे भवेत्संख्या विमिश्रिते।
> उद्दिष्टाङ्कसमाहारः सैको वा जनयेदिमाम्॥ ८॥

सं० टी०—अथ क्रमप्राप्तां संख्यामाख्याति—लगक्रियेति। लगक्रियायां पूर्वोक्तायां सिद्धा येऽङ्काः, ते लगक्रियाङ्काः, तेषां सन्दोहे—समुदाये, विमिश्रिते संयोजिते सति योऽङ्कः फलति, सा संख्या भवेत्। संख्याया द्वितीयप्रकार-माह—उद्दिष्टाङ्केति। वा—अथवा, पूर्वोक्तानाम्, उद्दिष्टाङ्कानाम्, समाहारः—संमेलनम्, योगः, सैकः—एकाधिकः, इमां संख्यां जनयेत्—साधयेत्। उद्दिष्टाङ्कान् संयोज्यैकमधिकं पुनस्तत्र मिश्रयित्वा फलितोऽङ्कः संख्या भवतीत्यर्थः।

तद्यथा प्रथमप्रकारे—त्र्यक्षरवृत्तानां लगक्रियाङ्काः, १, २, ३, १ एक-द्वित्र्येकरूपाः सन्ति। एतेषां संयोजनेऽष्टौ सम्पद्यन्ते। एवं च त्र्यक्षरप्रस्तार-स्याष्टौ भेदसंख्येति पर्यवस्यति। त्र्यक्षरजातेः सर्वे भेदा अष्टौ भवन्तीति संख्यया बोधितो निर्गलितोऽर्थः। एवं चतुरक्षरवृत्तानां लगक्रियाङ्काः १, ४, ६, ४, १ इत्येते सन्ति। एतेषां संकलनेन १६ षोडश संख्या सम्पद्यते। एता-वन्त एव भेदाश्चतुरक्षरजातेः सर्वे भवन्तीति सिद्ध्यति। एवमेव षडक्षरजातेः १, ६, १५, २०, १५, ६, १ इत्येतेषां लगक्रियाङ्कानां संकलनेन ६४ चतु-ष्षष्टिः संख्या जायते या षडक्षरजातेः सर्वेषां भेदानां पूर्णा संख्या वर्तते। द्वितीयप्रकारे—त्र्यक्षरोद्दिष्टाङ्काः १, २, ४ एकद्विचतूरूपाः। संयोजने सप्त, एकेनाधिकमिते अष्टौ ८। एषैव संख्या। चतुरक्षरोद्दिष्टाङ्काः १, २, ४, ८ एकद्विचतुरष्टरूपाः, संयोजने पञ्चदश १५, एकमधिकं क्षिप्त्वा षोडश १६ संख्या जायते। षडक्षरजात्युद्दिष्टाङ्काः १, २, ४, ८, १६, ३२ एतेषां संयोजनेन त्रिषष्टिः ६३, एकेनाधिकमिते ६४ चतुष्षष्टिः संख्या॥ ८॥

हिं० टी०—एकद्व्यादिलगक्रिया के फलित अङ्कों को जोड़ देने से जो योगफल के अङ्क होते हैं वह संख्या होती है। अथवा—उद्दिष्ट के अङ्कों के योगफल में एक अधिक जोड़ देने से भी संख्या निकल आती है।

जैसे तीन वर्णों के लगक्रिया के अङ्क १, ३, ३, १ जोड़ देने से—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुआ। यही ८ संख्या है अर्थात् तीन वर्णों के कुल ८ भेद बनते हैं। इसी प्रकार ४ वर्णों के लगक्रिया के १, ४, ६, ४, १ अङ्क हैं। इनको जोड़ देने से १६ संख्या हुई। ६ वर्णों के लगक्रिया अङ्क १, ६, १५, २०, १५, ६, १ हैं। इनको जोड़ देने से ६४ निकला और यही संख्या हुई।

दूसरे प्रकार के अनुसार तीन अक्षर की जाति के उद्दिष्टांक १, २, ४ के योगफल ७ में एक जोड़ दिया तो ८ संख्या निकल आई। इसी प्रकार ४ अक्षर के उद्दिष्टांक १, २, ४, ८ के योगफल १५ में १ जोड़ देने से १६ फल निकल आता है।

संख्या प्रत्यय के द्वारा ज्ञात होता है कि इतने वर्ण वाले कुल इतने छन्द होते हैं। संख्या और संख्यान का तात्पर्य एक ही है, इसको 'सूची' भी कहते हैं। पूर्ण संख्या को सूचित करने से इसे सूची कहा जाता है॥ ८॥

अध्वयोगविधि:—

संख्यैव द्विगुणैकोना सद्भिरध्वा प्रकीर्तितः।
वृत्तस्याङ्गुलिकी व्याप्तिरधः कुर्यात्तथाङ्गुलिम्॥ ९॥

सं० टी०—अथाध्वयोगमाचष्टे—संख्यैवेति। संख्या—समादिवृत्तानां तत्तज्जातिषु या पूर्वमुक्ता सा, द्विगुणा–द्विगुणीकृता, एकोना–एकेन ऊना हीना कृता। सैव संख्या, सद्भिः–प्रस्तारादिविधिज्ञैः अध्वा—वृत्तप्रस्तारव्याप्यः प्रदेशः प्रकीर्तितः–उक्तः। उक्तमर्थमुपपत्त्या साधयति—वृत्तस्येति। वृत्तस्य–वृत्तप्रस्तारस्य, व्याप्तिः–स्थापनप्रदेशः, आङ्गुलिकी–अङ्गुलिपरिमिता, अस्तीति शेषः। तथा अधः–वृत्ताधः, अङ्गुलिम्–अङ्गुलिमितं प्रदेशम्, कुर्यात् रिक्तमिति शेषः। अयमाशयः–गुरुलघवः प्रस्तारलेखनेऽङ्गुलायामाः कर्तव्या एव। तदधस्तात् चाङ्गुलिपरिमितं स्थानं द्वितीयपङ्क्तेः प्रागवश्यं त्यक्तव्यम्, येन स्पष्टता स्यात्। अतः प्रत्येकं पङ्क्तेरधस्ताद् रिक्तस्थानसत्त्वादुक्तप्रकारेण द्विगुणैकोनसंख्यापरिमितं स्थानं प्रस्तारलेखनायापेक्ष्यते। न च रिक्तं स्थानं व्यर्थमेवेत्याशङ्क्यम्, उद्दिष्टाङ्कलेखनाय तदुपयोगसत्त्वात्। एवं चाध्वयोगस्य निष्फलत्वं वदन्तो भ्रान्ता एवेति बोध्यम्। तदेतदग्रे हिन्दीटीकास्थकोष्ठकेन स्पष्टीभविष्यति॥ ९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिं० टी०—छन्द की संख्या को दुगना करके एक घटा देने से जो शेष रहे, उसे छन्दःशास्त्रवेत्ताओं ने 'अध्वयोग' कहा है।

अध्वा का निष्कृष्टार्थ है वृत्त के प्रस्तार लिखने के योग्य स्थान। क्योंकि छन्द के प्रस्तार लिखते समय एक भेद के लिये एक चौथा स्थान चाहिये और एक अंगुल स्थान उसके नीचे या ऊपर उद्दिष्ट के अङ्क लिखने के लिये रिक्त छोड़ना आवश्यक है। इस प्रकार प्रत्येक भेद के लिये एक अंगुल स्थान उसके नीचे या ऊपर खाली रहेगा। अतः सम्पूर्ण भेदों की संख्या से दुगुना स्थान लगेगा। परन्तु प्रथम भेद सर्व गुरु होता है यह निश्चित है; अतः उसके लिये उद्दिष्टाङ्क लिखने की आवश्यकता नहीं। अतः दुगुने में एक स्थान कम लगेगा। यहाँ पर यह अवश्य कहा जा सकता है कि सर्व लघु अन्तिम भेद होता है यह जब निश्चित ही है फिर उसके लिये भी उद्दिष्टाङ्कों की आवश्यकता नहीं अतः एक स्थान और कम होना चाहिये। परन्तु ध्यान रहे कि सर्व लघु अन्तिम भेद है इतना ही ज्ञात हो सकता है? यह तो बिना उद्दिष्ट के अङ्कों के मालूम हो सकता है। अतः उसके लिये भी उद्दिष्टाङ्कों की आवश्यकता है। सर्व गुरु तो पहला भेद है यह सर्व विदित है। अस्तु तीन वर्णों के प्रस्तार का 'अध्वयोग' नीचे कोष्ठक के द्वारा समझाया जाता है। उसी के जैसे अन्य वर्णों का 'अध्वयोग' निकलेगा ॥ ९ ॥

तीन वर्णों के प्रस्तार का अध्वयोग।

१	। ऽ ऽ	प्रस्तारस्थानम्	८		रिक्त स्था०
२		रिक्तस्थानम्	९	ऽ ऽ ।	प्र० स्था०
३	। ऽ ऽ	प्र० स्था०	१०		रि० स्था०
४		रि० स्था०	११	। ऽ ।	प्र० स्था०
५	ऽ । ऽ	प्र० स्था०	१२		रि० स्था
६		रि० स्था०	१३	ऽ । ।	प्र० स्था०
७	। । ऽ	प्र० स्था०	१४		रि० स्था०
			१५	। । ।	प्र० स्था०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ग्रन्थोपसंहारः—

वंशेऽभूत्कश्यपस्य प्रकटगुणगणः शैवसिद्धान्तवेत्ता
विप्रः पव्येकनामा विमलतरमतिर्वेदतत्त्वार्थबोधे ।
केदारस्तस्य सूनुः शिवचरणयुगाराधनैकाग्रचित्त-
श्छन्दस्तेनाभिरामं प्रविरचितमिदं वृत्तरत्नाकराख्यम् ॥ १० ॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

समाप्तश्चायं वृत्तरत्नाकरः ।

सं० टी०—संप्रति निर्वृत्तप्रतिज्ञाभारी ग्रन्थकारः स्ववंशकीर्तनपूर्वकं ग्रन्थमुपसंहरति—वंशे इति । कश्यपस्य तदाख्यस्य महर्षेः, वंशे—अन्वये, गोत्रे, प्रकटगुणगणः—प्रकटः प्रख्यातः, गुणानां विद्वत्तादीनां गणः समूहो यस्य तादृशः, शैवसिद्धान्तवेत्ता—शिवो महादेवः पूज्येष्टदेवो येषां ते शैवाः, तेषां सिद्धान्तानां वेत्ता, ज्ञाता, शैवशास्त्ररहस्यवेत्तेत्यर्थः, अथवा—शैवाः—शिवदेवताकशास्त्रसम्बन्धिनो ये सिद्धान्ता इति व्याख्येयम् । वेदानाम् ऋगादीनां तत्त्वार्थस्य बोधे ज्ञाने, विमलतरमतिः—विमलतरा अकलुषिता, भ्रान्तिरहिता, अतिशयेन निर्मला मतिर्बुद्धिर्यस्य सः, पव्येकनामा, विप्रः—ब्राह्मणः, अभूत् । तस्य—पव्येकनाम्नो विप्रस्य, सूनुः पुत्रः, शिवचरणयुगस्याराधने एकाग्रम् एकतानम्, चित्तं यस्य सः, सततशिवाराधनरत—इत्यर्थः । केदारः—एतन्नामा, अस्तीति शेषः । तेन केदारेण इदम् अभिरामम् अभिरमयति आनन्दयति आकर्षति जनानां मनांसि इति अभिरामम्—रमणीयम्, संक्षेपेण लक्ष्यलक्षणयोरभिधानात् श्रोतृप्रवृत्तिजनकतया ग्रन्थान्तरेभ्योऽतिशयशालि, वृत्तरत्नाकर इत्याख्या संज्ञा यस्य तत्, छन्दः—छन्दःप्रतिपादको ग्रन्थः प्रविरचितम्—निर्मितम् । विरचिते प्रकृष्टता समाप्तिसंसूचनार्थेति बोध्यम् ॥ १० ॥

हिं० टी०—कश्यप महर्षि के वंश में—कश्यपगोत्र में—विख्यात गुणों वाला, शैवसिद्धान्त का ज्ञाता, वेदों के तत्त्वार्थ ज्ञान में निर्भ्रान्त बुद्धिवाला पव्येक नाम का ब्राह्मण हुआ । उसका लड़का केदार है जो सदा भगवान्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शङ्कर के चरणयुगल की एकाग्रचित्त से आराधना करता है। उसने इस 'वृत्तरत्नाकर' नामक छन्दोबोधक ग्रन्थ को बनाया है ॥ १० ॥

युगभक्तिद्रव्यचन्द्रप्रमिते तु विक्रमाब्दे।
वैशाखमासि शुक्ले पक्षे दिने बुधे च ॥
प्रतिपत्तिथौ शुभायां सुसमापिता समोदम्।
भाषानुवादसहिता खलु प्राज्ञतोषिणीयम् ॥
विदुषां हृदम्बुजानि प्रविकाशयत्वजस्रम्
सन्तोषमाप्नुयाच्च स्वान्तेषु छात्रसंघः।
परितोषमल्पमपि चेत् जनयेदियं कृतिर्मे
प्राज्ञप्रकाण्डहृत्सु सफलामिमां हि मंस्ये।

इति षष्ठोऽध्यायः।

इति गढ़वालमण्डलान्तर्गतश्रीनगरोपवर्ति खोला ग्रामवास्तव्येन
घिल्डियालोपाह्वश्रीमत्पण्डितजीवानन्दशर्म्मदैवज्ञरत्नतनुजनुषा
व्याकरणसाहित्याचार्यश्रीधरानन्दशास्त्रिणा प्रणीता
हिन्दीभाषान्विता प्राज्ञतोषिणीसमाख्या
वृत्तरत्नाकरव्याख्या समाप्ता।

इति शुभम्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छन्दोऽनुक्रमणिका

अ

१ अचलधृति मा० स०
२ अनंगक्रीडा ,, ,,
३ अपरान्तिका मा० अ० स० (वै)
४ अपरवक्त्र व० अ० स०
५ अपराजिता व० स० १४
६ अपवाह व० स० २६
७ अमृतधा·ा व० वि०
८ अश्वललित व० स० २३
९ असम्बाधा व० स० ६४

आ

१० आपीड व० वि०
११ आपातलिका मा० अ० स० (वै)
१२ आख्यानकी व० अ० स०
१३ आर्या मा० वि०
१४ आर्यागीति मा० अ० स०

इ

१५ इन्द्रवज्रा व० स० ११
१६ इन्द्रवंशा ,, ,, १२

उ

१७ उज्ज्वला व० स० १२
१८ उद्‌गता व० वि०
१९ उद्‌गीति मा० वि०
२० उद्धर्षिणी मा० स० १४
२१ उद्दामशंख व० स० दं०
२२ उदीच्यवृत्ति मा० अ० स० (वै)
२३ उपगीति ,, ,, ,,
२४ उपजाति व० स० ११
२५ उपस्थित ,, ,, ११. १३
२६ उपस्थितप्रचुपित व० वि०
२७ उपस्थिता व० स० १०
२८ उपचित्र व० अ० स०
२९ उपचित्रा मा० स०
३० उपेन्द्रवज्रा व० स० ११

ऋ

३१ ऋषभगजविलसितम् व० स० १६

ए

३२ एला व० स० १५

औ

३३ औपच्छन्दसिकम् मा० अ० स०

क

३४ कन्या व० स० ४
३५ कलिका व० वि०
३६ कुमारललिता व० वि० ७
३७ कामक्रीडा व० स० १५
३८ कुसुमविचित्रा व० स० १२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३९ कुसुमितलतावेल्लिता व० स० १८
४० केतुमती व० अ० स०
४१ कोकिलक व० स० १७
४२ क्रौञ्चपदा व० स० २५

ख

४३ खंजा मा० स०

च

४४ चण्डवृष्टिप्रपात व० स० दण्डक
४५ चन्द्रलेखा ,, ,, १५
४६ चन्द्रवर्त्म ,, ,, १२
४७ चन्द्रिका ,, ,, १३
४८ चम्पकमाला ,, ,, १०

(रुक्मवती)

४९ चपला आर्या
५० चपलावक्त्र
५१ चारुहासिनी मा० अ० स० (वै)
५२ चित्रा मा० स०
५३ चित्रपदा व० स० ८
५४ चित्रलेखा

ज

५५ जघनचपला आर्या
५६ जलधरमाला व० स० १२
५७ जलोद्धतगति व० स० १२

त

५८ तन्वी व० स० २४
५९ तनुमध्या व० स० ६
६० तविपुला वक्त्र
६१ तामरस व० स० १२
६२ तोटक व० स० १२
६३ त्वरितगति

द

६४ दक्षिणान्तिका मा० अ० स० (वै)
६५ दोधक व० स० ११
६६ द्रुतमध्या व० अ० स०
६७ द्रुतविलम्बित व० स० १२

न

६८ नवमालिका व० स० १२
६९ नविपुला वक्त्र
७० नारी व० स० ३
७१ नर्कुटक व० स० १७
७२ पंक्ति व० स० ५
७३ पञ्चचामर व० स० १६
७४ पणव ,, ,, १७
७५ पथ्या आर्या
७६ पथ्यावक्त्रा
७७ पदचतुरूर्ध्व व० वि०
७८ पादाकुलक मा० स०
७९ पुट व० स० १२
८० पुष्पिताग्रा व० अ० स०
८१ पृथ्वी व० स० १७
८२ प्रचितकसमभिध व० स० द०
८३ प्रभद्रक व० स० १५
८४ प्रभा ,, ,, १३
८५ प्रमाणिका वा० स० ८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

८६ प्रमिताक्षरा „ „ १२
८७ प्रमुदितवदना „ „ „
८८ प्रवृत्तक मा० अ० स० (वै)
८९ प्रहरणकलिका वा० स० १४
९० प्रहर्षिणी „ „ १३
९१ प्राच्यवृत्ति मा० अ० स० (वै)
९२ प्रियम्वदा व० स० १२
९३ भद्रक „ „ „
९४ भद्रविराट् व० अ० स०
९५ भद्रिका व० स० ११
९६ भविपुला ५६
९७ भुजंगप्रयात व० स० १२
९८ भुजंगविजृम्भित „ „ २६
९९ भुजगशिशुसृता „ „ ९
१०० भुजंगसंगता
१०१ भ्रमरविलसित „ „ ११

म

१०२ मञ्जुभाषिणी व० स० १२
१०३ मणिगुणनिकर „ „ १५
१०४ मणिमाला „ „ १२
१०५ मत्तमयूर „ „ १३
१०६ मत्तमातंगलीलाकर व०स०८९
१०७ मत्ता „ „ १०
१०८ मत्ताक्रीडा „ „ २३
१०९ मदलेखा „ „ ७
११० मधु „ „ ७
१११ मन्दाक्रान्ता „ „ १७
११२ मनोरमा „ „ १०
११३ मयूरसारिणी „ „ १०
११४ माणवक „ „ ८
११५ मात्रासमक मा० स०
११६ मालती व० स० १२
११७ मालिनी व० स० १५
११८ मुखचपला आर्या
११९ मृगी व० स० ३
१२० मेघविस्फूर्जिता „ „ १९
१२१ मौक्तिकदाम „ „ १२
१२२ मौक्तिकमाला „ „ ११

य

१२३ यवमती व० अ० स०
१२४ युग्मविपुला वक्त्र

र

१२५ रथोद्धता व० स० ११
१२६ रविपुला वक्त्र
१२७ रुक्मवती व० स० १०
१२८ रुचिरा „ „ १३
१२९ रुचिरा मा० स०

ल

१३० लवली व० वि०
१३१ ललित „ „
१३२ ललिता व० स० १२

व

१३३ वर्धमान व० वि०
१३४ वसन्ततिलका व० स० १४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१३५ वसुमती व० स० ६
१३६ वाणिनी ,, ,, १६
१३७ वातोर्मी ,, ,, ११
१३८ वानवासिका मा० स०
१३९ वितान व० स० ८
१४० विद्युल्लेखा ,, ,, ६
१४५ विद्युन्माला ,, ,, ८
१४६ विपुला आर्या
१४७ विपरीतपथ्यावक्त्र
१४८ विपरीताख्यानकी व० अ० स०
१४९ विभावरी व० उ० १२
१५० विश्लोक मा० स०
१५१ वृत्त व० स० २०
१५२ वृत्ता ,, ,, ११
१५३ वेगवती व० अ० स०
१५४ वैतालीय मा० अ० स०
१५५ वैश्वदेवी व० स० १२
१५६ वंशपत्रपतितम् ,, ,, १७
१५७ वंशस्थवृत्तम् ,, ,, १२
१५८ वक्त्र

श

१५९ शशिकला व० स० १५
१६० शशिवदना ,, ,, ६
१६१ शार्दूलविक्रीडित ,, ,, ४९
१६२ शालिनी ,, ,, ११
१६३ शिखा मा० स०
१६४ शिखरिणी व० स० १७
१६५ शुद्धविराट् ,, ,,
१६६ शुद्धविराट्ऋषभ व० वि
१६७ श्येनिका व० स० ११
१६८ श्री ,, ,, १
१६९ श्री ,, ,, ११

स

१७० समानिका व० स० ८
१७१ सुमुखी ,, ,, ११
१७२ सुवदना ,, ,, २०
१७३ सौरभक व० वि०
१७४ स्त्री व० स० २
१७५ स्रक् ,, ,, १५
१७६ स्रग्धरा ,, ,, २१
१७७ स्रग्विणी ,, ,, १२
१७८ स्वागता ,, ,, ११

ह

१७९ हरिणप्लुता व० अ० स०
१८० हरिणी व० स० १७
१८१ हलमुखी ,, ,, ९
१८२ हंसगति
१८३ हंसरुत ,, ,, ८

क्ष

१८४ क्षमा व० स० १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राज्ञप्रश्नोत्तरमाला ।

Paper IV 1928 (१९२८)

(विद्यार्थी नीचे लिखे सब प्रश्नों के उत्तर अपनी इच्छानुसार संस्कृत या हिन्दी में लिख सकते हैं, परन्तु लक्षण और प्रमाण संस्कृत में ही होने चाहिये ।)

VI प्र०—वृत्तरत्नाकरम्—इस शब्द का विग्रह और अर्थ क्या है ? इसका कर्ता कौन है और ग्रन्थ परिमाण कितना है ? इसमें कहे गये दो प्रकार के लौकिक छन्द आपस में किस तरह का भेद रखते हैं ? यह बताकर मगण आदिक गणों का तथा आर्यादि छन्दों में आने वाले पांच गणों का आकार लक्षण गुरु लघु रूप में लिखो । 10

VI उ०—वृत्तरत्नाकरम्—'वृत्तानि श्रीप्रभृतीनि छन्दांसि एव रत्नानि, तेषाम् आकरः समूहः यत्र तत् 'वृत्तरत्नाकरं' नाम छन्दःप्रतिपादनपरं पुस्तकम् ।' अर्थात् वृत्त श्रीप्रभृति छन्द रूपी रत्नों का समूह। वृत्तरत्नाकर पुस्तक में रत्नों के सामान उत्तमोत्तम वृत्तों का लक्ष्य-लक्षण पूर्वक निरूपण किया गया है, इसलिये इसका नाम 'वृत्त-रत्नाकर' रखा गया। इस ग्रन्थरत्न के कर्ता केदारभट्ट हुए हैं। ग्रन्थकर्ता ने इसको छः अध्यायों में समाप्त किया है। ग्रन्थ का सम्पूर्ण पाठ १३६ श्लोकों में पूर्ण हो पाया है जैसा कि उन्होंने ही कहा है—

'षडध्यायनिबद्धस्य छन्दसोऽस्य परिस्फुटम् ।
प्रमाणमपि विज्ञेयं षट्त्रिंशदधिकं शतम् ॥' (वृत्त० १।५)

लौकिक छन्द मात्रा और वर्ण भेद से दो प्रकार का होता है। जैसा कि कहा है—

'पिङ्गलादिभिराचार्यैर्यदुक्तं लौकिकं द्विधा ।
मात्रावर्णविभेदेन छन्दस्तदिह कथ्यते ॥' (वृत्त० १।४)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मगण आदि आठ गणों का स्वरूप इस प्रकार है—

मगण	यगण	रगण	सगण	तगण	जगण	भगण	नगण
ऽऽऽ	।ऽऽ	ऽ।ऽ	।।ऽ	ऽऽ।	।ऽ।	ऽ।।	।।।
सर्वगुरु	आदिलघु	मध्यगुरु	अन्तगुरु	अन्तलघु	मध्यगुरु	आदिगुरु	सर्वगुरु

छन्दोमञ्जरी में इन गणों का स्वरूप सरलता से बताया गया है—

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः॥

आर्यादि मात्रिक छन्दों में चतुर्मात्रिक पांच गण होते हैं। उनका स्वरूप इस प्रकार है—

सर्वगुरु	अन्तगुरु	मध्यगुरु	आदिगुरु	चतुर्लघु
ऽऽ	।।ऽ	।ऽ।	ऽ।।	।।।।

VII प्र०—निम्न-लिखित छन्द किस २ जाति में आते हैं यह दिखाकर उनके लक्षण संस्कृत में और लक्षणार्थ हिन्दी भाषा में संक्षेप से लिखो:— मुखचपला, औपच्छन्दसिकम्, पादाकुलकम्, रुचिरा, मधुमती, मत्ता, उपेन्द्रवज्रा, चन्द्रवर्त्म, भुजङ्गप्रयातम्, मत्तमयूरम्, शिखरिणी, स्रग्धरा, पुष्पिताग्रा।

VII उ०—**मुखचपला**—यह छन्द आर्या में आता है। लक्षण—

'आद्यं दलं समस्तं भजेत लक्ष्म चपलागतं यस्याः।
शेषे पूर्वजलक्ष्मा मुखचपला सोदिता मुनिना॥' (पृ० २६)

जिस आर्या का पूर्वार्द्ध चपला के सम्पूर्ण लक्षण से युक्त हो और उत्तरार्द्ध आर्या पथ्या व विपुला के सामान्य लक्षण से युक्त हो उसे मुखचपला कहते हैं।

औपच्छन्दसिक—यह छन्द वैतालीय प्रकरण का है। लक्षण—

'पर्यन्ते र्यौ तथैव शेषं त्वौपच्छन्दसिकं सुधीभिरुक्तम्। (पृ० ४०)

जिस वैतालीय के अन्त में—अर्थात् विषम चरणों में ६ मात्राओं के और सम चरणों में ८ मात्राओं के बाद रगण और यगण हों तो उसे छन्दशास्त्र के विद्वान् 'औपच्छन्दसिक' छन्द कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पादाकुलक—यह छन्द मात्रासमक प्रकरण का है। लक्षण—
'यदतीतकृतविविध०—' (पृ० ७०)

पूर्वोक्त मात्रासमकादि छन्दों के चरणों से जिस छन्द की रचना की गई हो, जिसके चारों चरण एक लक्षण से युक्त न हों तथा हों सोलह सोलह मात्रा के ही उस छन्द को पादाकुलक कहते हैं। जैसा कि इसी लक्षण वाक्य में—प्रथम पाद में मात्रासमक विश्लोक चित्रा का, द्वितीय में विश्लोक उपचित्रा का, तृतीय में मात्रासमक वानवासिका का, चतुर्थ में उपचित्रा विश्लोक का लक्षण मिश्रित पाया जाता है।

रुचिरा—यह छन्द तेरह अक्षरों वाली अतिजगती है। लक्षण—
'चतुर्ग्रहैरिह रुचिरा ज्भौ सरौ गः' (पृ० १२६ नोट १)

जिस पद्य के प्रतिचरण में क्रम से जगण, भगण, सगण और रगण हो तथा चार नौ पर यति हो तो उस छन्द का नाम रुचिरा होता है।

मधुमती—यह ७ अक्षरों वाले उष्णिक् में है। लक्षण-'मधु यदि ननगाः' (पृ० ८६ नोट १)

यदि प्रत्येक पाद में नगण, नगण तथा एक गुरु हो तो उसको 'मधु' या 'मधुमती' कहते हैं।

मत्ता—यह छन्द १० अक्षरों वाली पंक्ति में है। लक्षण—
'ज्ञेया मत्ता मभसगयुक्ता' (पृ० ६८)

जिस पद्य के प्रत्येक पाद में मगण, भगण, सगण और अन्त में गुरु हो तो उसे 'मत्ता' नामक छन्द कहते हैं। इस छन्द में चार और छः वर्णों पर यति होती है।

उपेन्द्रवज्रा—यह छन्द ११ अक्षरवाली त्रिष्टुप् जाति में है। लक्षण-
'उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ' (पृ० १०१)

जिस पद्य के प्रत्येक पाद में जगण, तगण, जगण तथा दो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गुरु हों तो उसे 'उपेन्द्रवज्रा' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है।

चन्द्रवर्त्म—यह छन्द १२ अक्षर वाली जगती जाति में है। लक्षण—
'चन्द्रवर्त्म गदितं तु रनभसैः' (पृ० ११३)

जिस पद्य के प्रत्येक चरण में रगण, नगण, भगण, सगण हो तो उस छन्द को 'चन्द्रवर्त्म' कहते हैं। इसके चार और आठ वर्णों पर यति होती है।

भुजङ्गप्रयात यह छन्द १२ अक्षर वाली जगती जाति में है।
लक्षण—'भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः' (पृ० ११६)

यदि चार यगण हों तो उसका नाम 'भुजङ्गप्रयात' है।

मत्तमयूर—यह छन्द १३ अक्षर वाली अतिजगती में है। लक्षण—
'वेदै रन्ध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम्' (पृ० १३०)

मगण, तगण, यगण, सगण और अन्त में एक गुरु हो तथा चार, नौ पर यदि हो तो उसका नाम 'मत्तमयूर' छन्द है।

शिखरिणी—यह छन्द १७ अक्षरों वाली अत्यष्टि जाति में है।

लक्षण—'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी' (पृ० १४१)

जिसमें यगण, मगण, नगण, सगण, भगण तथा अन्त में एक लघु और एक गुरु हो तथा ६, ११ पर यति हो, उस छन्द को 'शिखरिणी' कहते हैं।

स्रग्धरा - यह छन्द २१ अक्षरोंवाली प्रकृति जाति में है। लक्षण—
'म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् (पृ० १४६)

यदि मगण, रगण, भगण, नगण और तदनन्तर तीन यगण हों तथा तीन बार सात सात अक्षरों पर यति हो तो उसे 'स्रग्धरा' कहते हैं।

पुष्पिताग्रा—यह छन्द अर्धसमवृत्त प्रकरण का है। लक्षण—
'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा'
(पृ० १६७)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदि विषम पादों में नगण, नगण, रगण, यगण हो और सम पादों में एक नगण, दो जगण, एक रगण और अन्त में एक गुरु हो तो वह छन्द 'पुष्पिताग्रा' कहाता है।

VIII प्र०—षट् प्रत्यय कौन कौन हैं और इनकी इस शास्त्र में कहाँ क्या आवश्यकता पड़ती है ? यह संक्षेप में दिखाकर नष्ट की प्रक्रिया का अपनी इच्छा के अनुसार कोई उदाहरण दिखाओ। 10

VIII उ०—षट् (छः) प्रत्यय ये हैं—(१) प्रस्तार (२) नष्ट (३) उद्दिष्ट (४) एकद्व्यादिलगक्रिया (५) संख्यान (६) अध्वयोग।

(१) प्रस्तार—जिस विधि से वृत्त के भिन्न-भिन्न रूपों का पृथक्-पृथक् ज्ञान होता है, उसे 'प्रस्तार' कहते हैं।

(२) नष्ट—नष्ट (अज्ञात) भेद के स्वरूप का ज्ञान जिसके द्वारा हो उसे 'नष्ट' कहते हैं।

(३) उद्दिष्ट—दिये हुए रूप की क्रम संख्या का ज्ञान जिससे होता है उसे 'उद्दिष्ट' कहते हैं।

(४) एकद्व्यादिलगक्रिया—जिसके द्वारा यह मालूम होता है कि सम्पूर्ण छन्दों में एक गुरु वाले इतने दो गरु वाले इतने इत्यादि, एवं एक लघु वाले इतने, दो लघु वाले इतने रूप हैं इस प्रकार का ज्ञान होता है उसे 'एकद्व्यादिलगक्रिया' कहते हैं।

(५) संख्यान—जिस विधि के द्वारा छन्दों की पूर्ण संख्या का ज्ञान होता है उसे 'संख्यान' कहते हैं।

(६) अध्वयोग—जिस विधि के द्वारा इसको प्रस्तार रचना के लिये कितने स्थान की आवश्यकता है यह ज्ञान होता है उसे 'अध्वयोग' कहते हैं।

नष्टप्रक्रिया का उदाहरण देखो १६३

IX प्र०—नीचे लिखे पद्यपादों में छन्दों के नाम बताओ—

(क) सूत्रं मृणालादिव राजहंसी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(ख) नवजलधरः संनद्धोऽयं न दृप्तनिशाचरः।
(ग) वेशाङ्गनेव नृपनीतिरनेकरूपा।
(घ) यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः।
(ङ) धनं साम्प्रतं वन्ध्यमास्ते न विद्या।

IX उ०—(क) इन्द्रवज्रा। 'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः (पृ० १००)
(ख) हरिणी। 'रसयुगहयैन्सौं म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा'
(पृ० १४३)
(ग) वसन्ततिलका। 'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः'
(पृ० १३४)
(घ) शार्दूलविक्रीडितम्। 'सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्'
(पृ० १४६)
(ङ) भुजङ्गप्रयातम्। 'भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः' (पृ० ११६)

Paper IV 1929 (१६२६)

VI प्र०—वृत्तरत्नाकर से पहिले भी छन्दोंग्रन्थ थे अथवा नहीं थे? थे तो वृत्तरत्नाकर की रचना की आवश्यकता क्या? यदि नहीं थे तो व्यासादियों की पद्यरचना का आधार क्या था?

VI उ०—वृत्तरत्नाकर के पूर्व भी छन्दोग्रन्थ थे। छन्दःशास्त्र को छन्दः पादौ तु वेदस्य' इस तरह वेद का अङ्ग माना गया है, वैदिकवाङ्मय के देखने से विदित होता है कि ऋचाकाल के भी पहले छन्दःशास्त्र की सत्ता थी। पिङ्गल के 'स्कन्धोग्रीवी क्रौष्टुकेः ३।२६' 'उरोबृहती यास्कस्य ३।३०' 'सतोबृहती ताण्डिनः ३।३६' इत्यादि सूत्रों के देखने से मालूम होता है कि पिङ्गल से पहले बड़े २ छन्दः शास्त्र के आचार्य थे, जो कि पिङ्गल को विदित थे, और जिनसे पिङ्गल ने छन्दों के विषय में बहुत कुछ ग्रहण किया था। वृत्तरत्नाकर की रचना केवल लौकिक छन्दों के ज्ञान के लिये लक्ष्य लक्षण सहित सुगम तरीके पर की गई। व्यासादियों की पद्यरचना का आधार उध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समय का छन्दःशास्त्र था, जो कि लुप्त हो गया है, और जिसके आधार पर आधुनिक छन्दोंग्रन्थ हैं।

VII प्र०—वृत्तरत्नाकर में कहे गये गणों के नाम, रूप, संख्या और उपयोग लिखो :—

(क) आर्या और वैतालीय छन्दों का लक्षण लिखो।

(ग) वृत्तस्थ लो विना वर्णैर्गा वर्णा गुरुभिस्तथा।
गुरवो लैर्दले नित्यं प्रमाणमिति निश्चितम् ॥

इस श्लोक में वर्णन की रीति से क्या जाना जाता है ? उदाहरण देकर स्पष्ट करो। 15

VII उ०—(क) गणों के नाम रूप आदि—

(१) मगण ऽ ऽ ऽ इसमें तीन गुरु हैं।
(२) यगण । ऽ ऽ यह आदि लघु है।
(३) रगण ऽ । ऽ यह मध्य लघु है।
(४) सगण । । ऽ यह अन्त गुरु है।
(५) तगण ऽ ऽ । यह अन्त लघु है।
(६) जगण । ऽ । यह मध्य गुरु है।
(७) भगण ऽ । । यह आदि गुरु है।
(८) नगण । । । यह सर्व लघु है।

चतुर्मात्रिक मात्राच्छन्दोगण पांच हैं—

(१) सर्वगुरु	(२) अन्तगुरु	(३) मध्यगुरु	(४) आदिगुरु	(५) चतुर्लघु।
ऽऽ	।।ऽ	।ऽ।	ऽ।।	।।।।

(ख) आर्या—'लक्ष्मैतत्सप्त गणा गोपेता०—' (पृ० २२)

वैतालीय—'षड्विषमेऽष्टौ समे कलास्ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः।
न समात्र पराश्रिता कला वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः ॥'
(पृ० ३८)

जिसके विषम—प्रथम और तृतीय—चरणों में ६ मात्रायें तथा सम—द्वितीय और चतुर्थ—चरणों में ८ मात्रायें हों और इन मात्राओं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के अनन्तर दोनों सम–विषम में एक रगण, एक लघु और एक गुरु क्रम से आयें उसे वैतालीय छन्द कहते हैं। (ग) 'वृत्तस्य ला०—' देखो उत्तर पृ० ७२–७५।

VIII प्र०—इन्द्रवज्रा, वंशस्थम्, तोटकम्, द्रुतविलम्बितम्, भुजङ्गप्रयातम्, वसन्ततिलका, मालिनी, पञ्चचामरम्, शिखरिणी, मन्दाक्रान्ता, वेगवती, आख्यानकी, पुष्पिताग्रा, सौरभकम्, गाथा—इनके लक्षणमात्र लिखो।

VIII उ०—इन्द्रवज्रा—'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः' (पृ० १००)

वंशस्थम्—'जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ' (पृ० ११४)

तोटकम्—'इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम्' (पृ० ११६)

द्रुतविलम्बितम्—'द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ' (पृ० ११६)

भुजङ्गप्रयातम्—'भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः' (पृ० ११६)

वसन्ततिलका—'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः (पृ० १३४)

मालिनी– 'ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः' (पृ० १३६)

पञ्चचामर—जरौ जरौ जगाविदं वदन्ति पञ्चचामरम्' (पृ० १४०)

शिखरिणी—'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी' (पृ० १४१) मन्दाक्रान्ता—'मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद् गुरू चेत्' (पृ० १४४)

वेगवती—'सयुगात्सगुरू विषमे चेत्। भाविह वेगवती युजि भाद्गौ' (पृ० १६२)

आख्यानकी—'आख्यानकी तौ जगुरू ग ओजे। जतावनोजे जगुरू गुरुश्चेत्' (पृ० १६४)

पुष्पिताग्रा—'अयुजि नयुगरेफतो यकारो, युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा' (पृ० १६७)

सौरभकम्—'चरणत्रयं भजति लक्ष्म यदि सकलमुद्गतागतम्।
नौ भगौ भवति सौरभकं चरणे यदीह भवतस्तृतीयके ॥' (पृ० १७८)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गाथा—'विषमाक्षरपादं वा पादैरसमं दशधर्मवत् ।
यच्छन्दो नोक्तमत्र गाथेति तत्सूरिभिः प्रोक्तम् ॥' (पृ० १८४)

IX प्र०—चतुरक्षर जाति का प्रस्तार लिखो, अष्टाक्षर जाति की वृत्तसंख्या पञ्चाक्षर जाति के प्रस्तार में। ऽ। ऽ। यह भेद कौन सा है और इस जाति के प्रस्तार में १५ वां भेद कैसा होता है ? लिखो। 10

IX. उ०—चतुरक्षरजाति का प्रस्तार देखो वृत्त० पृ० १५२ में १६ भेद। अष्टाक्षरजाति की वर्णिक वृत्तसंख्या २५६ होती है और मात्रिक-छन्दसंख्या ३४। पञ्चाक्षरजाति के प्रस्तार में। ऽ। ऽ। यह २२ वां भेद है। क्योंकि अर्धसूची १ २ ४ ८ १६ पूर्णांक ३२।
। ऽ । ऽ ।
गुरु चिह्नों के ऊपर २ और ८ हैं। दोनों मिलाकर १० हुए। १० को पूर्णांक ३२ में से घटा दिया। शेष २२ रहे। अतएव यह २२ वां भेद हुआ। इस जाति में १५ वां भेद ऽ।।। ऽ है। देखो नष्टविधि उदाहरण वृत्त० (पृ० १६२-१६३)

X प्र०—(क) शल्यो जेष्यति पाण्डवान्।
(ख) कमठपृष्ठकठोरमिदं धनुः।
(ग.) पयसा कमलं कमलेन पयः।
(घ) न याचे गजालिं न वा वाजिराजिम्।
(ङ) प्रवृत्ते वैराग्ये विषयरसनिष्क्रान्तमनसाम्।
इन पद्यांशों में जो जो छन्द हैं उनके नाम लिखो। 5

X उ०—(क) अनुष्टुप्।
(ख) द्रुतविलम्बितम्।
(ग) तोटकम्।
(घ) भुजङ्गप्रयातम्।
(ङ) शिखरिणी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Paper IV. 1930 (१९३०)

VII प्र०—मगण–नगण–सगण–तगण इन गणों का स्वरूप लिखो। और ऽऽ।, ।।ऽ, ।ऽ।, ऽ।ऽ इन गणों के नाम लिखो। गुरुसंज्ञा किन वर्णों की है। गुरु को लघुता कहां होती है। क्रमसंज्ञा किस संयोग की है। सम–विषम–अर्धसम–पाद–यति–गाथा, इन संज्ञाओं के लक्षण लिखो।

VII उ०—तीन गुरु अक्षरों वाला मगण (ऽऽऽ), तीन लघु अक्षरों वाला नगण (।।।), आदि में दो लघु अक्षरों तथा अन्त में एक गुरु अक्षर वाला सगण (।।ऽ) तथा आदि में दो गुरु, अन्त में एक लघु अक्षर वाला तगण (ऽऽ।) कहलाता है। यथा—

'आदिमध्यावसानेषु भजसा यान्ति गौरवम्।
यरता लाघवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्॥' तथा—
'मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः॥'

ऽऽ। यह अन्त लघु तगण, ।।ऽ यह अन्तगुरु सगण, ।ऽ। यह मध्यगुरु जगण तथा ऽ।ऽ यह मध्यलघु रगण है।

अनुस्वार वाले, अन्त में विसर्ग वाले, दीर्घ तथा जिसके परे संयुक्त अक्षर हो, ऐसे वर्णों की गुरु संज्ञा होती है। यदि श्लोक पाद के अन्त में लघु वर्ण हों तो उसे भी विकल्प मान लिया जाता है।

चरण के प्रारम्भ में विद्यमान संयोग—दो व्यञ्जनों का स्वर के व्यवधान रहित होकर समीप रहना—की छन्दशास्त्र में क्रम संज्ञा होती है। इस क्रमनामक वर्णसंयोग के परे होने पर किसी स्थल में पूर्ववर्ती गुरु भी लघु ही हो जाता है। जैसे उदाहरण श्लोक में—'सुन्दरि! ग्राम्यजनों' यहाँ पर 'रि' यह ग्रा' इस संयोग के परे होने से गुरु है। किन्तु इसके गुरु होने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर तेरह मात्राएँ हो जायँगी, चाहिए बारह ही। इसीलिये आवश्यकतानुसार यहाँ गुरु भी लघु मान लिया गया है।

सम—'अङ्घ्रयो यस्य चत्वारस्तुल्यलक्षणलक्षिताः।
तच्छन्दःशास्त्रतत्त्वज्ञाः समं वृत्तं प्रचक्षते ॥' (पृ० १६)

विषम—'यस्य पादचतुष्केऽपि लक्ष्म भिन्नं परस्परम्।
तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदाः (पृ० १७)

अर्धसम—'प्रथमाङ्घ्रिसमो यस्य तृतीयश्चरणो भवेत्।
द्वितीयस्तुर्यवद् वृत्तं तदर्धसममुच्यते।' (पृ० १७)

पाद—ज्ञेयः पादश्चतुर्थांश। पद्य के चौथाई भाग को पाद (चरण) कहते हैं। (पृ० १२)

यति—यतिर्विच्छेदसंज्ञिका। पद्य के उच्चारण में क्षणिक विच्छेद को यति कहते हैं। (पृ० १३)

गाथा—'शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः।' (पृ० २०)

VIII प्र०—आर्या छन्द में यति और पादव्यवस्था का क्या नियम है? गीति–उपगीति–उद्गीति, इनमें तथा शिखा और खञ्जा छन्दों में परस्पर क्या भेद है? जिस छन्द में ६४ मात्रा तथा ४८ वर्ण हों उसमें कितने लघु और कितने गुरु होंगे? एवं जिसमें २७ लघु और एक गुरु हो उसमें कितने वर्ण और कितनी मात्रा होगी? 10

VIII उ० आर्या—'लक्ष्मैतत्०' (पृ० २३–२५)

आर्या के पूर्वार्ध–प्रथम द्वितीय चरण–का यह लक्षण निश्चित है कि इसमें सात गण–चार चार मात्रा वाले–और एक गुरु होता है। इस आर्या के चार मात्रा वाले इन सात गणों में विषम गणों में—अर्थात् प्रथम, तृतीय, पञ्चम और सातवें में जगण। ऽ। मध्यगुरु-वाला न आना चाहिये। छठा गण जगण हो अथवा नगण और लघु रूप अर्थात् चार लघु वाला हो।

यदि छठा गण नगण और लघु रूप अर्थात् चार लघु वाला हो तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उस गण के द्वितीय लघु से पूर्व अर्थात् प्रथम लघु पर यति होती है, प्रथम लघु पर पद भी समाप्त होना चाहिये यह नियम है। एवं यदि सातवाँ गण चार लघु वाला हो तो गण के 'पहले लघु से पूर्व अर्थात् छठे गण के अन्त में यति होती है पद समाप्त हो जाना चाहिये। इतना पूर्वार्ध का नियम है। उत्तरार्ध–तृतीय और चतुर्थ चरण–का यह लक्षण है कि यदि पाँचवाँ गण चार लघु वाला हो तो पहले लघु से पूर्व चतुर्थ गण के अन्त में पद समाप्त होकर यति होनी चाहिये तथा इसमें छठा गण एक लघु का होता है बाकी सब बातें पूर्वार्ध के जैसे ही होती हैं।

गीति—'आर्याप्रथम०' (पृ० २६)। उपगीति—'आर्याद्वितीय०' (पृ० ३२)।

उद्गीति—'आर्याशकलद्वितयम्' (पृ० ३५)। गीति का पूर्वार्द्ध उत्तरार्द्ध आर्या के पूर्वार्द्ध के समान, उपगीति का पूर्वार्द्ध उत्तरार्द्ध आर्या के उत्तरार्द्ध के समान और उद्गीति का पूर्वार्द्ध आर्या के उत्तरार्द्ध के समान तथा उत्तरार्द्ध आर्या के पूर्वार्द्ध के समान होता है।

शिखा—'शिखिगुणित–' (पृ० ७५)

खञ्जा—'विनिमय—' (पृ० ७७)

जिस छन्द में ६४ मात्रा तथा ४८ वर्ण हों उसमें १६ गुरु और ३२ लघु होंगे। एवं जिसमें २७ लघु और एक गुरु हो उसमें २८ वर्ण और २६ मात्रा होंगे। (पृ० ७८–७६)

IXप्र०—मुखचपला. आपातलिका, वक्त्रम्, श्येनिका, इन्द्रवंशा, स्रग्विणी, मालती, मञ्जुभाषिणी, मालिनी, हरिणी, नर्कुटकम्, कोकिलकम्, भद्रविराट्, यवमति, उद्गता—इनके लक्षण लिखो। 15

IX उ० मुखचपला—'आद्यं दलं समस्तम्' (पृ० २६)

आपातलिका—'आपातलिका कथितेयम् भाद्गुरुकावथ' पूर्ववदन्यत् (पृ० ४१)

वक्त्रम्—'वक्त्रं नाद्यान्नसौ स्यातामब्धेर्योऽनुष्टुभि' (पृ० ५२)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्येनिका—'श्येनिका रान्नौ रलौ गुरुर्यदा' (पृ० ११२)
इन्द्रवंशा—'स्यादिन्द्रवंशा ततजौ रसंयुतौ (पृ० ११५)
स्रग्विणी—'रैश्चतुर्भिर्युता स्रग्विणी सम्मता' (पृ० १२०)
मालती—'भवति नजावथ मालती जरौ' (पृ० १२७)
मञ्जुभाषिणी—'सजसा जगौ भवति मञ्जुभाषिणी' (पृ० १३१)
मालिनी—'ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः' (पृ० १३६)
हरिणी—'रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा' (पृ० १४३)
नर्कुटकम्—'हयदशभिर्नजौ भजजला गुरु नर्कुटकम्' (पृ० १४४)
कोकिलकम्—'मुनिगुहकार्णवैः कृतयति वद कोकिलकम् (पृ० १४५)
भद्रविराट्—'ओजे तपरौ जरौ गुरुश्चेत् म्सौज्गौग्भद्रविराट् भवेदनोजे' (पृ० १६३)
यवमती—स्यादयुग्मके रजौ रजौ समे तु जरौ जरौ गुरुर्यदा यवान्मतीयम्' (पृ० १६६)
उद्गता—"सजमादिमे सलघुकौ च नसजगुरुकैरथोद्गता।
त्र्यङ्घ्रिगतभनजला गयुताः सजसा जगौ चरणमेकतः पठेत्" (पृ० १७६)

X प्र०—पञ्चाक्षरजाति के प्रस्तार में से आदि के ३२ रूप लिखो और इस जाति के प्रस्तार के सम्पूर्ण रूपों की संख्या (अङ्कों में) लिखो। पञ्चाक्षर जाति के प्रस्तार में ४५ पैंतालीसवां भेद कैसा होता है और ऽ।।ऽऽ यह रूप कौन सा है ? 10

X उ०—पञ्चाक्षरजाति के प्रस्तार के ३२ रूप इस प्रकार हैं—

(१) ऽऽऽऽऽ (२) ।ऽऽऽऽ (३) ऽ।ऽऽऽ (४) ।।ऽऽऽ
(५) ऽऽ।ऽऽ (६) ।ऽ।ऽऽ (७) ऽ।।ऽऽ (८) ।।।ऽऽ
(९) ऽऽऽ।ऽ (१०) ।ऽऽ।ऽ (११) ऽ।ऽ।ऽ (१२) ।।ऽ।ऽ
(१३) ऽऽ।।ऽ (१४) ।ऽ।।ऽ (१५) ऽ।।।ऽ (१६) ।।।।ऽ
(१७) ऽऽऽऽ। (१८) ।ऽऽऽ। (१९) ऽ।ऽऽ। (२०) ।।ऽऽ।
(२१) ऽऽ।ऽ। (२२) ।ऽ।ऽ। (२३) ऽ।।ऽ। (२४) ।।।ऽ।
(२५) ऽऽऽ।। (२६) ।ऽऽ।। (२७) ऽ।ऽ।। (२८) ।।ऽ।।
(२९) ऽऽ।।। (३०) ऽऽ।।। (३१) ऽ।।।। (३२) ।।।।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस जाति के प्रस्तार बत्तीस ही होते हैं। 'ऽ।।ऽऽ' यह ७ वां रूप है।

XI. प्र०—(क) याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा।

(ख) त्वञ्चेत्सञ्चरसे वृषेण लघुता का नाम दिग्दन्तिनाम्।

(ग) दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालैः।

(घ) तीरे तरुण्या वदनं सहासम्।

(ङ) असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे।

इन पद्यांशों में जो जो छन्द हैं इनके नाम लिखो। लक्षण नहीं लिखो।

XI. उ०—(क) मन्दाक्रान्ता। (पृ० १४४)

(ख) शार्दूलविक्रीडितम्। (पृ० १४६)

(ग) वसन्ततिलका। (पृ० १३४)

(घ) इन्द्रवज्रा। (पृ० १००)

(ङ) मालिनी। (पृ० १३६)

प्राज्ञ Paper IV. 1931 (१६३१)

नीचे लिखे प्रश्नों का उत्तर यथारुचि सरल संस्कृत वा हिन्दी में लिखो

I. प्र०—छन्दःशास्त्र में अब्धि, भूत, रस, मुनि, वसु, ग्रह—इन शब्दों के क्या क्या अर्थ हैं लिखो और ऽऽ, ।।।।, इन गणों का उपयोग किन छन्दों में होता है लिखो तथा सगण और तगण का स्वरूप लिखो और ।ऽऽ, ऽ।ऽ, इन गणों के नाम लिखो। 4

I. उ०—अब्धि—छन्दःशास्त्र में अब्धि शब्द से ज्योतिष शास्त्रादि व्यवहार के अनुसार ४ संख्या का बोध होता है। इसका अर्थ समुद्र है।

भूत—से ५ का बोध होता है। इसका अर्थ पृथिवी आदि पाँच हैं।

रस—से ६ का बोध होता है। रस मधुर आदि छः होते हैं।

मुनि—से ७ का बोध होता है। 'सप्त ऋषयः'।

वसु—से ८ का बोध होता है। 'वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः'।

ग्रह—से ९ का बोध होता है। 'नवग्रहाः'।

ऽऽ, ।।।।, इन चार मात्रावाले गणों का उपयोग आर्यादि मात्रिकछन्दों में होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तगुरु (। । ऽ) सगण होता है, तथा अन्तलघु (ऽ ऽ ।) तगण, । ऽ ऽ, ऽ । ऽ इन गणों का नाम क्रमशः यगण रगण है ।

II.प्र०—पथ्या, चपला, चित्रा, रुचिरा—इनके लक्षण लिखकर "वृत्तस्य लो विना वर्णागा वर्णा गुरुभिस्तथा" इसका अर्थ लिखो और किसी उदाहरण में चरितार्थ करके दिखाओ । 7

II.उ०—पथ्या—त्रिष्वंशकेषु पादो दलयोराद्येषु दृश्यते यस्याः ।
पथ्येति नाम तस्याश्छन्दोविद्भिः समाख्यातम् ॥ (पृ० २५)

जिस तरह इसी के पूर्वार्ध उत्तरार्ध में 'पादो' यहाँ तक चार २ मात्राओं वाले आदि के तीन गणों अर्थात् बारह २ मात्राओं के पश्चात् पादसमाप्ति होती है ।

चपला—उभयार्धयोर्जकारौ द्वितीयतुर्यौ गमध्यगौ यस्याः ।
चपलेति नाम तस्याः प्रकीर्तितं नागराजेन ॥ (पृ० २८)

जिस आर्या के दोनों दलों में द्वितीय और चतुर्थ गण जगण रूप हों तथा वह जगण दो गुरुओं के मध्य में हो अर्थात् दोनों ओर से गुरु हों उसका नाम चपला कहा है । जैसे—प्रथम भाग में दूसरा गण 'धयोर्ज' (। ऽ ।) और चौथा 'द्वतीय' (। ऽ ।) जगण । दोनों जगण क्रमशः 'या—का' 'रौ—तुर' इन गुरु वर्णों के मध्यगत हैं । इसी प्रकार प्रथम भाग में दूसरा गण 'ति नाम' (। ऽ ।) और चौथा गण 'प्रकीर्ति' (। ऽ ।) जगण । दोनों जगण क्रमशः 'ले—त (ऽ ऽ), 'स्याः—तं' (ऽ ऽ) इन गुरु वर्णों के मध्यगत हैं ।

चित्रा—'बाणाष्टनवसु यदि लश्चित्रा' (पृ० ६७) जैसे—यहां पाँचवीं मात्रा 'ष्ट' (।) आठवीं मात्रा 'सु' (।) और नवमीं मात्रा 'य' (।) ये लघु हैं ।

रुचिरा—'त्रिगुणनवलघुरवसितिगुरुरिति दलयुगकततनुरिह रुचिरा' (पृ० ७९) इसके दोनों भागों के मध्य प्रतिभाग में २७ लघु और अन्त में एक गुरु होता है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जैसे—यहाँ 'रुचिरा' इसमें 'चि' यहाँ तक २७ लघु और अन्त में 'रा' यह गुरु है।

वृत्तस्य ला०—छन्द के गुरु लघुओं की तथा मात्रा और वर्णों की संख्या जानने का प्रकार यह है कि छन्द की मात्रा संख्या में वर्णों की संख्या घटा देने से शेष संख्या गुरुओं की समझनी चाहिये। तथा मात्रा संख्या में गुरु संख्या घटा देने से बची हुई संख्या वर्णों की जाननी चाहिये। गुरुसंख्या जानने का एक अन्य उपाय यह है कि मात्रासंख्या में लघु संख्या घटा देने से शेष संख्या का आधा किया जाय, वह आधी संख्या गुरुओं की होगी। उदाहरणार्थ—

इस पद्य के ही प्रथम चरण में गिनकर मालूम हुआ कि मात्रा संख्या १४ और वर्ण संख्या ७ है। १४—८=६ इस प्रकार मात्रा संख्या १४ में वर्ण संख्या ८ घटा देने से शेष ६ गुरु संख्या होगी। वर्ण संख्या जानने के लिये पहले मात्रा संख्या और गुरु-संख्या को मालूम कर लिया १४ और ६। १४—६=८, यह संख्या वर्णों की है।

III प्र०—विद्युन्माला, उपेन्द्रवज्रा, तोटक, पुष्पविचित्रा, शशिकला, मन्दाक्रान्ता, स्रग्धरा, चण्डवृष्टिप्रपात, द्रुतमध्या, भद्रविराट्, हरिणप्लुता—इनके लक्षण लिखो।

III. उ०-विद्युन्माला—'मो मो गो गो विद्युन्माला' (पृ० ९०)
उपेन्द्रवज्रा --'उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ' (पृ० १०१)
तोटक—'इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम्' (पृ० ११६)
पुष्पविचित्रा—'नयसहितौ न्यौ कुसुमविचित्रा' (पृ० ११८)
शशिकला—'द्विहतहयलघुरथ गिति शशिकला' (पृ० १३५)
मन्दाक्रान्ता—'मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद् गुरू चेत्' (पृ० १४४)
स्रग्धरा—'म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्' (पृ० १४९)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चण्डवृष्टिप्र०—'यदिह नयुगलं ततः सप्त रेफास्तदा चण्डवृष्टि-
प्रपातो भवेद्दण्डकः' (पृ० १५७)

द्रुतमध्या—'भत्रयमोजगतं गुरुणी चेत्। युजि च नजौ ज्ययुतौ
द्रुतमध्या' (पृ० १६२)

भद्रविराट्—'ओजे तपरौ जरौ गुरुश्चेत्। म्सौ ज्गौ ग्भद्रविराड्
भवेदनोजे' (पृ० १६३)

हरिणप्लुता—'सयुगात् सलघू विषमे गुरुः युजि नभौ च भरौ
हरिणप्लुता' (पृ० १६६)

IV. प्र०—अष्टाक्षरजाति के प्रस्तार के आदि के १० रूप लिखो, सप्ताक्षर जाति के ११ ग्यारहवां, १५ पन्द्रहवां और ५० पचासवां रूप लिखो यथा षडक्षरजाति के ऽऽऽ।।।, ऽ।ऽ।ऽ।, ऽऽ।।ऽऽ इन रूपों की संख्या लिखो। 7

IV. उ०—अष्टाक्षर जाति के प्रस्तार के आदि के १० रूप ये हैं—

(१) ऽऽऽऽऽऽऽऽ (२) ।ऽऽऽऽऽऽऽ (३) ऽ।ऽऽऽऽऽऽ
(४) ।।ऽऽऽऽऽऽ (५) ऽऽ।ऽऽऽऽऽ (६) ।ऽ।ऽऽऽऽऽ
(७) ऽ।।ऽऽऽऽऽ (८) ।।।ऽऽऽऽऽ (९) ऽऽऽ।ऽऽऽऽ
(१०) ।ऽऽ।ऽऽऽऽ

सप्ताक्षर जाति का ११ वां रूप ऽ।ऽ।ऽऽऽ यह है। १५ वां रूप 'ऽ।।।ऽऽऽ' यह है और ५० वां रूप '।ऽऽऽ।।ऽ' यह है।

षडक्षरजाति का 'ऽऽऽ।।।' यह ५७ वां रूप है। उद्दिष्टविधि यथा

अर्धसूची— १ २ ४ ८ १६ ३२ पूर्णाङ्क ६४।
ऽ ऽ ऽ । । ।

गुरु चिह्नों के ऊपर १, २, ४ हैं, तीनों मिलकर ७ हुए। ७ को पूर्णाङ्क ६४ में घटाया। शेष ५७ रहे। अतएव यह ५७ वां भेद है। षडक्षरजाति का 'ऽ।ऽ।ऽ।' यह ४३ वां भेद है। उद्दिष्ट-विधि यथा—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्धसूची— १ २ ४ ८ १६ ३२ पूर्णाङ्क ६४।
ऽ । ऽ । ऽ ।

गुरु चिन्हों के ऊपर १, ४, १६, अङ्क हैं, तीनों मिलकर २१ हुए। २१ को पूर्णाङ्क ६४ में घटाया। शेष ४३ रहे। अतएव यह ४३ वां भेद है। षडक्षरजाति का 'ऽऽ।।ऽऽ' यह १३ वां रूप है। उद्दिष्टविधि यथा—

अर्धसूची— १ २ ४ ८ १६ ३२ पूर्णाङ्क ६४।
ऽ ऽ । । ऽ ऽ

गुरु चिह्नों के ऊपर १, २, १६, ३२ अङ्क हैं, चारों मिलकर ५१ हुए। ५१ को पूर्णाङ्क ६४ में घटाया। शेष १३ रहे। अतएव यह १३ वां भेद है।

V. प्र०—(क) अद्यापि रत्नाकर एव सिन्धुः।
(ख) चिन्ता यशसि न वपुषि प्रायः परिदृश्यते महताम्।
(ग) पूर्वेषां वो विलयमनयो हेमलङ्का किमेतत्।
(घ) अस्मार्षीज्जलनिधिमन्थनस्थं शौरिः।
(ङ) इतः स्तुतिः का जगदीश ? निर्मला।
इन पद्यांशों में जो जो छन्द हैं उनके नाम लिखो।

V उ०—(क) इन्द्रवज्रा। 'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः' (पृ० १००)
(ख) आर्या। 'लक्ष्मैतत्०—चरमेऽर्धे पञ्चमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः' (पृ० २२)
(ग) मन्दाक्रान्ता। 'मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैम्भौं नतौ ताद् गरू चेत्' (पृ० १४४)
(घ) प्रहर्षिणी। 'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षणीयम्' (पृ० १२६)
(ङ) वंशस्थ। 'जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ' (पृ० ११४)

Paper IV 1932 (१९३२)

निम्नलिखितप्रश्नानामुत्तराणि यथारुचि सरलसंस्कृतभाषया हिन्दी-भाषया वा लेख्यानि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

I प्र०—छन्दःशास्त्रे शिखि-वेद-बाण-अक्ष-स्वर-अश्व-रन्ध्र-इत्येतेषां शब्दानां केऽर्थाः ? गणाः कियन्तः ? नगणस्य मगणस्य च किं स्वरूपम् ? इति सम्यक् प्रदर्शय । 6

I उ०—शिखी—इस शब्द का अर्थ अग्नि है। अग्नि गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि भेद से तीन होते हैं। शिखी या इसके पर्यायवाची अन्य अग्नि आदि शब्दों से ज्योतिष आदि शास्त्रों के व्यवहार के अनुसार छन्दःशास्त्र में तीन की संख्या का बोध होता है।

वेद—इसका अर्थ ऋक्, यजुः, साम और अथर्व ये चार वेद हैं। छन्दःशास्त्र में वेद शब्द से ४ की संख्या ली जाती है।

बाण—इसका शब्दार्थ तीर है। इसका अर्थ साहित्य में उन्मादन, तापन, शोषण, स्तम्भन, संमोहन—काम के इन पांच बाणों का लिया जाता है। ज्योतिष में—'रोगो वह्नि, राज—चौरौ च मृत्युः' इन पांच अशुभकारक बाणों को लिया जाता है। इन्हीं व्यवहारों से छन्दःशास्त्र में बाण शब्द से ५ की संख्या का बोध होता है।

अक्ष—पासा। इस छन्द से पांच का बोध होता है।

स्वर—निषाद, ऋषभ, गान्धार आदि सात। इस शब्द से सात का बोध होता है।

अश्व—घोड़े। इस शब्द से सात का बोध होता है।

रन्ध्र—छिद्र। इस शब्द से ९ का बोध होता है। 'शरीरं हि नवच्छिद्रम्।

गण—आठ होते हैं—(१ मगण (२) यगण (३) रगण (४) सगण (५) तगण (६) जगण (७) भगण (८) नगण। नगण मगण का स्वरूप इस प्रकार है—

नगण ।।। इसमें तीनों लघु होते हैं।

मगण ऽऽऽ इसमें तीनों गुरु होते हैं।

II प्र०—बृहती-जगती-शक्करी—इति केषां छन्दसां नामानि ? जातिवृत्तयोः को भेदः ? अर्धसमवृत्तस्य किं लक्षणम् ? मुखचपला, गीतिः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भुजङ्गप्रयातम्, मालिनी, शिखरिणी पुष्पिताग्रा—इत्येतेषां लक्षणान्युदाहरणानि च निरूपय ।

II उ०—बृहती—नौ अक्षरों के पाद वाले ९ वीं जाति के समवृत्तों को बृहती कहते हैं । इसमें हलमुखी और भुजगशिशुभृता हैं ।

जगती—बारह वर्णों के पाद वाले १२वीं जाति के समवृत्तों को जगती कहते हैं, इसमें चन्द्रवर्त्म, वंशस्थ, इन्द्रवंशा, तोटक, द्रुतविलम्बित, पुट, प्रमुदितवदना, कुसुमविचित्रा, जलोद्धतगति, भुजङ्गप्रयात, स्रग्विणी आदि हैं ।

शक्वरी—चौदह वर्णों के पाद वाले १४ वीं जाति के समवृत्तों को शक्वरी कहते हैं । इसमें असम्बाधा, अपराजिता, प्रहरणकलिका और वसन्तकलिका हैं ।

जाति—आर्या आदि छन्द हैं । इसमें मात्राएं नियत रहती हैं । इन्हें मात्रा छन्द कहा जाता है ।

वृत्त—उक्ता अत्युक्ता आदि छन्द हैं । इनमें गुरु वर्णों का विन्यास नियत रहता है । इन्हें वर्ण छन्द कहते हैं । 'वृत्तमक्षरसङ्ख्यातं जातिर्मात्राकृता भवेत्' (पृ० १५)

अर्धसम—प्रथमाङ्घ्रिसमो यस्य तृतीयश्चरणो भवेत् ।
द्वितीयस्तुर्यवद् वृत्तं तदर्धसममुच्यते ॥ (पृ० १७)

मुखचपला—'आद्यं दलं समस्तं भजेत लक्ष्म चपलागतं यस्याः ।
शेषे पूर्वजलक्ष्मा मुखचपला सोदिता मुनिना ॥'
(पृ० २६)

गीति—'आर्याप्रथमदलोक्तं यदि कथमपि लक्षणं भवेदुभयोः ।
दलयोः कृतयतिशोभां तां गीतिं गीतवान् भुजङ्गेशः ॥'
(पृ० ३२)

भुजङ्गप्रयात—'भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः' (पृ० ११६)
मालिनी—'ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः' (पृ० १३६)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शिखरिणी—'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी'
(पृ० ११३)

पुष्पिताग्रा—'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा' (पृ० १६७)

III.प्र०—'अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः' एतस्यार्थं विविच्य प्रस्तारस्य नष्टस्य च निर्माणप्रकारं प्रदर्श्य त्र्यक्षरच्छन्दसः प्रस्तारं चतुरक्षरच्छन्दसः प्रस्तारेऽष्टमं वृत्तं च लिख। 10

III.उ०—जिसके पादों में पूर्वोक्त 'इन्द्रवज्रा' और 'उपेन्द्रवज्रा' का लक्षण मिले हों, उन्हें 'उपजाति' कहते हैं। उपजाति वृत्त कीर्ति आदि भेद से चौदह प्रकार का होता है। प्रस्तार और नष्ट का निर्माण प्रकार देखो वृत्तरत्नाकर पृ० १८८-१९२। त्र्यक्षर छन्द का प्रस्तार तथा चतुरक्षर छन्द प्रस्तार का आठवां वृत्त देखो वृ० पृ० १८८।

IV.प्र०—(क) सुखार्थिनः कुतो विद्या कुतो विद्यार्थिनः सुखम्।

(ख) विषमप्यमृतं क्वचिद्भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया।

(ग) सत्सङ्गाद्भवति हि साधुता खलानाम्।
साधूनां नहि खलसङ्गमात् खलत्वम्॥

(घ) उत्तंसयिष्यति कचांस्तव देवि भीमः।

(ङ) याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा।

एषु पद्यांशेषु च्छन्दसां नामानि निर्दिश।

VI,उ०—(क) अनुष्टुप्।

(ख) वियोगिनी। 'विषमे ससजाः समे गुरुः सभरा लोऽथ गुरुर्वियोगिनी' (पृ० १३६)

(ग) प्रहर्षिणी। 'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षणीयम्' (पृ०१२६)

(घ) वसन्ततिलका। 'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः'
(पृ० १३४)

(ङ) मन्दाक्रान्ता। 'मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद्गुरूचेत्'
(पृ० १४४)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Paper VI. 1933 (१६३३)

I.प्र०—अब्धि–इषु–भूत–ऋतु–मुनि–वसु–इन, एषां शब्दानां छन्दःशास्त्रे केऽर्थाः ? जगणस्य सगणस्य च किं स्वरूपम् ? समवृत्तभेदाः कियन्तः के च ते ? 7

I.उ०—अब्धि–४–इषु–५ भूत–५। ऋतु–६। मुनि–७। वसु–८। इन–१२।

जगण—। ऽ ऽ इसके मध्य में गुरु होता है।

सगण—।। ऽ इसके अन्त में गुरु होता है।

समवृत्त—'आरभ्यैकाक्षरात्पादात्० षड्विंशतिं गतम्' (पृ० १८)

(१) उक्ता (२) अत्युक्ता (३) मध्या (४) प्रतिष्ठा (५) सुप्रतिष्ठा (६) गायत्री (७) उष्णिक् (८) अनुष्टुप् (९) बृहती (१०) पंक्ति (११) त्रिष्टुप् (१२) जगती (१३) अतिजगती (१४) शक्करी (१५) अतिशक्वरी (१६) अष्टि (१७) अत्यष्टि (१८) धृति (१९) अतिधृति (२०) कृति (२१) प्रकृति (२२) आकृति (२३) विकृति (२४) संकृति (२५) अतिकृति (२६) उत्कृति।

II.प्र०—उद्गीतिः, शशिवदना, विद्युन्माला, इन्द्रवज्रा, वसन्ततिलका, स्रग्धरा—एषां छन्दसां लक्षणान्युदाहरणानि च वर्णय। 11

II.उ०—उद्गीतिः—'आर्याशकलद्वितयं व्यत्ययरचितं भवेद्यस्याम्।
सोद्गीतिः किल कथिता तद्वद्यत्यंशभेदसंयुक्ता॥' (पृ० ५३).

शशिवदना—'शशिवदना न्यौ' (पृ० ८६)

विद्युन्माला—'मो मो गो गो विद्युन्माला' (पृ० ९०)

इन्द्रवज्रा—'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः' (पृ० १००)

वसन्ततिलका–'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः' (पृ० १३४)

स्रग्धरा—'म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्' (पृ० १४९)

III.प्र०–'स्याद्भूतर्त्वश्वैः कुसुमितलतावेल्लिता म्तौ नयौ यौ' एतस्यार्थं विविच्य पश्चादेतच्छन्दसः प्रस्तारे केवलं छन्दसां संख्यां प्रदर्श्य तत्र पञ्चमवृत्तस्य स्वरूपं लिख।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

III. उ०—स्याद्भूत—जब मगण, तगण, नगण और तीन यगण हों तथा ५, ६, ७ पर यति हो तो उस छन्द को 'कुसुमितलतावेल्लिता' कहते हैं। पञ्चाक्षर जाति के प्रस्तार में वर्णिक छन्दों की संख्या ३२ होती है। पञ्चाक्षरजाति का ५ वां रूप 'ऽऽ।ऽऽ' यह है।

सूचीबोधकचक्र

अनुक्रम सं०	१	२	३	४	५	६	७	८
मात्रिक सूची	१	२	३	५	८	१३	२१	३४
वर्णिक सूची	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६

IV. प्र०—(क) 'अर्घ्यमर्घ्यमिति—वादिनं नृपम्',
(ख) 'यदाह धात्र्या प्रथमोदितं वचः'
(ग) 'गाण्डीवी कनकशिलानिभं भुजाभ्याम्',
(घ) 'स्नेहात्सभाजयितुमेत्य दिनान्यमूनि',
(ङ) 'इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतरश्मिर्नयनयोः',
(च) 'नवजलधरः सन्नद्धोऽयं न हप्तनिशाचरः',
एषु पद्यांशेषु छन्दसां नामानि सलक्षणानि च निर्दिश।

IV उ०—(क) रथोद्धता—'रान्नराविह रथोद्धता लगौ' (पृ० ११०)
(ख) वंशस्थ—'जरौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ' (पृ० ११४)
(ग) प्रहर्षिणी—'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्' (पृ० १२९)
(घ) वसन्ततिलका—'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः' (पृ० १३४)
(ङ) शिखरिणी—'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी' (पृ० १४१)
(च) हरिणी—'रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा' (पृ० १४३)

Paper VI 1934 (१९३४)

V प्र०—यति—क्रम—पाद—गाथा—दण्डक—विषमवृत्तानां लक्षणानि लिखित्वा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सगणभगणयोर्लक्षणं रेखाभिस्तदाकारं च प्रदर्श्यार्याच्छन्दसि सयतिपदनियमं निरूपय। 11

V उ०—यति—विराम को यति कहते हैं। 'यतिर्विच्छेदसंज्ञिका' (पृ० १३)

क्रम—पाद के आदि में विद्यमान एक वर्ण का अन्य वर्ण के साथ जो संयोग है उसको छन्दःशास्त्र में 'क्रम' कहते हैं। 'पादादाविह०' (पृ० १०)

पाद—पद्य (श्लोक) के चतुर्थ अंश (भाग) को पाद कहते हैं। 'ज्ञेयः पादश्चतुर्थोऽशः' (पृ० १२)

गाथा—तीन या छः चरणों वाले तथा न्यूनाधिक मात्राओं वाले छन्दों को गाथा कहते हैं। 'शेषं गाथास्त्रिभिः' (पृ० २०)

दण्डक—२६ अक्षर वाली जाति से अतिरिक्त २७ आदि अक्षरों के पाद वाले छन्दों को दण्डक कहते हैं, जो चण्डवृष्टि आदि नामों से कहाते हैं। 'तदूर्ध्वं चण्डवृष्ट्यादि०—'

(दण्डकनिरूपण पृ० १५७)

विषमवृत्त—जिस वृत्त के चारों पादों में परस्पर भिन्न २ लक्षण पाये जाँय, उसको विषमवृत्त कहते हैं। 'यस्य पादचतुष्केऽपि०—' (पृ० १७)

सगण—।।ऽ इसके अन्त में एक गुरु होता है।

भगण—ऽ।। इसके आदि में एक गुरु होता है।

आर्या—'लक्ष्मैतत्सप्त गणा गोपेता भवति नेह विषमे जः।
षष्ठोऽयं नलघू वा प्रथमेऽर्धे नियतमार्यायाः॥
षष्ठे द्वितीयलात्परके न्ले मुखलाच्च सयतिपदनियमः।
चरमेऽर्धे पञ्चमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः॥'
(पृ० २३–२५)

VI प्र०—विपुला, औपच्छन्दसकम्, वानवासिका, उपेन्द्रवज्रा, तोटकम्, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडितम्, एषां लक्षणानि लिख। 7

VI उ०—विपुला—जिस आर्या के प्रथम तथा द्वितीय दोनों भागों में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वादशमात्रात्मक तीन गणों को लङ्घन करके अर्थात् चतुर्थ गण में पाद की समाप्ति हो, उसको विपुला कहते हैं। 'संलङ्घ्य गणत्रयमादिमम्—' (पृ० २७)

औपच्छन्दसिक—'पर्यन्ते यौं तथैव शेषं त्वौपच्छन्दसिकं सुधीभिरुक्तम्' (पृ० ४०)

वानवासिका—'तद्युगलाद्वानवासिका स्यात्' (पृ० ६६)

उपेन्द्रवज्रा—'उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ' (पृ० १०१)

तोटकम्—'इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम्' (पृ० ११६)

मन्दाक्रान्ता—'मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद् गुरू चेत्' (पृ० १४४)

शार्दूलविक्रीडित—'सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्' (पृ० १४६)

VII प्र०—आख्यानकी तौ जगुरू ग ओजे। जतावनोजे जगुरू गुरुश्चेत्॥ एतल्लक्षणं व्याख्याय पञ्चाक्षरजातिप्रस्तारे त्रयोदशं रूपं कीदृक् तथा षडक्षरजातिप्रस्तारे '।।।ऽऽऽ' एतद्रूपं कतितममिति लिख। 7

VII उ०—'आख्यानकी तौ–' (पृ० १६४) यदि विषम–पहले तीसरे पादों में दो तगण, एक जगण तथा गुरु हों और सम—द्वितीय चतुर्थ पादों में जगण, तगण पुनः जगण और अन्त में दो गुरु हों तो उस छन्द को आख्यानकी कहते हैं।

पञ्चाक्षर जाति के प्रस्तार में १३वां रूप ऽऽ।ऽ यह है। नष्ट विधि—१३ अङ्क विषम होने से प्रथम (ऽ) गुरु लिखना चाहिये। पुनः उस १३ संख्या में एक और मिलाकर १४ बनते हैं। उनको आधा करें तो पुनः ७ का अङ्क विषम होने के कारण फिर द्वितीय भी (ऽ) गुरु लिखना चाहिये। ७ का अङ्क विषम है, उसका आधा हो नहीं सकता, उसमें एक और मिलावें तो ८ बनते हैं। उसका आधा करें तो ४ बनते हैं। यह सम अङ्क है इसलिए तृतीय (।) लघु लिखना चाहिये। ४ का आधा किया २ हुए, यह सम अङ्क

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है, इसलिये चतुर्थ (।) लघु लिखना चाहिये। २ का आधा, १ हुआ, यह विषम अङ्क है, इसलिये हम को पञ्चम (ऽ) गुरु लिखना चाहिये। इससे प्रष्टव्य पञ्चाक्षर जाति की संख्या पूर्ण हो जाती है अतः आगे आवृत्ति न करने से १३ वां भेद 'ऽऽ।।।' यह उत्तर निकल निकल आता है। षडक्षरजाति के प्रस्तार में 'ऽऽऽ।।।' यह ५७ वां रूप है।

VIII. प्र०—(क) 'तरङ्गाः प्रोत्तुङ्गा दुरितभयभङ्गाय भवताम्।'

(ख) 'तदपि तव गुणानामीश पारं न याति।'

(ग) 'यदि चेच्छसि जन्म निजं सफलम्।'

(घ) 'यस्य ध्यानादमलतरतां बुद्धिराप्नोति सद्यः।'

(ङ) 'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।'

(च) 'त्यजेत्तादृशं दुश्चरित्रं कुमित्रम्।'

एषु पद्यभागेषु छन्दांसि नामतो लक्षणतश्च निर्दिश। 9

VIII. उ०-(क) शिखरिणी—'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी (पृ० १५१)

(ख) मालिनी—'ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः' (पृ० १३६)

(ग) तोटक—'इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम्' (पृ० ११६)

(घ) मन्दाक्रान्ता—'मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद्गुरू चेत्' (पृ० १४४)

(ङ) उपजाति—'अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजो पादौ यदीयावुपजातयस्ताः' (पृ० १०२)

(च) भुजगप्रयात—'भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः' (पृ० ११६)

Paper VI. 1935 (१९३५)

VII. प्र०—आठ गणों के स्वरूप और संज्ञाएँ लिखो। गुरु और लघु के लक्षण और आकार बताओ। 'इत्युक्ताश्छन्दसां संज्ञा' इसमें किन संज्ञाओं का निर्देश है उन सबके नाम लिखो। 10

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

VII. उ०—गण आठ होते हैं। उनके स्वरूप और संज्ञाएँ इस प्रकार हैं—

(१) मगण ऽ ऽ ऽ इसमें तीनों गुरु हैं।

(२) यगण । ऽ ऽ यह आदि लघु है।

(३) रगण ऽ । ऽ यह मध्य लघु है।

(४) सगण । । ऽ यह अन्त गुरु है।

(५) तगण ऽ ऽ । यह अन्त लघु है।

(६) जगण । ऽ । यह मध्य गुरु है।

(७) भगण ऽ । । यह आदि गुरु है।

(८) नगण । । । यह सर्व लघु है। 'म्यरस्त०' (पृ० ५)

गुरु और लघु का लक्षण और आकारप्रकार—

'सानुस्वारो०' (पृ० ८) अर्थात् अनुस्वार से युक्त जैसे कं खं इत्यादि, अन्त में विसर्गवाला जैसे—अः कः इत्यादि, दीर्घ जैसे आ ईं, परे संयुक्त अक्षर वाला जैसे—विष्णु, इसमें वि। ये गुरु होते हैं तथा पाद के अन्त में लघु भी कहीं २ गुरु हो जाता है। एक मात्रा वाला लघु, दो मात्रा वाला गुरु होता है। गुरु का आकार वक्र (ऽ) और लघु का सरल (।) होता है।

'इत्युक्ताश्छन्दसां संज्ञाः' इसमें आर्यादि मात्रा छन्द, तथा सम, अर्धसम, विषमवृत्त, तथा दण्डक और गाथा छन्दों का निर्देश कर समवृत्त के उक्ता, अत्युक्ता, मध्या, प्रतिष्ठा, सुप्रतिष्ठा, गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप्, जगती, अतिजगती, शक्वरी, अतिशक्वरी, अष्टि, अत्यष्टि, धृति, अतिधृति, कृति, प्रकृति, आकृति, विकृति, संकृति, अतिकृति, उत्कृति—इन २६ भेदों को निर्दिष्ट किया है।

VIII. प्र०—चपला, उद्गीति, वैतालीय, इन्द्रवज्रा, वंशस्थ, पञ्चचामर, पुष्पिताग्रा, इनके लक्षण लिखो। 8

VIII. उ०—चपला—'उभयार्धयोर्जकारौ द्वितीयतुर्यौ गमध्यगौ यस्याः। चपलेति नाम तस्याः प्रकीर्तितं नागराजेन॥'

(पृ० २८)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उद्‌गीति—'आर्याशकलद्वितयं व्यत्ययरचितं भवेद्यस्याम्।
सोद्‌गीतिः किल कथिता तद्वद्यत्यंशभेदसंयुक्ता ॥'
(पृ० २५)

वैतालीय—'षड्विषमेऽष्टौ समे कलाः ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः।
न समाऽत्र पराश्रिता कला वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः' ॥

इन्द्रवज्रा—'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः' (पृ० १००)

वंशस्थ—'जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ' (पृ० ११४)

पञ्चचामर—'जरौ जरौ जगाविदं वदन्ति पञ्चचामरम्' (पृ० १४०)

पुष्पिताग्रा—'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा' (पृ० १६७)

IX. प्र०—पञ्चाक्षरजाति के प्रस्तार के १-१० एक से दस तक १० रूप लिखो। षडक्षरजाति के प्रस्तार में नवम रूप कैसा होता है नष्ट प्रत्यय द्वारा करो तथा 'ऽ।।।ऽ' यह रूप पंचाक्षरजाति प्रस्तार में कौन सा है उद्दिष्ट प्रत्यय से बताओ। 12

IX. उ०—पञ्चाक्षरजाति के प्रस्तार के १-१० एक से दस तक रूप इस प्रकार हैं—

(१) ऽऽऽऽऽ (२) ।ऽऽऽऽ (३) ऽ।ऽऽऽ (४) ।।ऽऽऽ
(५) ऽऽ।ऽऽ (६) ।ऽ।ऽऽ (७) ऽ।।ऽऽ (८) ।।।ऽऽ
(९) ऽऽऽ।ऽ (१०) ।ऽऽ।ऽ

षडक्षरजाति के प्रस्तार में नवमरूप 'ऽऽऽ।ऽऽ' यह होता है। तथा 'ऽ।।।ऽ' यह पञ्चाक्षरजाति के प्रस्तार में १५ वां है।

Paper IV. 1936 (१९३६)

IV. प्र०—ज्ञेयाः सर्वान्तमध्यादिगुरवोऽत्र चतुष्कलाः।
गणाश्चतुर्लघूपेताः पञ्चार्यादिषु संस्थिताः ॥

इस पद्य में वर्णन किये हुए गणों के स्वरूप और संज्ञाएं लिखो। क्रमसंज्ञक संयोग का उदाहरण लिखो। अग्नि, भूत, रस, इन शब्दों से किस किस संख्या का ग्रहण होता है? विषमवृत्त का लक्षण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और २७ अक्षर के पादवाले छन्द का और तीन पादवाले छन्दों का क्या क्या नाम होता है ? और बड़े से बड़ा पाद कितने अक्षरों का होता है ?

IV.उ०—आर्यादि मात्रिक छन्दों में चतुर्मात्रिक पांच गण होते हैं उनका स्वरूप इस प्रकार है—सर्वगुरु ऽ ऽ, अन्तगुरु । । ऽ, मध्यगुरु । ऽ ।, आदिगुरु ऽ । । और सर्वलघु । । । ।

क्रमसञ्ज्ञकसंयोग का उदाहरण—

तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि च दधीनि ।

अल्पव्ययेन सुन्दरि ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति (पृ० १०)

अब्धि=समुद्र=(४)। भूत=पृथिवी, जल, अग्नि वायु, आकाश=५ रस=मधुराम्लादि ।

विषमवृत्तलक्षणम्—यस्य पादचतुष्केऽपि लक्ष्म भिन्नं परस्परम् ।
तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदाः ॥

२७ अक्षर के पाद वाले छन्द का नाम 'चण्डवृष्टिप्रपात' है । यह दण्डकप्रकरणान्तर्गत है ।

उक्तादिप्रकरण में बड़े से बड़ा पाद उत्कृति में होता है जिसके अन्तर्गत 'भुजङ्गविजृम्भित' 'अपवाह' नामक दो छन्द हैं । इनके प्रत्येक पाद में २६ अक्षर होते हैं ।

दण्डकप्रकरणान्तर्गत चण्डवृष्टिप्रपात में सामान्यतः प्रतिचरण में २७ अक्षर होते हैं परन्तु प्रतिचरण रगण के बढ़ाने से अक्षर संख्या का नियम नहीं ।

V.प्र०—विपुला, प्रवृत्तकम्, खञ्जा, शालिनी, इन्द्रवंशा, ललिता, मन्दाक्रान्ता, स्रग्धरा, आख्यानकी, हरिणप्लुता, अमृतधारा, सौरभकम्, इनके लक्षण लिखो । 12

V.उ०—विपुला—'सैतवस्याखिलेष्वपि' (पृ० ५८) सैतव आचार्य का मत है कि विपुला के चारों चरणों में सातवां वर्ण लघु होता है । रत्नाकरसेतु में विपुला का लक्षण इस प्रकार कहा है—

स्यात्ससमो यत्र लघुश्चतुर्षु चरणेषु सा । विपुलोक्ता सुमतिभिः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सैतवस्य मतेन हि ॥ विपुला से विपुला आर्या का भी बोध होता है। विपुलार्या का लक्षण इस प्रकार है—

संलङ्घ्य गणत्रयमादिमं, शकलयोर्द्वयोर्भवति पादः।
यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति (पृ० २७)

प्रवृत्तकम्—यदा समावोजयुग्मकौ पूर्वयोर्भवति तत्प्रवृत्तकम् (पृ० ४७)

खञ्जा——विनिमयविनिहितशकलयुगलकलितपदविततिविरचितगुण-निचया। श्रुतिसुखकृदियमपि जगति ञ्जि जशिर उपगतवति सति भवति खजा (पृ० ७७)

शालिनी—शालिन्युक्ता म्तौ तगौ गोऽब्धिलोकैः (पृ० १०७)

इन्द्रवंशा – स्यादिन्द्रवंशा ततजौ रसंयुतौ (पृ० ११५)

ललिता—धीरैरभाणि ललिता तभौ जरौ (पृ० १२२)

मन्दाक्रान्ता——मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद् गुरूचेत् (पृ० १४४)

स्रग्धरा—म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्त्तितेयम् (पृ० १४६)

आख्यानकी—आख्यानकी तौ जगरू ग ओजे। जतावनोजे जगुरू गुरुश्चेत् (पृ० १६४)

हरिणप्लुता—सयुगात्सलघू विषमे गुरुः। युजि नभौ भरकौ हरिणप्लुता (पृ० १६६)

अमृतधारा—प्रथममधिवसति यदि तुर्यं चरमचरणगदमवसितगुरु-युग्मम्। निखिलमपरमुपरिगतमिति ललितपदयुक्ता तदिद-ममृतधारा (पृ० १७५)

सौरभकम्—चरणत्रयं व्रजति लक्ष्म यदि सकलमुद्गतागतम्। नौं भौ भवति सौरभकं चरणे यदीह भवतस्तृतीयके (पृ० १७८)

VI.प्र०—आर्याच्छन्द में पादव्यवस्था किसप्रकार होती है? और

वृत्तस्य लो विना वर्णैर्गा वर्णा गुरुभिस्तथा।
गुरवो लैर्दले नित्यं प्रमाणमिति निश्चितम्॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस पद्य से क्या जाना जाता है, उदाहरण देकर बताओ।

VI. उ०—आर्याच्छन्द में पादव्यवस्था मात्राक्रम से होती है।

यस्याः प्रथमे पादे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पंचदश सार्या।

VII. प्र०—चतुरक्षर जाति के प्रस्तार के १–१२ एक से बारह तक रूप लिखो। पञ्चाक्षर-जाति के प्रस्तार का ११ वां रूप कौन सा है नष्ट-प्रत्यय से सिद्ध करो। षडक्षर जाति के प्रस्तार का 'ऽ। ऽ। ऽ।' यह रूप उद्दिष्ट प्रत्यय से बताओ कौनसा है?

VII. उ०—चतुरक्षरजाति के भेदों के लिए देखिये, पृष्ठ १५१ पर कोष्ठक पञ्चाक्षर जाति का ग्यारहवां भेद ऽ। ऽ। ऽ यह होगा।

१ २ ४ ८ १६ ३२

षडक्षर जाति का यह ऽ। ऽ। ऽ। भेद, २+८+३२=४२
+१=४३ वां है।

Paper VI. 1937. (१९८७)

V. प्र०—सर्वगुर्मौ मुखान्तर्लौ यरावन्तगलौ सतौ।
ग्मध्याद्यौ ज्भौ त्रिलो नोऽष्टौ भवन्त्यत्र गणास्त्रिकाः॥

इस पद्य की व्याख्या में गणों के नाम तथा स्वरूप लिखो। पाँच वर्णों के प्रस्तार में एकद्व्यादिलगक्रिया इसकी प्रक्रिया तथा स्वरूप का सोदाहरण वर्णन करो। 12

V. उ०—इस छन्द शास्त्र में तीन वर्णों के समूह को गण कहते हैं। ये गण आठ हैं। इनके नाम व लक्षण इस प्रकार हैं—सर्वगुरु मगण, आदिलघु यगण, मध्यगुरु जगण, मध्यलघु रगण, अन्तगुरु सगण, अन्तलघु तगण, आदिगुरु भगण और त्रिलघु नगण। इन गणों के स्वरूप इस प्रकार हैं।

ऽऽऽ। ऽऽऽ। ऽ।। ऽऽऽ।। ऽ। ऽ।। ।।।
मगण यगण रगण सगण तगण जगण भगण नगण

एकद्व्यादिलगक्रिया के प्रक्रियास्वरूपादि के लिए देखो वृत्त० (पृ० १९६)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्र०—गुरु भी कहां लघु हो जाता है? स्वर, वसु, ग्रह, रुद्र आदित्य—इनसे किन संख्याओं का बोध होता है? और क्यों? पाद और यति किसे कहते हैं? तथा चण्डवृष्टि, गाथा—इनके लक्षण लिखो। 13

उ०—चरण के प्रारम्भ में विद्यमान संयोग की छन्दःशास्त्र में क्रम संज्ञा होती है। क्रम संयोग के आगे रहते हुए उससे पूर्व लघु की जो पूर्वोक्त (सानुस्वारो० पृ० ८) नियमानुसार गुरुसंज्ञा हो जाती है उस गुरु का भी आवश्यकतानुसार कहीं कहीं लघु समझना चाहिये—जैसा कि कहा गया है—

पादादाविह वर्णस्य संयोगः क्रमसंज्ञकः।
पुरःस्थितेन तेन स्याल्लघुतापि क्वचिद् गुरोः (पृ० ९)

उदाहरणार्थ—तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि च दधीनि।
अल्पव्ययेन सुन्दरि ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति॥ (पृ० १०)

इस पद्य के चौथे चरण में 'ग्रा' यह संयोग है। इसके पूर्व लघु 'रि' वर्ण का साधारण नियम के अनुसार गुरु मानने पर एक मात्रा बढ़ जाती है। यह आर्या छन्द है। इसके तीसरे चरण में बारह मात्रायें होनी चाहिये। इस लिये आवश्यकतानुसार यहाँ 'रि' को साधारण नियम से गुरु होते हुए भी लघु मान लिया जाता है। स्वर=७ निषादादि सात स्वर होते हैं। वसु=८। ग्रह=९ सूर्यादि नवग्रह। रुद्र=११। आदित्य=१२।

पाद का लक्षण—'ज्ञेयः पादश्चतुर्थोऽशः' (पृ० १२) छन्द के चौथे भाग को पाद कहते हैं।

यति का लक्षण—'यतिर्विच्छेदसंज्ञिका' (पृ० १३) विराम को यति कहते हैं।

चण्डवृष्टि (प्रपात) का लक्षण—यदि ह नयुगलं ततः सप्तरेफा-स्तदा चण्डवृष्टिप्रपातो भवेद्दण्डकः (पृ० १५७)

गाथालक्षण—शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चण्डवृष्टि आदि से भिन्न, तीन या छः चरण वाले छन्दों को गाथा कहते हैं।

VII. प्र०—आर्या, विपुला, गीति, विद्युन्माला, मालिनी, शिखरिणी, द्रुतविलम्बित, स्रग्धरा, उपचित्रा, कुसुमस्तबक इनके लक्षण लिखो। 10

VII. उ०—आर्य्या—लक्ष्मैतत्सप्त गणा गोपेता भवति नेह विषमे जः।
षष्ठोऽयं नलघू वा, प्रथमेऽर्धे नियतमार्यायाः॥
षष्ठे द्वितीयलात्परके न्ले मुखलाच्च सयतिपदनियमः।
चरमेऽर्धे पञ्चमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः॥ (पृ० २३)

विपुला—'संलङ्घ्य गणत्रयमादिमं शकलयोर्द्वयोर्भवति पादः।
यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति। (पृ० २७)

गीति—आर्याप्रथमदलोक्तं यदि कथमपि लक्षणं भवेदुभयोः।
दलयोः कृतयतिशोभां तां गीतिं गीतवान् भुजङ्गेशः॥ (पृ० ३२)

विद्युन्माला—मो मो गो गो विद्युन्माला (पृ० ६०)

मालिनी—ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः (पृ० १३६)

शिखरिणी—रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी (पृ० १४१)

द्रुतविलम्बित—द्रुविलम्बितमाह नभौ भरौ (पृ० ११६)

स्रग्धरा—म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् (पृ० १४६)

उपचित्रा—उपचित्रा नवमे परयुक्ते (पृ० ६८)
अष्टाभ्यो गो ल्यावुपचित्रा (६६)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हमारे महत्त्वपूर्ण छात्रोपयोगी प्रकाशन

[जिनमें मूल पाठ के साथ संस्कृत-हिन्दी टीका, भूमिका नोट्स एवं अन्य छात्रोपयोगी सामग्री है]

अभिज्ञानशकुन्तलम्	सुबोधचन्द्र पन्त
उत्तररामचरित	आनन्दस्वरूप
कादम्बरी (कथामुख)	रतिनाथ झा
काव्यदीपिका	परमेश्वरानन्द
किरातार्जुनीय (१-४ सर्ग)	जनार्दन शास्त्री पाण्डेय
चन्द्रालोक	सुबोधचन्द्र पन्त
नागानन्द	संसारचन्द्र
प्रतिमानाटक	श्रीधरानन्द शास्त्री
नीतिशतक	जनार्दन शास्त्री पाण्डेय
प्रसन्नराघव	रमाशंकर [illegible]
बालचरित	कमलेश [illegible]
भट्टिकाव्यम् (१-४ सर्ग)	रामअवध पाण्डेय
भट्टिकाव्यम् (५-८ सर्ग)	रामगोविन्द शुक्ल
मृच्छकटिकम्	रमाशंकर त्रिपाठी
मालविकाग्निमित्र	संसारचन्द्र
मेघदूत	संसारचन्द्र
रघुवंश महाकाव्य (सम्पूर्ण)	धारादत्त शास्त्री
रत्नावली	रमाशंकर त्रिपाठी
वेणीसंहार	रमाशंकर त्रिपाठी
शान्तिस्वस्तिपाठः	सुषमा पाण्डेय
शिशुपालवध (१-४ सर्ग)	जनार्दन शास्त्री पाण्डेय
शुनःशेपोपाख्यान	सुषमा पाण्डेय
श्रुतबोधः	सुषमा पाण्डेय
स्वप्नवासवदत्त	जयपाल विद्यालंकार
साहित्यदर्पण	शालिग्राम शास्त्री
सौन्दरनन्दकाव्य	सूर्यनारायण चौधरी
हितोपदेश-मित्रलाभ	विश्वनाथ शर्मा

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई, कलकत्ता, बंगलौर,
वाराणसी, पुणे, पटना

मूल्य : रु० ५५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri